ारियों

के

क्रांतिकारियों के जन्म

क्रांतिकारियों के जन्मस्थल

डॉ. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा

आकाशदीप पब्लिकेशंस
महरौली, नई दिल्ली-110030

81-87775-14-9

मूल्य : 200 00

संस्करण : 2001

प्रकाशक : आकाशदीप पब्लिकेशंस
1/1073 डी, महरौली, नई दिल्ली-110030

शब्द-संयोजक : ओम लेजर प्रिंटर्स
शाहदरा, दिल्ली-110032

मुद्रक : विशाल प्रिंटर्स,
नवीन शाहदरा, दिल्ली-32

KRANTIKARION KE JANMSTHAL by Dr ka Prasa

क्रांतिकारी अमर शहीदो
की
स्मृति को

कुछ वाक्य

क्रातिकारी ! शहीद ! ! ये दोनो शब्द कानो मे जैसे ही पडते है वैसे ही बदन मे एक अजीब-सी सिहरन और रोमाच उत्पन्न हो जाता है। देश की स्वतंत्रता के लिए हॅसते-हॅसते फॉसी के फदे को चूमने वाले बलिदानियो पर भारत-वसुंधरा को गर्व है। दुनिया के नक्शे मे भारत के अतिरिक्त कोई अन्य देश ऐसा नही है, जहॉ के नरनाहरो का वजन फॉसी के तख्ते पर चढते समय पहले की अपेक्षा बढ गया हो। धन्य है यह धरती ! धन्य है यहॉ के क्रातिकारी अमर शहीद !

मन मे आया कि स्वतत्रता की स्वर्ण जयती के अवसर पर उन क्रातिकारियों के जन्मस्थलो का दर्शन करूँ जो गगा-यमुना और बद्री-केदार के समान पवित्र है।

मैने, सरफरोशी की तमन्ना वाले रामप्रसाद बिस्मिल, आजाद ही रहेगे का प्रण करने वाले चन्द्रशेखर आज़ाद, वन्देमातरम् का मंत्र जपने वाले अशफाकउल्ला खॉ, जिन्दा दिल वाले रोशन सिंह और कौम का सर ऊॅचा करने वाले राजेन्द्र लाहिडी के जन्मस्थल-कर्मस्थल का दर्शन एक तीर्थयात्री के रूप मे किया। किंतु ``क्या कहे ?

वहॉ जो कुछ जैसा देखा वैसा ही पन्नो पर उतार दिया। यह सामग्री भारी मन से आप पाठको के सम्मुख परोस रहा हूॅ। और यही कहूॅगा :

जो बरसों तक लडे जेल मे, उन की याद करें,
जो फॉसी पर चढे खेल मे, उन की याद करें।

सी-10, के रोड, महानगर
लखनऊ-226006

—चन्द्रिका प्रसाद शर्मा

क्रम



रामप्रसाद 'बिस्मिल'

सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है
देखना है ज़ोर कितना बाज़ुए-क़ातिल में है

रहबरे-राहे-मुहब्बत रह न जाना राह में
लज़्ज़ते-सहरा-नवर्दी दूरिए-मंज़िल में है

आज मक्तल में ये क़ातिल कह रहा है बार-बार
अब भला शौक़े-शहादत भी किसी के दिल में है

वक़्त आने पे बता देंगे तुझे ऐ आसमाँ!
हम अभी से क्या बताएँ क्या हमारे दिल में है

दर्द से सिसकता प० रामप्रसाद 'बिस्मिल' का जन्मस्थान

शाहजहाँपुर का खिरनी बाग

यह शाहजहाँपुर रेलवे स्टेशन है। स्टेशन पर इधर-उधर नजर दौडाता हूँ, पर शहीदों की इस नगरी के स्टेशन पर उन के नाम पर कुछ नही है, जबकि शाहजहाँपुर जनपद मे प० रामप्रसाद 'बिस्मिल,' अशफाकउल्ला और रोशन सिंह जैसे तीन-तीन क्रान्तिकारी शहीदों ने जन्म लिया था।

स्टेशन से बाहर निकलता हूँ और दाहिनी ओर चलकर रिक्शे से खिरनी बाग की ओर चल देता हूँ। इसे सडक कहूँ या गलियारा, गड्ढों से पटी यह सडक नगर की मुख्य सड़क है। कुछ कहते नही बनता है, सडक मे गड्ढे है या गड्ढो में सडक। बहरहाल मै कुछ नही कह सकता किन्तु शासन से जरूर कह सकता हूँ कि वह एक आयोग बैठा दे जो यह तय करे कि 'सड़क में गड्ढे है या गड्ढों में सड़क है।'

मै रिक्शा-चालक रामदुलारे से पूछता हूँ—"तुम 'बिस्मिल' के विषय मे कुछ जानते हो?"

"कौन बिस्मिल बाबू! जो तमाखू की दुकान करते है? कबडिया है वे।"

"नही भाई," मैं कुछ झुँझलाकर कहता हूँ—"अरे, पं० रामप्रसाद बिस्मिल,' जिन्हें अग्रेजो ने फॉसी पर लटकाया था।"

"हॉ बाबू, जानता हूँ। उन की मूर्ति वहीं खिरनी बाग मे ही तो लगी है। हर साल वहॉ जलसा होता है। बड़े-बड़े नेता आते हैं, मिठाई, चाय, और न जाने क्या-क्या उडता है। हम लोगो को सवारियॉ तो मिलती है उस दिन, पर ये नेता लोग पैसा देने मे बडी कजूसी करते है।"

बाते हो ही रही है कि खिरनी बाग आ जाता है। मै रिक्शा-चालक को भाडा देकर विदा करता हूँ और खन्दको से पटी हुई सडक पर बचा-बचाकर चलता हूँ। काली मदिर के सामने एक गेट बना है, जिस पर 'बिस्मिल द्वार, बिस्मिलनगर' लिखा है। किन्तु किन्ही कोचिग चलाने वाले महानुभाव ने वही 'कुमार कोचिग इस्टीच्यूट' लिखाकर अपने इस्टीच्यूट की महत्ता को बिस्मिल की महत्ता से ऊपर बैठा दिया है। धन्य हैं वे महानुभाव ! उन की बुद्धि पर तरस ही आ सकता है और क्या कहूँ ?

इस गेट के सामने महाशक्ति विद्यालय, काली बाडी, खिरनी बाग है। सडक पर चलते-चलते मैं रुक जाता हूँ और पान मसाले के पीक से गाल फुलाए एक दुबली काठी के, सिपुले गड्ढों वाले कपोलो पर कोई रोगन लगाए बिल्कुल आधुनिक तरुण से पूछता हूँ—"यहाँ रामप्रसाद बिस्मिल का मकान किधर है ?" वे पहले तो मुँह मे भरे तरल लिबलिबे द्रव की पिचकारी धरती पर छोडते है, जिस की स्प्रे की कुछ बूँदे मेरी लबी धोती को भी शोभित कर देती है और तब मुँह ऊपर उचका-उचकाकर कहते है—"मै तो नही बता सकता। बाहर का रहने वाला हूँ। यहाँ आए हुए अभी छह-सात महीने ही हुए हैं, आप उस पान की दुकान पर पूछ लो।" ऐसा कहकर वे मुँह के भीतर के तरल द्रव की रक्षा-सुरक्षा करते हुए आगे बढ जाते है।

पान के दुकानदार जी भी मुँह में किमाम वाले पान का बीड़ा भरे, कतन्नी से पानो की फुनगी और पीछे की टेम्पुरी काटने में जुटे है। ट्रांजिस्टर पर मध्यम ध्वनि में—'अँखिया मिला के जिया भरमा के चले नही जाना'—गीत सुनते जा रहे है और सिर हिलाते जा रहे है। मैं उनके सामने खडा हूँ। वे ग्राहक समझकर पूछते हैं—"कैसा ? किमाम वाला कि 32 न० पत्ती वाला ?"

"मै पान नही खाता हूँ। मुझे बिस्मिलजी का जन्मस्थान बता दीजिए।"
"अच्छा-अच्छा। आप अखबार वाले है, किताब वाले है ओ, आगे वाला जो मोड है, उस कोलिया मे चले जाइए, फिर बाएँ घूम जाइएगा।"

उनके निर्देशित रास्ते पर मै धीरे-धीरे चला जा रहा हूँ। थोडा आगे बढ़ने पर एक मोड पर फिर ठिठकता हूँ। एक विद्यार्थी हाथ मे गेस पेपर लिए परीक्षा की तैयारी में पान मसाला चबाता हुआ टहल रहा है और मुँह से कुछ बुदबुदाता जा रहा है। मुँह से चिरैया नक्षत्र की जैसी फुहारे पन्ने पर पड

रही है। मैं पूछता हूँ—"बेटा ! यहाँ बिस्मिलजी का जन्मस्थान कहाँ है ?" वह पहले, 'पीच थू, पीच थू' करके मुँह के अन्दर के ललछौंहे रस को थूकता है और फिर कहता है—"वो आगे कुछ-कुछ हरा पुता मकान जो दिखाई देता है, वही है।"

मै अनमनेपन से आगे बढ़ता हूँ और विचारो की लबी रील मस्तिष्क मे चलने लगती है—"अपराजेय विश्वप्रसिद्ध क्रान्तिकारी शहीद का जन्मस्थान स्वतत्र भारत मे पूछ-पूछकर खोजना पड रहा है। जहाँ छोटे-छोटे चोर, भ्रष्टाचारी नेताओ के नाम पर न जाने क्या-क्या किया जा रहा है—उन के नाम पर सडके बन रही है, कालेज खुल रहे हैं, अस्पताल तैयार हो रहे है—वहाँ एक महान शहीद के जन्मस्थान तक पहुँचने मे दिक्कत हो रही है।

याद आ रही हैं बिस्मिल की वे लाइने जो जननी-जन्मभूमि के प्रेम मे सराबोर होकर उन्होने फाँसी की कोठरी मे लिखी थी :

हाय ! जननी जन्मभूमि छोडकर जाते हैं हम,
देखना है फिर यहाँ कब लौट कर आते है हम।
स्वर्ग के सुख से भी ज्यादा सुख मिला हम को यहाँ,
इसलिए तजते इसे, हर बार शर्माते है हम।
ऐ नदी-नालो ! दरख्तो ! पक्षियो ! मेरा कसूर,
माफ करना, जोड़ कर तुम से फर्माते है हम।
माँ ! तुझे इस जन्म में कुछ सुख न दे पाए कभी,
फिर जनम लेगे यही, यह कौल कर जाते है हम॥

अब उस गंदी, ऊबड-खाबड गली के मकान न० 279 के सामने मै खडा हूँ। एक मजिल का अत्यन्त साधारण यह मकान हल्के हरे-नीले रंग से पुता है। पुरानी चाल के दो दरवाजे हैं। एक कुछ चौड़ा, दूसरा सँकरा। यही वह पावन धरती है, जिस में अग्रेज साम्राज्य को दहलाने वाले प० रामप्रसाद बिस्मिल ने जन्म लिया था। मैं वहाँ की धूलि को हाथ से चन्दन की तरह उठा लेता हूँ और माथे पर चुपड लेता हूँ। विचित्र बात ! इन धूलिकणो मे तो चन्दन जैसी शीतलता नही है, बल्कि चिनगारियो की चुनचुनाहट महसूस हो रही है। शरीर में एक साथ हजारो आग की लपटें भर जाती है। अपने आप—'इन्कलाब जिदाबाद' अधरों से फूट निकलता है।

इस घर की छत पर एक युवक खड़ा है। वह कुछ सकपका जाता है,

पूछता है—"का काम है भैया?" मै उसे नीचे बुलाता हूँ। वह बिल्कुल हक्का-बक्का सा खडा है। कुछ घबराहट भरे स्वर मे कहता है—"पिताजी को बुलाता हूँ।"

एक गहरे सॉवरिया रंग का ढलती उमर का व्यक्ति मार्कीन की वनियाइन और धोती पहने, सिर के अधपके कुतनू बालो को दाहिने हाथ से सहलाते हुए अत्यन्त विनम्र भाव मे मेरे सामने खडा है। इन का नाम है—श्रीनारायन। ये ही इस घर के मालिक-पुरखा है।

"यही बिस्मिल जी का मकान है?" मेरे यह पूछने पर वह बिल्कुल शान्तभाव से कहते हैं—"हॉ साहब! मैंने इसे खरीदा था। इसे बिस्मिल की बहन ने एक चूडीवाले के हाथ बारह सौ रुपए में बेचा था। उस से एक दूसरे आदमी ने लिया और फिर मैंने चार हजार मे उन से खरीदा था।"

मेरे मन मे यह बात कौंध जाती है कि इसी मकान मे 11 जून 1897 को प० रामप्रसाद बिस्मिल ने जन्म लिया था और आजादी के पचास वर्ष बाद उस की स्वर्ण जयन्ती पर भी शहीदे-वतन के जन्मस्थान की कोई खोज-खबर लेने वाला नही है। अरबो के घोटाले करने वाले निकम्मे, स्वार्थी और कृतघ्न नेताओ के मुँह पर यह मकान थूकता है। रात-दिन ऐशो-आराम का जीवन बिताने वाले, हवाई यात्राएँ करने वाले, अपने और अपनो के लिए जीने वाले इन नेताओ को चुल्लू भर पानी की कौन कहे, एक चम्मच पानी मे डूबकर मर जाना चाहिए। क्या फॉसी का फंदा चूमने वाले उस नर-नाहर की ये पक्तियॉ उन्हे कुछ भी प्रेरणा नही दे सकी :

> मरते बिस्मिल-रोशन-लाहिडी-अशफ़ाक अत्याचार से,
> होगे पैदा सैकडो इन के रुधिर की धार से।
> उन के प्रबल उद्योग से उद्धार होगा देश का,
> तब नाश होगा सर्वथा दुख-शोक के लवलेश का।

नारायन बहुत सहमे से खड़े हैं। उन की निगाह कभी जमीन की ओर जाती है, कभी मेरी ओर और कभी अपने मकान की ओर। वे दाऍ हाथ से थोडी-थोडी देर मे खोपड़ी सहला लेते हैं। मेरे यह पूछने पर कि परिवार मे कौन-कौन है, वे बताते है—

"ऐसा है, मै कलट्टरी में चपरासी था। अब तो रिटायर हूँ। डी० एम० साहब के दफ्तर मे रहा। जाति का कहार हूँ। मेरे चार लडके है। तीन

कचहरी मे चपरासी है। सबको खाने भर को तनख्वाह मिल जाती है।" मै हॅसते हुए कहता हूँ—"वहॉ ऊपर की आमदनी भी तो होती है?" थोडी मुस्कान के साथ वे कहते है—"हॉ, साहब, कचहरी मे तो पुराने जमाने से पेशकार को हक और चपरासी को बख्शीश बॅधा चला आ रहा है।"

नारायन बताते है—"अखबार वाले कभी-कभी आते हैं। वे भी पूछताछ करते है। भाई साहब! मै तो साफ-साफ कहता हूँ—जब सरकार चाहे, यह मकान बिस्मिल भैया की यादगार बनाने के लिए मुझ से ले ले, मै देने को तैयार हूँ। मगर ऐसा है कि हम को रहने के लिए इसी खिन्नी बाग या खटिया मोहल्ला मे मकान बनवा दे।"

नारायन बहुत भावुक हो जाते है, कहते हैं—"कहिए तो मैं लिखकर दे दूँ, राजी से देने को तैयार हूँ। कई बार यहॉ के नेता लोगो ने मुझ से बात की पर सब टॉय-टॉय फिस्स! अरे भाई, उन को अपनी कोठी-बॅगला-कार से फुर्सत नही। बिस्मिल की यादगार कौन बनवाएगा? सब मक्कार है बाबू, सब नोच-खसोट मे लगे है। देश की फिकर किस को है?"

नारायन के वाक्य मेरे अतर्मन को हिला देते है, ऑखो के सामने ॲधेरा-सा छा जाता है। इसी नगर मे राष्ट्रीय स्तर के एक नेता रहते है। उन की रगों का खून पानी मे बदल गया है, क्या वे ऑखो के अंधे हो गए है? हॉ, वे अंधे जरूर हो गए है। स्वार्थ और परिवार के लिए अधे हो गए है।

अब मै मकान के अन्दर जाता हूँ। उस स्थान को शीश झुकाता हूँ जहॉ माता मूलमती की कोख से शेरे-वतन ने जन्म लिया था। बिस्मिल इस स्थान पर पैदा हुए थे, यह सोचकर मैं कॉप उठता हूँ। उपेक्षा के गहन अधकार मे डूबा यह स्थल हमारी अर्चना का स्थल है, हमारी पूजा का मदिर है। निस्सदेह यह अर्पण की भूमि है, तर्पण की भूमि है, वन्दन की भूमि है, अभिनन्दन की भूमि है। इस मिट्टी का कण-कण भारत के प्रत्येक नागरिक मे राष्ट्रीय अस्मिता, जातीय शौर्य और बलिदान की भावना भरता है। मन विह्वल हो रहा है, ऑखो में ग्लानि का सागर उमड़ रहा है और घृणा के करोड़ो बिच्छू डक मार रहे है। अन्दर की सॉस के साथ शब्द निकलते हैं—'इस मिट्टी से तिलक करो, यह मिट्टी है बलिदान की।' और मै बोझिल मन और शिथिल तन मे उस भूमि पर लोट जाता हूँ।

मॉ मूलमती और पिता मुरलीधर के लाड़ले ने इस घर मे किलकारियॉ

पूछता है—"का काम है भैया?" मै उसे नीचे बुलाता हूँ। वह बिल्कुल हक्का-बक्का सा खडा है। कुछ घबराहट भरे स्वर मे कहता है—"पिताजी को बुलाता हूँ।"

एक गहरे सॉवरिया रग का ढलती उमर का व्यक्ति मार्कीन की वनियाइन और धोती पहने, सिर के अधपके कुतनू बालो को दाहिने हाथ से सहलाते हुए अत्यन्त विनम्र भाव मे मेरे सामने खडा है। इन का नाम है—श्रीनारायन। ये ही इस घर के मालिक-पुरखा है।

"यही बिस्मिल जी का मकान है?" मेरे यह पूछने पर वह बिल्कुल शान्तभाव से कहते हैं—"हॉ साहब! मैंने इसे खरीदा था। इसे बिस्मिल की बहन ने एक चूड़ीवाले के हाथ बारह सौ रुपए मे बेचा था। उस से एक दूसरे आदमी ने लिया और फिर मैंने चार हजार में उन से खरीदा था।"

मेरे मन मे यह बात कौध जाती है कि इसी मकान मे 11 जून 1897 को प० रामप्रसाद बिस्मिल ने जन्म लिया था और आज़ादी के पचास वर्ष बाद उस की स्वर्ण जयन्ती पर भी शहीदे-वतन के जन्मस्थान की कोई खोज-खबर लेने वाला नही है। अरबो के घोटाले करने वाले निकम्मे, स्वार्थी और कृतघ्न नेताओ के मुँह पर यह मकान थूकता है। रात-दिन ऐशो-आराम का जीवन बिताने वाले, हवाई यात्राएँ करने वाले, अपने और अपनो के लिए जीने वाले इन नेताओ को चुल्लू भर पानी की कौन कहे, एक चम्मच पानी मे डूबकर मर जाना चाहिए। क्या फाँसी का फदा चूमने वाले उस नर-नाहर की ये पक्तियाँ उन्हे कुछ भी प्रेरणा नही दे सकी :

मरते बिस्मिल-रोशन-लाहिडी-अशफ़ाक अत्याचार से,
होगे पैदा सैकडो इन के रुधिर की धार से।
उन के प्रबल उद्योग से उद्धार होगा देश का,
तब नाश होगा सर्वथा दुख-शोक के लवलेश का।

नारायन बहुत सहमे से खडे है। उन की निगाह कभी जमीन की ओर जाती है, कभी मेरी ओर और कभी अपने मकान की ओर। वे दाएँ हाथ से थोडी-थोडी देर मे खोपड़ी सहला लेते हैं। मेरे यह पूछने पर कि परिवार मे कौन-कौन हैं, वे बताते है—

"ऐसा है, मै कलट्टरी में चपरासी था। अब तो रिटायर हूँ। डी० एम० साहब के दफ्तर मे रहा। जाति का कहार हूँ। मेरे चार लडके है। तीन

कचहरी मे चपरासी है। सबको खाने भर को तनख्वाह मिल जाती है।" मैं हॅसते हुए कहता हूँ—"वहॉ ऊपर की आमदनी भी तो होती है?" थोडी मुस्कान के साथ वे कहते है—"हॉ, साहब, कचहरी मे तो पुराने जमाने से पेशकार को हक और चपरासी को बख्शीश बॅधा चला आ रहा है।"

नारायन बताते है—"अखबार वाले कभी-कभी आते है। वे भी पूछताछ करते हैं। भाई साहब! मै तो साफ-साफ कहता हूँ—जब सरकार चाहे, यह मकान बिस्मिल भैया की यादगार बनाने के लिए मुझ से ले ले, मै देने को तैयार हूँ। मगर ऐसा है कि हम को रहने के लिए इसी खिन्नी बाग या खटिया मोहल्ला मे मकान बनवा दे।"

नारायन बहुत भावुक हो जाते है, कहते है—"कहिए तो मै लिखकर दे दूँ, राजी से देने को तैयार हूँ। कई बार यहॉ के नेता लोगो ने मुझ से बात की पर सब टॉय-टॉय फिस्स! अरे भाई, उन को अपनी कोठी-बॅगला-कार से फुर्सत नही। बिस्मिल की यादगार कौन बनवाएगा? सब मक्कार हैं बाबू, सब नोच-खसोट मे लगे है। देश की फिकर किस को है?"

नारायन के वाक्य मेरे अतर्मन को हिला देते है, ऑखो के सामने अॅधेरा-सा छा जाता है। इसी नगर मे राष्ट्रीय स्तर के एक नेता रहते है। उन की रगो का खून पानी मे बदल गया है, क्या वे ऑखों के अधे हो गए है? हॉ, वे अंधे जरूर हो गए है। स्वार्थ और परिवार के लिए अंधे हो गए हैं।

अब मै मकान के अन्दर जाता हूँ। उस स्थान को शीश झुकाता हूँ जहॉ माता मूलमती की कोख से शेरे-वतन ने जन्म लिया था। बिस्मिल इस स्थान पर पैदा हुए थे, यह सोचकर मै कॉप उठता हूँ। उपेक्षा के गहन अधकार मे डूबा यह स्थल हमारी अर्चना का स्थल है, हमारी पूजा का मदिर है। निस्सदेह यह अर्पण की भूमि है, तर्पण की भूमि है, वन्दन की भूमि है, अभिनन्दन की भूमि है। इस मिट्टी का कण-कण भारत के प्रत्येक नागरिक मे राष्ट्रीय अस्मिता, जातीय शौर्य और बलिदान की भावना भरता है। मन विह्वल हो रहा है, ऑखो मे ग्लानि का सागर उमड रहा है और घृणा के करोड़ो बिच्छू डक मार रहे है। अन्दर की सॉस के साथ शब्द निकलते है—'इस मिट्टी से तिलक करो, यह मिट्टी है बलिदान की।' और मै बोझिल मन और शिथिल तन से उस भूमि पर लोट जाता हूँ।

मॉं मूलमती और पिता मुरलीधर के लाडले ने इस घर मे किलकारियॉ

भरी थी। यही पर तो सोहर गाए गए थे। यही डिठौना लगाकर माँ गाय का दूध पिलाकर, मुँह चूमकर अपने पूत को खेलने भेजती थीं। बचपन में वीरो की गाथाओ की कहानियाँ माँ ने उन्हें इसी घर मे सुनाई थी। अपनी पूजनीया जननी के विषय मे जेल के भीतर बिस्मिल ने लिखा था :

"यदि मुझे ऐसी माता न मिलती तो मै भी अति साधारण मनुष्य की भाँति ससार-चक्र मे फँसकर जीवन-निर्वाह करता। शिक्षा आदि के अतिरिक्त क्रान्तिकारी जीवन मे भी आपने (माता जी ने) मेरी वह सहायता की जो मेजिनी की उन की माता ने की थी।

जन्मदात्री जननी ! इस जीवन मे तो तुम्हारा ऋण परिशोध करने के प्रयत्न करने का भी अवसर न मिला। इस जन्म मे तो क्या यदि अनेक जन्मो मे भी सारे जीवन प्रयत्न करूँ तो तुम से उऋण नही हो सकता। तुम्हारी दया से ही मै देश-सेवा मे संलग्न हो सका। धार्मिक जीवन मे भी तुम्हारे प्रोत्साहन ने ही सहायता दी। तुम्हे यदि मुझे ताड़ना भी देनी हुई तो बडे स्नेह से हर बात को समझा दिया।

जीवनदात्री ! तुमने इस शरीर को जन्म देकर केवल पालन-पोषण ही नही किया, किन्तु आध्यात्मिक, धार्मिक तथा सामाजिक उन्नति मे भी तुम्ही मेरी सदैव सहायक रही। जन्म-जन्मान्तर परमात्मा ऐसी ही माता दें, यही इच्छा है।

मुझे विश्वास है कि तुम यह समझकर धैर्य धारण करोगी कि तुम्हारा पुत्र माताओ की माता—'भारत माता' की सेवा मे अपने जीवन को बलिवेदी पर भेंट कर गया और उसने तुम्हारी कुक्षि को कलकित न किया, अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहा।

जब स्वाधीन भारत का इतिहास लिखा जाएगा तो उसके किसी पृष्ठ पर उज्ज्वल अक्षरो मे तुम्हारा भी नाम लिखा जाएगा। गुरु गोविन्द सिंह की धर्मपत्नी ने जब अपने पुत्रो की मत्यु का सवाद सुना था तो बहुत हर्षित हुई और गुरु के नाम पर धर्मरक्षार्थ अपने पुत्रो के बलिदान पर मिठाई बाँटी थी।

"जन्मदात्री ! वर दो कि अतिम समय मे भी मेरा हृदय किसी तरह विचलित न हो और तुम्हारे चरण-कमलो को प्रणाम कर मै परमात्मा का स्मरण करता हुआ शरीर-त्याग करूँ।"

नारायन ऐसे सिधुआ आदमी है कि उन्हे अपनी जन्मतिथि भी नही

याद। उन्हे यह जरूर मालूम है कि बिस्मिल भैया को गोरखपुर जेल में फाँसी दी गई थी। कब दी गई थी? यह वे नही जानते है। वे कहते है—"मिसिरजी, आप को सब कुछ बता देगे। यही सामने वाला घर है उन का।" मैं नारायन के साथ श्री नन्हेलाल मिश्र के द्वार की कुंडी खटखटाता हूँ।

एक झुर्रियोदार गोरे चेहरे वाले बूढे सज्जन धोती-कुर्ता पहने, कुर्ते की बटनो के मध्य जनेऊ निकाले मेरे सामने आ जाते हैं। मै अपना मन्तव्य बताता हूँ। वे मुझे घर के आँगन मे एक पुरानी चाल की निवाड़ की खटिया पर बैठा देते है और स्वय सामने रखी तिपाई पर एक पैर पर दूसरा पैर रखकर बैठ जाते है। मैं बिस्मिल के सबध मे बातें छेड़ देता हूँ। वे कुछ भावुक होकर विस्तार से बताना शुरू करते है :

"मैने बिस्मिल भैया को तो नहीं देखा है किन्तु उन के माता-पिता को खूब देखा है। पिताजी तो मेरे पास जब-तब आकर बैठते थे। दूर ही कौन, सामने ही तो घर है। मै तो उन के पास जाकर घटो उन के घर में बैठा करता था। वे कचहरी में लैससदारी करते थे और माताजी घर मे रहती थी। अपने पुत्र की याद करके वे गौरव और गर्व का अनुभव करते थे। उन्हें मैने रोते कभी नहीं देखा। वे बताया करते थे कि बिस्मिल के बाबा उन्हे खूब दूध पिलाया करते थे। बिस्मिल के बचपन के बारे में वे जब-तब बताया करते थे। (माथे पर हाथ रखकर सोचते हुए) वे कहते है—"अब कुछ याद नही आ रहा है। उमिर का परभाव है सब।"

चुनौटी से खैनी निकालकर चूना मिलाकर वे उसे चार-छह बार रगडकर तीन-चार फटकी लगाकर चुटकी में लेकर ओंठ पर रख लेते है और कहते है—"देखिए, सोचकर बताता हूँ।"

वे सोचने लगते है और मैं भी सोचने लगता हूँ। अच्छी रही, दोनो लोग सोचने में व्यस्त! मुझे स्वय बिस्मिल के लिखे ये वाक्य याद आ रहे है—

"बचपन मे मैं बहुधा गाय के थन में मुँह लगाकर दूध पिया करता था। दादा जी मुझे खूब दूध पिलाया करते थे। पिताजी मेरी शिक्षा का अधिक ध्यान रखते थे और जरा-सी भूल करने पर बहुत पीटते थे। जब मै नागरी के अक्षर लिखना सीख रहा था तो मुझे 'उ' लिखना न आया। मैंने बहुत प्रयत्न किया पर जब पिताजी ने कचहरी से आकर मुझसे 'उ' लिखवाया, मै न लिख

सका। उन्हे मालूम हो गया कि मैं खेलने चला गया था। इस पर उन्होने बदूक के लोहे के गज से इतना पीटा कि गज टेढा पड गया। मै भागकर दादाजी के पास चला गया।

"मै छोटेपन से ही बहुत उद्दड था। एक समय किसी बाग मे जाकर आडू के वृक्षो मे से सभी आडू तोड लिए। माली पीछे दौडा, किन्तु मै उस के हाथ न आया। माली ने सब आडू पिताजी के सामने ला रखे। उस दिन पिताजी ने मुझे इतना पीटा की दो दिन तक उठ न सका। इस प्रकार खूब पिटता था, किन्तु उद्दडता अवश्य करता था। शायद उस बचपन की मार से ही यह शरीर बहुत कठोर तथा सहनशील बन गया था।"

मिश्र जी की मुरती भी उनके मस्तिष्क पर कुछ असर करती है और वे पीक थूकते हुए, धोती से ओठ पोछकर कहते है—"बिस्मिल के पिताजी बताते थे कि उन के पिता जी ग्वालियर जाकर अच्छी नस्ल की गाएँ खरीदकर लाते थे। वे बहुत दूध देती थी। बिस्मिल को वे पहलवान बनाना चाहते थे।"

मिश्र जी आगे बताते है—"हम से बिस्मिल भैया के पिताजी घरेलू बाते किया करते थे। वे बहुत वीर स्वभाव के थे। बिस्मिल भैया की बहन एटा मे ब्याही थी। वे इस मकान मे एक-दो वर्ष रही थीं। अब वे भी इस दुनिया से चल बसी। उन के लड़का-बहू हैं। वे भी दो-एक बार यहाँ आए हैं।

"जब 'भैया' के पिताजी नही रहे थे तो सन् 47 मे देश की आजादी के बाद उन की माताजी के पास देश के विभिन्न भागो से मनीआर्डर आया करते थे। मैं ही उन की गवाही करता था। यह मकान बिस्मिल की बहन से 1200 रुपए मे चूडी वाले विद्याराम ने खरीदा था, विद्याराम से एक पंजाबी ने और बाद में नारायन ने।"

पास ही बैठे नारायन हामी भरते है—"हाँ, भाई साहब, मिसिर जी ठीक बता रहे हैं।"

इसी बीच मिश्रजी की धर्मपत्नी, जो अभी तक चुप्पी साधे बैठी है, कहती है—"बिस्मिल भैया की महतारी गेरुआ धोती पहनती थी।"

अपनी पुरानी चाल की एक पल्ले वाली धोती को सिर के ऊपर से खिसकाते हुए वे कहती हैं—"बिस्मिल भैया की महतारी इसी मेरे आँगन मे बैठा करती थीं और अपने पुत्र की यादों के पुलिन्दे खोलती थी। कभी-कभी

तो वे अत्यधिक भावुक हो जाती थी, पर क्या मजाल जो आँखो से आँसू टपके। वे बताती थी कि भैया जब आर्यसमाज में जाने लगे तो पिताजी बहुत नाराज होते थे किन्तु मै 'भैया' को उत्साहित करती रहती थी।"

उनकी ये बाते सुनते-सुनते मेरे मस्तिष्क मे बिस्मिल के वे वाक्य स्वत गूँजने लगते है, जो बिस्मिल ने जेल मे लिखे थे .

"मै बडा कट्टर आर्यसमाजी हो गया। आर्यसमाज के अधिवेशनो मे आता-जाता। सन्यासी-महात्माओ के उपदेशो को बड़ी श्रद्धा से सुनता। जब मै अग्रेजी के सातवें दर्जे मे था तब सनातनधर्मी पडित जगत्प्रसाद जी शाहजहॉपुर पधारे। उन्होंने आर्यसमाज का खंडन करना प्रारभ किया, आर्यसमाजियो ने भी उस का विरोध किया और पं० अखिलानन्द जी को बुलाकर शास्त्रार्थ कराया। शास्त्रार्थ सस्कृत मे हुआ। जनता पर अच्छा प्रभाव हुआ। मेरे कामों को देखकर मुहल्ले वालो ने पिताजी से मेरी शिकायत की। पिताजी ने मुझसे कहा—"आर्यसमाजी हार गए। अब तुम आर्यसमाज से अपना नाम कटा दो।" मैंने पिताजी से कहा कि आर्यसमाज के सिद्धात तो सार्वभौम है, उन्हे कौन हरा सकता है? अनेक वाद-विवाद के पश्चात् पिताजी जिद पकड़ गए कि यदि आर्यसमाज से त्यागपत्र न दोगे तो तुम्हे रात मे सोते समय मार दूँगा।' किन्तु मेरी माताजी मेरा उत्साह भंग न होने देती थीं, जिस के कारण उन्हें पिताजी का ताडना तथा दंड भी सहन करना पडता था। वास्तव मे मेरी माता जी देवी है। मुझ मे जो कुछ जीवन तथा साहस आया वह मेरी माता जी तथा गुरुदेव सोमदेव की कृपाओ का ही परिणाम है।"

अब मिश्रजी किंचित् गभीर होकर कहते है—"इस शहर का दुनिया मे नाम करने वाला यह घर एक इतिहास है; किन्तु शासन मे बैठे लोग अपने-अपने इतिहास को उजागर करने में जुटे है पर जिन की बदौलत हमे आजादी मिली, उन्हे भुला दिया। हम लोग तो समझते थे कि यहॉ स्मारक जरूर बनेगा। यादगार की वजह से ही मैंने इस घर को नही खरीदा था। किन्तु अपने देश मे सब कुछ है, देशभक्ति छोडकर।"

बिस्मिल के विषय में कहा जाता है, कि वे 'रुद्र', 'आनंद प्रकाश परमहस' तथा 'महन्त' आदि छद्म नामो से क्रातिकारियो को पत्र लिखते थे।

नारायनजी व मिश्रजी से विदा लेकर मै गली-गली चला आ रहा हूँ। एक जवान सिर पर एक थाल रखे—'चटपटी-चटपटी' की चीख भरी आवाज

उछाल रहा है। कुछ बच्चे मुट्ठी मे पैसे दाबे उस के इर्द-गिर्द आ खडे होते है। उस के थाल मे कचालू और खटाई की एक गरिया रखी है। वह सबो को बारी-बारी से चटनी डालकर कचालू का पत्ता थमाता है, पैसे लेता है और थाल को सिर पर स्थापित कर लेता है। मै उस के पास पहुँचता हूँ। वह प्रसन्न भाव से कहता है :

"क्या बाबू बनाऊँ एक पत्ता?" मै इनकार कर देता हूँ और पूछता हूँ—"कोई और धंधा क्यो नही करते?"

"पैसा कहाँ से लाऊँ बाबू! मकान-जायदाद एक नेता ने हडप ली, किराए के एक कमरे मे माँ के साथ रहता हूँ। कचालू बेचकर पेट पालता हूँ।"

"कितना पढे हो।" मेरे यह पूछने पर वह बिफर पडता है—"इटर पास हूँ बाबू, किंतु ब्राह्मण होने के कारण आरक्षण की वजह से कोई नौकरी-चाकरी नही मिली।"

उस की मनोदशा को भाँपकर मै विषयान्तर करके पूछता हूँ—"तुम प० रामप्रसाद बिस्मिल के बारे में कुछ जानते हो?"

"हाँ, बाबू यह मुहल्ला खिरनी बाग तो अब 'बिस्मिल नगर' कहा जाता है, लेकिन उन के नाम पर न कोई लाइब्रेरी है, न और कुछ। दुनिया जानती है कि वे शायर थे, कवि थे, तमाम किताबे लिखी थी उन्होंने, पर बाबू..."

मै बीच मे ही बात काटकर कहता हूँ—"तुम्हे उन की कोई कविता याद है?"

वह अपने सिर के थाल को बगल के एक चबूतरे पर रख देता है और सुनाने लगता है यह कविता (वह कविता सुनाता जाता है, मैं कागज पर उतारता जाता हूँ) ·

हे मातृभूमि! तेरे चरणो मे शिर नवाऊँ,
मै भक्ति भेट अपनी, तेरी शरण मे लाऊँ।
माथे पे तू हो चंदन, छाती पे तू हो माला,
जिह्वा पे गीत तू हो, तेरा ही नाम गाऊँ।
जिससे सपूत उपजे, श्री राम-कृष्ण जैसे,
उस धूल को मै तेरी, निज शीश पे चढाऊँ।
तेरे ही काम आऊँ, तेरा ही मंत्र गाऊँ,
मन और देह तुझ पर बलिदान मैं चढाऊँ।

"अरे बाबू ! याद तो और कई कविताएँ है, लेकिन अब चलूँ, कचालू बेचूँ। कभी सतारे मे आइए तो फिर सुनाऊँ। यहाँ और लोगो को भी उनकी कविताएँ याद हैं। किताबे छपी है उनकी।"

इतना कहते-कहते वह सिर पर थाल रख लेता है और—'चटपटी-चटपटी' की आवाज हवा मे फेकने लगता है।

मै आगे बढ जाता हूँ। थोडी दूर पर सडक की बाई ओर एक वयोवृद्ध वैद्य जी पुरानी चाल वाली आराम कुर्सी पर आसीन है। कमरे में अल्मारियो मे दवाएँ भरी शीशियाँ करीने से सजी हैं। एक आदमी बोरा बिछाए इमामदस्ते में कुछ जडी-बूटियाँ कूट रहा है। मै उन से बिस्मिल के बारे मे पूछता हूँ। वे सजीदगी के स्वर मे, खाँसते हुए कहते हैं—"मै क्या कहूँ ? मै तो शर्म से गड़ जाता हूँ जब कोई मुझसे उन के विषय की बात चलाता है। काकोरी केस के जितने शहीद हुए सभी के प्रति घोर उपेक्षा की गई। सामने की ओर सकेत करते हुए वे कहते है : "वो देखिए बिस्मिल की प्रतिमा लगी है, किंतु उस की दुर्दशा देखी नही जाती। किस से कहा जाए, कोई तो सुनने वाला नही है। उनकी माताजी तो आजादी के बाद तक जीवित रही। किंतु किसी ने उन की खोज-खबर नही ली।"

बिस्मिल की माताजी ने ही तो उन्हें ऐसा गढा था कि वे देश के लिए कुर्बान हो गए। माताजी के द्वारा दिए गए 125 रुपयों से ही तो उन्होंने ग्वालियर में टोपीदार पाँच फायर वाला रिवालवर खरीदा था। यही गर्रा नदी के किनारे ही तो वे अभ्यास करते थे। लखनऊ काग्रेस मे जाने के लिए माताजी ने ही उन्हे पिताजी के विरोध के बावजूद रुपए दिए थे।

ऐसी वन्दनीय जननी की तो स्वतंत्रता के बाद पूजा होनी चाहिए थी, किंतु वे उपेक्षा के गर्त मे पडी रही। कोई और मुल्क होता तो उन्हे आदर से, सम्मान से पाट दिया जाता, किंतु हम तो सच में कृतघ्न ही निकले।

मैं सामने के बिना घास वाले पार्क मे आ गया हूँ। दो-तीन बकरियाँ चर रही है। कुछ लडके कबड्डी खेल रहे हैं। लगता है ये आर० एस० एस० के हैं क्योकि इन की कबड्डी उसी ढग की है। आदमकद बिस्मिल की प्रतिमा तो अच्छी बनी है किंतु रख-रखाव के अभाव में प्रतिमा के ऊपर चील-कौवो का ढेरो बीट पडा है। मै ऑखे बद कर प्रतिमा के सामने खड़ा हूँ, मन ही मन प्रणाम कर वहाँ के धूलकणो को उठाकर माथे पर लगा लेता हूँ।

इधर-उधर गदगी ही गदगी ! नगरपालिका का ढेरों कूडा-कचरा इसी पार्क के सामने डाला जाता है। वाह ! अच्छा सम्मान दे रही है यहाँ की नगरपालिका अपने शहीद सपूत को ! है कोई माई का लाल जो इसे हटा पाए ?

थकान के कारण मै प्रतिमा के नीचे बैठ जाता हूँ और झोले से लइया-चना निकालकर कुटकना शुरू करता हूँ। बीच-बीच मे गुड की डली मुँह मे डाल लेता हूँ। थोडा सा समध्याकर उठता हूँ। पार्क से बाहर आकर एक रिक्शा पर बैठकर नगर की बाजारों को देखता हूँ ! सडको पर नाजायज कब्जे जमाए दुकानदार डटे है। घटाघर के सामने वाली सडक पर तो स्कूटर पर पीछे बैठी सवारी आगे वाले को मजबूती से पकड़े रहती है। पत्नी को पीछे बैठाकर चलने वाले लोग बार-बार पीछे टटोलते रहते हैं कि पत्नी बैठी है, कही गिर तो नही गई। मै एक फुटपाथी चाय की दुकान के सामने पडी तिपाई पर बैठ जाता हूँ और चाय पीता हूँ। चाय वाले भगोले जी से पूछता हूँ कि ये सडके क्यो नही ठीक की जाती है ? वह साफ-साफ कह देता है—"जाकर बाबा साहब से पूछिए।"

"कौन है ये बाबा साहब ?" मेरे यह पूछने पर वह झल्ला उठता है।

"वाह साहब ! दुनिया उन्हे जानती है और आप नही जानते ! इस शहर के सब से बडे नेता, दिल्ली दरबार के प्रमुख सलाहकार ! !"

"अरे भाई, पहेली न बुझाओ, साफ-साफ बताओ।" मेरे यह कहने पर वह तिनगकर कहता है—"पैसा दीजिए, जाइए, मेरी ऐसी की तैसी कराना चाहते है क्या।"

रिक्शेवाले से जब मैंने पूछा तब उसने बताया कि फलॉ को शहर के लोग 'बाबा साहब' कहते है। मै सच मे स्तम्भित हो जाता हूँ कि इतना बडा नेता यहाँ रहता है और नगर की सारी सडको मे गड्ढे ही गड्ढे है।

सडको पर गड्ढे है और सभवत. उन के घरों के भीतर भी गड्ढे होगे ? किन के ? देश की सेवा करने वाले आजकल के नेताओ के, और किन के ! वे गड्ढे अब भर गए होगे सोने-चादी और नोटो के ब्रीफकेसों से !

आज की पीढी के इन 'कौम के मारो' तथा उस जमाने के 'कौम के मारो' की देशभक्ति की तुलना की ही नही जा सकती। वास्तव में आज के ये सेवक 'स्वार्थ के मारे' है। क्या बिस्मिल की ये पक्तियॉ उन को धिक्कारती

न होगी :

हम कौम के मारो का, इतना ही फसाना है,
रोने को नही कोई, हँसने को जमाना है।
सब वक्त की बाते है, सब खेल है किस्मत का,
बिध जाए सो मोती है, रह जाए सो दाना है।
खाते है कसम माँ की, सोने की चिरैया को,
सय्याद के हाथो से, हर सम्त छुड़ाना है।
आजाद न कर पाए, माँ, तुझ को गुलामी से,
यह रंज, हमे आखिर ता-उम्र सताना है।
'बिस्मिल' ऐ वतन! तेरी इस राहे मुहब्बत मे,
इक आग का दरिया है, और डूब के जाना है।

लोग उन्हें धिक्कारे तो धिक्कारा करें, उन के ठेंगे से। उन्हे तो सुख-सुविधाएँ चाहिए, मत्री-पद चाहिए, तिजोरियों और बैक लाकरो मे अकूत पैसा चाहिए। बस, यही है उन की राष्ट्रभक्ति।

अब मै नगरपालिका की ओर चल पडता हूँ। टाउन हॉल के सामने कुछ व्यापारी हडताल पर बैठे हैं। उन में एक सभासद भी है। उन से बिस्मिल के विषय मे पूछताछ करता हूँ किंतु उन्हे इस विषय मे कोई रुचि नही है। कई और नवयुवक वहीं खडे हैं, उन से बातचीत करने पर पता चलता है कि वे बिस्मिल का जन्मस्थान तक नहीं जानते।

इसी परिसर मे टाउन हॉल के सामने बिस्मिल की आवक्ष प्रतिमा के पास अशफाकउल्ला, रोशन सिह और प्रेमकृष्ण खन्ना की प्रतिमाएँ भी लगी है। इन रँगी-चुँगी प्रतिमाओ का रखरखाव अच्छा है। यहीं 'शहीद द्वार' भी है।

घूमता-घामता, लाई-चना कुटकता, मै नगर की चौडी धचकोलेदार सडक पर रिक्शे पर चला जा रहा हूँ। बालिका विद्यालय की हाईस्कूल की छात्राएँ भेडियो की तरह झुंड मे छुट्टी के बाद चली आ रही है। मै रिक्शा से नीचे उतर पड़ता हूँ और उन से पूछता हूँ—"राम प्रसाद बिस्मिल को जानती हो ?"

सब लडकियाँ नीचे मुडी झुका लेती है किंतु उनमें से एक कहती है—"हाँ, जानती हूँ। वे क्रांतिवीर थे। अग्रेजो के खिलाफ लडे थे। काकोरी केस

मे उन्हे फॉसी दी गई थी।"

"तुम को उन की कोई कविता याद है?"

"जी हॉ"

"तो सुनाओ।"

वह बिस्मिल की प्रसिद्ध नज्म कॉपते हुए कठ से सुनाती है :

सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल मे है,
देखना है जोर कितना बाजुए-कातिल मे है।

रहवरे-राहे-मुहब्बत रह न जाना राह मे,
लज्जते-सहरा नवर्दी दूरिए-मज़िल मे है।

आज मक्तल मे यो कातिल कह रहा है बार-बार,
अब भला शौक़े-शहादत भी किसी के दिल में है।

वक्त आने पे वता देंगे तुझे ऐ आसमॉ,
हम अभी से क्या बताएँ क्या हमारे दिल मे है।

ऐ शहीदे-मुल्को-मिल्लत! हम तेरे ऊपर निसार
अब तेरी हिम्मत की चर्चा गैर की महफ़िल में है।

अब न अगले वल्वले है औ' न अरमानो की भीड
एक मिट जाने की हस्रत अब दिले 'बिस्मिल' मे है॥

ये पंक्तियॉ सुनकर मेरे शरीर मे बिजली-सी दौड जाती है। वतन पर जॉ निसार करने के लिए हॅसते-हॅसते फॉसी के फंदे को चूमने के लिए बिस्मिल मे जोशे शहादत का जो वलवला था उसने ही तो इस मुल्क को आजादी दिलाई।

अब मै रेलवे स्टेशन की ओर चल देता हूँ। तन रिक्शे पर है और मन सोच रहा है कि 16 दिसंबर 1927 को गोरखपुर की जेल की कोठरी मे बिस्मिल ने लिखा था—"मुल्क पर कुरबान हो जाने के अरमॉ दिल में है।" इस दिन के ठीक तीन दिन बाद यानी 19 दिसबर को प्रातः साढे छह बजे उन्होंने फॉसी के फदे को चूम लिया।

उन्होंने अपनी आत्मकथा के अन्तिम वाक्य 16 दिसबर 1927 को इस प्रकार लिखे थे—

"देशवासियो से यही अतिम विनय है कि जो कुछ करे सब मिलकर करे और सब देश की भलाई के लिए करें। इसी से सब का भला होगा।"

बस !

मरते बिस्मिल, रोशन, लाहिडी, अशफाक अत्याचार से,
होगे पैदा सैकडो इनके रुधिर की धार से।

मै दुखभरे मन से 'बिस्मिल' की जन्मभूमि को देखकर लौट रहा हूँ। मन मे अनेक प्रश्न उठते है। क्या भारत माता को गुलामी की जंजीरो से मुक्त कराने वाले प० रामप्रसाद 'बिस्मिल' को स्वतत्र राष्ट्र ने यही सम्मान दिया कि उन के जन्मस्थल पर एक स्मारक तक का निर्माण नही कराया जा सका? क्या इसी गुमनामी मे पडे रहने के लिए उन्होने अपने जीवन को हँसते-गाते देश पर फूलो की तरह लुटा दिया था? क्या उन्होने कभी यह सोचा होगा कि जिस आजादी के लिए वे फॉसी पर झूलने जा रहे है उस की प्राप्ति के बाद देश उन्हे भुला देगा?

ब्रिटिश साम्राज्यवाद का अत तो हो गया किंतु आजाद भारत की बागडोर जिन स्वार्थी हाथो मे आई वे हाथ शहीदो को सलामी देने मे क्यो झिझके? इस का उत्तर खुले शब्दो मे यही है कि वे हाथ स्वय इतिहास मे अमर होने की इच्छा से राष्ट्र के मुँह पर कालिख पोत गए। उन्होंने अपने और अपने परिवार की पीढियो के लिए ही सब कुछ किया; किंतु जिन की बदौलत हमे आजादी के स्वर्णिम प्रभात की किरणो के दर्शन हुए उन्हे अधकार मे ढकेलने का प्रयास किया गया। नई पीढी को इस पर विचार करना होगा!

शहीद रामप्रसाद 'बिस्मिल' का दिव्य स्मारक शाहजहाँपुर के जिस खिरनी बाग में बनना चाहिए था, जिस स्थल पर उन्होने जन्म लिया था, जिस पर स्वर्णाक्षरो मे उन की स्मृति मे श्रद्धा के अक्षर अकित किए जाने चाहिए थे, वहाँ घूरे के ढेर लगे है।

नवयुवको! वतन के प्रहरियो! तुम्हें शपथ है अपनी भरी जवानी की, शपथ है शहीदो की शहादत की, शपथ है क्रान्तिकारियो के लहू की और शपथ है 'बिस्मिल' के फॉसी के फदे की। तुम्हे स्वार्थ, भ्रष्टाचार और गदी

राजनीति के कीचड मे फॅसे अपने देश को उबारना है। कितनी भी कुर्बानी देनी पडे, हिचकिचाना नही।

'बिस्मिल' का खिरनी बाग का जन्मस्थल तुम्हारी ओर टकटकी लगाए देख रहा है, देखता रहेगा, जब तक वहाँ भव्य स्मारक न बन जाएगा।

19 दिसबर 1927, प्रात· 6 30 । गोरखपुर जिला जेल का फॉसी घर। बिस्मिल के चेहरे पर दैवी आभा दमक रही है। इस आभा के सामने सूर्य भी अपना प्रकाश बिखेरने मे शर्मा रहा है।

सिह गर्जना के साथ उन के कठ से निकला—"वन्देमातरम्।" "भारत माता की जय"! कदम आगे बढ रहे थे और मुँह से स्वर निकल रहे थे—

मालिक तेरी रजा रहे और तू ही तू रहे,
बाकी न मै रहूँ, न मेरी आरजू रहे।
जब तक कि तन मे जान रगो में लहू रहे,
तेरा ही जिक्र या तेरी ही जुस्तजू रहे।

गर्दन मे फॉसी का फंदा था और जबान पे पुकार—"मै ब्रिटिश साम्राज्यवाद का अन्त चाहता हूँ।"

क्षण मात्र मे पक्षी उड गया, पिंजरा खाली पडा रह गया। जेल के बाहर हजारों लोगो की भीड—शव को देखकर लोगो ने गगनभेदी स्वरो—"बिस्मिल अमर हैं!" "बिस्मिल जिदाबाद!!" से ब्रिटिश शासन के कलेजे पर गहरी चोटे की।

परिशिष्ट-1

- आत्मकथा के कुछ पृष्ठ
- 'बिस्मिल' की स्वरचित कविताएँ

आत्मकथा के कुछ पृष्ठ

मेरी माँ

ग्यारह वर्ष की उम्र मे माताजी विवाह कर शाहजहाँपुर आई थीं। उस समय आप नितान्त अशिक्षित एक ग्रामीण कन्या के सदृश थी। शाहजहाँपुर आने के थोडे दिनो के बाद श्री दादीजी ने अपनी छोटी बहन को बुला लिया। उन्होंने गृहकार्य मे माताजी को शिक्षा दी। थोडे ही दिनो मे माताजी ने सब गृहकार्यों को समझ लिया और भोजनादि का ठीक-ठीक प्रबध करने लगी। मेरा जन्म होने के पॉच या सात वर्ष बाद आपने हिंदी पढना आरभ किया। पढने का शौक आपको खुद ही पैदा हुआ था। मोहल्ले की संग-सहेली जो घर पर आ जाती थी उन्ही मे जो कोई शिक्षित थी माताजी उनसे अक्षर-बोध प्राप्त करतीं। इसी प्रकार घर का सब काम कर चुकने के बाद जो कुछ समय मिल जाता उसमे पढ़ना-लिखना करती। परिश्रम के फल से थोडे दिनो मे ही वे देवनागरी पुस्तको का अवलोकन करने लगी। मेरी बहनो को छोटी आयु मे माताजी ही उन्हे शिक्षा दिया करती थी! जब से मैंने आर्यसमाज मे प्रवेश किया, तब से माताजी से खूब वार्तालाप होता। उस समय की अपेक्षा अब आपके विचार भी कुछ उदार हो गए है। यदि मुझे ऐसी माता न मिलती तो मै भी अति साधारण मनुष्य की भॉति ससार-चक्र में फॅसकर जीवन-निर्वाह करता। शिक्षादि के अतिरिक्त क्रातिकारी जीवन मे भी आपने मेरी वह सहायता की है जो मेजिनी की उनकी माता ने की थी। यथा समय मै उन सारी बातो का उल्लेख करूँगा। माताजी का सबसे बडा आदेश मेरे लिए यही था कि किसी की प्राणहानि न हो। उनका कहना था कि अपने शत्रु को भी कभी प्राण-दड न देना। आपके इस आदेश की पूर्ति करने के लिए मुझे मजबूरन दो बार अपनी प्रतिज्ञा भग भी करनी पडी।

जन्मदात्री जननी ! इस जीवन मे तो तुम्हारा ऋण परिशोध करने के प्रयत्न करने का भी अवसर न मिला। इस जन्म में तो क्या यदि अनेक जन्मो मे भी सारे जीवन प्रयत्न करूँ तो तुमसे उऋण नही हो सकता। जिस प्रेम तथा दृढता के साथ तुमने इस तुच्छ जीवन का सुधार किया है वह अवर्णनीय है। मुझे जीवन की प्रत्येक घटना का स्मरण है कि तुमने किस प्रकार अपनी दैवी वाणी मे उपदेश द्वारा मेरा सुधार किया है। तुम्हारी दया से ही मै देश-सेवा मे सलग्न हो सका। धार्मिक जीवन मे भी तुम्हारे ही प्रोत्साहन ने सहायता दी। जो कुछ शिक्षा मैने ग्रहण की उसका भी श्रेय तुम्ही को है। जिस मनोहर रूप से तुम उपदेश करती थीं उसका स्मरण कर तुम्हारी स्वर्गीय मूर्ति का ध्यान आ जाता और मस्तक नत हो जाता है। तुम्हे यदि मुझे ताडना भी देनी हुई तो बड़े स्नेह से हरएक बात को समझा दिया। यदि मैने कभी धृष्टतापूर्ण उत्तर दिया तब तुमने प्रेम भरे शब्दो मे यही कहा कि तुम्हे जो अच्छा लगे वह करो कितु ऐसा करना ठीक नही, इसका परिणाम अच्छा न होगा। जीवनदात्री ! तुमने इस शरीर को जन्म देकर केवल पालन-पोषण ही नही किया किंतु आत्मिक, धार्मिक तथा सामाजिक उन्नति मे भी तुम्ही मेरी सदैव सहायक रही। जन्म-जन्मातर परमात्मा ऐसी ही माता दें यही इच्छा है।

महान से महान सकट में भी तुमने मुझे अधीर न होने दिया। सदैव अपनी प्रेमभरी वाणी को सुनाते हुए मुझे सात्वना देती रही। तुम्हारी दया की छाया में मैने अपने जीवन-भर मे कोई कष्ट अनुभव न किया। इस ससार मे मेरी किसी भी भोग-विलास तथा ऐश्वर्य की इच्छा नही। केवल एक तृष्णा है वह यह कि एक बार श्रद्धापूर्वक तुम्हारे चरणो की सेवा करके अपने जीवन को सफल बना लेता। कितु यह इच्छा पूर्ण होती दिखाई नही देती। और तुम्हे मेरी मृत्यु का दुखभरा सम्वाद सुनाया जावेगा। माँ ! मुझे विश्वास है कि तुम यह समझकर धैर्य धारण करोगी कि तुम्हारा पुत्र माताओ की माता—'भारत-माता' की सेवा मे अपने जीवन को बलिवेदी की भेट कर गया और उसने तुम्हारी कुक्षि को कलकित न किया, अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ रहा। जब स्वाधीन भारत का इतिहास लिखा जावेगा तो उसके किसी पृष्ठ पर उज्ज्वल अक्षरो मे तुम्हारा भी नाम लिखा जावेगा। गुरु गोविन्द सिह की धर्मपत्नी ने जब अपने पुत्रो की मृत्यु का सम्वाद सुना था तो बहुत हर्षित हुई और गुरु के नाम पर धर्म रक्षार्थ अपने पुत्रों के बलिदान पर मिठाई बॉटी थी। जन्मदात्री ! वर दो

कि अंतिम समय भी मेरा हृदय किसी प्रकार विचलित न हो और तुम्हारे चरण-कमलों को प्रणाम कर मैं परमात्मा का स्मरण करता हुआ शरीर-त्याग करूँ।

फाँसी की कोठरी

अंतिम समय निकट है। दो फाँसी की सजाएँ सिर पर झूल रही है। पुलिस को साधारण जीवन मे, और समाचार-पत्रो तथा पत्रिकाओ मे खूब जी भरके कोसा है। खुली अदालत मे जज साहब, खुफिया पुलिस के अफसर, मजिस्ट्रेट, सरकारी वकील तथा सरकार को खूब आड़े हाथो लिया है। हर एक के हृदय में मेरी बाते चुभ रही है। कोई दोस्त आशना अथवा यार-मददगार नही जिसका सहारा हो। एक परम पिता परमात्मा की याद है। गीता का पाठ करते हुए संतोष है कि—

जो कुछ किया सो तै किया, मै कुछ कीन्हा नाहि।
जहाँ कही कुछ मै किया, तुम ही थे मुझ माँहि॥
[ब्रह्मण्या धाय कर्माणि सगम् त्यक्त्वा करोति य·।
लिप्यते न स पापेभ्यो· पद्म पत्रमिवाभ ॥]

अर्थात् जो फल की इच्छा को त्याग करके कर्मो को ब्रह्म मे अर्पण करके कर्म करता है, वह पाप में लिप्त नही होता, जिस प्रकार जल मे रहकर भी कमल-पत्र जल मे लिप्त नही होता।"

जीवनपर्यन्त जो कुछ किया स्वदेश की भलाई समझ कर किया। यदि शरीर की पालना की तो इसी विचार से कि सुदृढ शरीर से भली प्रकार स्वदेश-सेवा हो सके। बडे प्रयत्नो से यह शुभ दिन प्राप्त हुआ। सयुक्त प्रान्त मे इस तुच्छ शरीर का ही सौभाग्य होगा जो सन् 1857 के गदर की घटनाओ के पश्चात् क्रातिकारी आदोलन के सबध मे इस प्रांत के निवासी का पहला बलिदान मातृवेदी पर होगा।

सरकार की इच्छा है कि मुझे घोट-घोट कर मारे। इसी कारण से इस गर्मी की ऋतु मे साढे तीन महीने रखने के बाद अपील की तारीख नियत की गई। साढ़े तीन महीने तक फाँसी की कोठरी में भूँजा गया। यह कोठरी तो पक्षी के पिंजरे से भी खराब है। गोरखपुर जेल की फाँसी की कोठरी मैदान मे बनी है। किसी प्रकार की छाया निकट नहीं। प्रातःकाल आठ बजे तक सूर्य

देवता की कृपा से तथा चारो ओर रेतीली जमीन होने से भीषण अग्नि-वर्षन होता है। नौ फुट लबी तथा नौ फुट चौडी कोठरी मे केवल एक छः फुट लबा और दो फुट चौडा द्वार है। पीछे की ओर जमीन से आठ या नौ फुट की ऊँचाई पर एक दो फुट लबी, एक फुट चौडी खिडकी है।

इसी कोठरी मे ही भोजन, स्नान, मलमूत्र-त्याग तथा शयनादि होता है। मच्छर अपनी मधुर ध्वनि रातभर सुनाया करते है। बडे प्रयत्न से रात्रि मे तीन या चार घटे निद्रा आती है। किसी-किसी दिन एक-दो घंटे ही सोकर निर्वाह करना पडता है। मिट्टी के पात्रो मे भोजन दिया जाता है। ओढने-बिछाने को दो कम्बल मिले है। बडे त्याग का जीवन है। साधना के सब साधन एकत्रित है। प्रत्येक क्षण शिक्षा दे रहा है—*'अंतिम समय के लिए तेयार हो जाओ, परमात्मा का भजन करो !'*

मुझे तो इस कोठरी मे बडा आनद आ रहा है। मेरी इच्छा थी कि किसी साधु की गुफा मे कुछ दिन निवास करके योगाभ्यास किया जाता। अंतिम समय वह इच्छा भी पूर्ण हो गई। साधु की गुफा न मिली तो क्या, साधना की गुफा (कोठरी) तो मिल गई। इस कोठरी मे यह सुयोग प्राप्त हो गया कि अपनी कुछ अंतिम बातें लिखकर देशवासियो को अर्पण कर दूँ। सम्भव है कि मेरे जीवन के अध्ययन से किसी आत्मा का भला हो जाए। बडी कठिनता से यह शुभ अवसर प्राप्त हुआ।

महसूस हो रहे है, वादे-फना के झोके।
खुलने लगे हैं मुझ पर इसरार जिदगी के॥
बारे-अलम उठाया, रगे-निशात देखा।
आए नही है यूँ ही अदाज बे-हिसी के॥

अंतिम समय की बातें

सर-फ़रोशाने वतन फिर देख लो मक्तल मे हैं।
मुल्क पर कुरबान हो जाने के अरमॉ दिल मे हैं॥
तेग है ज़ालिम की यारो ! और गला मजलूम का।
देख लेगे हौसला कितना दिले-कातिल मे है॥
शोर-महशर बावफ़ा है, मारिका है धूम का।
वलवले जोशे शहादत, हर रगे 'बिस्मिल' मे है॥

आज 16 दिसंबर, 1927 ई० को इन पक्तियो का उल्लेख कर रहा हूँ, जबकि 19 दिसबर, 1927 ई० सोमवार पौष कृष्ण एकादशी, सम्वत् 1884 को साढ़े छः बजे प्रातकाल इस शरीर को फॉसी पर लटका देने की तिथि निश्चित हो चुकी है। अतएव नियत समय पर यह लीला सवरण करनी होगी ही। यह सब सर्वशक्तिमान प्रभु की लीला है। सब कार्य उसकी इच्छानुसार ही होते हैं। यह परमपिता परमात्मा के नियमो का परिणाम है कि किस प्रकार किसको शरीर त्यागना होता है। मृत्यु के सकल उपक्रम निमित्त मात्र हैं। जब तक कर्म का पूर्णत क्षय नही हो जाता आत्मा को जन्म-मरण के बधन मे पडना ही होता है। यह शास्त्रो का निश्चय है। यद्यपि यह तो, वह परब्रह्म ही जानता है कि किन कर्मो के परिणामस्वरूप कौन सा शरीर इस आत्मा को ग्रहण करना होगा, किंतु अपने लिए यह मेरा दृढ निश्चय है कि मै उत्तम शरीर धारण कर नवीन शक्तियो सहित अति शीघ्र ही पुनः भारतवर्ष मे ही किसी निकटवर्ती सम्बन्धी या इष्टमित्र के गृह मे जन्म ग्रहण करूँगा। क्योकि मेरा जन्म-जन्मातर यही उद्देश्य रहेगा कि मनुष्य मात्र को सभी प्राकृतिक पदार्थो का समान अधिकार प्राप्त हो। कोई किसी पर हुकूमत न करे। सारे ससार मे जनतत्र की स्थापना हो। वर्तमान समय मे भारतवर्ष की बडी शोचनीय अवस्था है। अतएव लगातार कई जन्म इसी देश मे ग्रहण करने होगे और जब तक कि भारतवर्ष के नर-नारी पूर्णतया सर्वरूपेण स्वतन्त्र न हो जावे, परमात्मा से मेरी यही प्रार्थना होगी कि वह मुझे इसी देश में जन्म दे ताकि मै उसकी पवित्र वाणी—'वेद वाणी' का अनुपम घोष मनुष्य मात्र के कानों तक पहुँचाने मे समर्थ हो सकूँ। सभव है कि मै मार्ग-निर्धारण मे भूल करूँ पर इसमे मेरा कोई विशेष दोष नही क्योकि मैं भी तो अल्पज्ञ जीव मात्र ही हूँ। भूल न करना केवल सर्वज्ञ से ही सम्भव है। हमें परिस्थितियो के अनुसार ही सब कार्य करने पडे और करने होगे। परमात्मा अगले जन्म मे सुबुद्धि प्रदान करे कि मैं जिस मार्ग का अनुसरण करूँ वह त्रुटिरहित ही हो।

अब मै उन बातो का भी उल्लेख कर देना उचित समझता हूँ जो काकोरी षड्यन्त्र के अभियुक्तो के सबध मे सेशन जज के फैसला सुनाने के पश्चात् घटित हुई। 16 अप्रैल, 1927 ई० को सेशन जज ने फैसला सुनाया था। 18 जुलाई, 1927 ई० को अवध चीफ कोर्ट में अपील हुई। इसमे कुछ की सजाएँ बढी और एकाध की कम भी हुई। अपील होने की तारीख से

पहले मैने सयुक्त प्रात के गवर्नर की सेवा में एक मैमोरियल भेजा था जिसमे प्रतिज्ञा की थी कि अब भविष्य मे क्रातिकारी दल से कोई सम्बन्ध न रखूँगा। इस मैमोरियल का जिक्र मैंने अपने अतिम दया प्रार्थना-पत्र मे, जो मैंने चीफ कोर्ट के जजों को दिया था, उसमे कर दिया था। किंतु चीफ कोर्ट के जजो ने मेरी किसी प्रकार की प्रार्थना न स्वीकार की। मैंने स्वय ही जेल से अपने मुकदमे की बहस लिखकर भेजी जो छापी गई। जब यह बहस चीफ कोर्ट के जजो ने सुनी तो उन्हे बडा सन्देह हुआ कि वह बहस मेरी लिखी हुई न थी। इन तमाम बातों का यह नतीजा निकला कि चीफ कोर्ट अवध से मुझे महाभयकर षड्यत्रकारी की पदवी दी गई। मेरे पश्चात्ताप पर जजो को विश्वास न हुआ और उन्होने अपनी धारणा का प्रकाश किया कि यदि यह (रामप्रसाद) छूट गया तो फिर वही कार्य करेगा। बुद्धि की प्रखरता तथा समझ का कुछ प्रकाश डालते हुए निर्दयी हत्यारे के नाम से विभूषित किया गया। लेखनी उनके हाथ मे थी, जो चाहे सो लिखते। किंतु काकोरी षड्यत्र का चीफ कोर्ट का आद्योपान्त फैसला पढ़ने से भली भॉति विदित होता है कि मुझे मृत्युदड किस ख्याल से दिया गया। यह निश्चय किया गया कि "रामप्रसाद ने सेशन जज के विरुद्ध अपशब्द कहे हैं, खुफिया विभाग के कार्यकर्ताओ पर लाछन लगाए है अर्थात् अभियोग के समय जो अन्याय होता था उसके विरुद्ध आवाज उठाई है, अतएव रामप्रसाद सबसे बडा गुस्ताख मुलजिम है। अब माफी चाहे वह किसी भी रूप मे मॉगे, नही दी जा सकती।"

चीफ कोर्ट के यहॉ से अपील खारिज हो जाने के बाद यथानियम प्रातीय गवर्नर तथा फिर वायसराय के पास दया-प्रार्थना की गई। रामप्रसाद 'बिस्मिल', राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी, रोशनसिंह तथा अशफ़ाकउल्ला खॉ के मृत्युदड को बदलकर कोई अन्य (दूसरी) सजा देने की सिफारिश करते हुए सयुक्त प्रात की कौंसिल के लगभग सभी निर्वाचित सदस्यो ने हस्ताक्षर करके निवेदन-पत्र दिया। मेरे पिताजी ने ढाई सौ रईस, ऑनरेरी मजिस्ट्रेट तथा जमींदारों के हस्ताक्षर से एक अलग प्रार्थना-पत्र भेजा किंतु श्रीमान् सर विलियम मैरिस की सरकार ने एक भी न सुनी। उसी समय लेजिस्लेटिव असेम्बली (विधान सभा) तथा कौसिल आफ स्टेट (राज्य परिषद्) के 78 सदस्यो ने भी हस्ताक्षर करके वायसराय के पास प्रार्थनापत्र भेजा, कि 'काकोरी षड्यंत्र' के मृत्युदंड पाए हुओं की मृत्युदड की सजा बदलकर दूसरी सजा कर

दी जाए क्योंकि दौरा जज ने सिफारिश की है कि यदि ये लोग पश्चात्ताप करे तो सरकार दड कम कर दे। चारो अभियुक्तो ने पश्चात्ताप प्रकट कर दिया। किंतु वायसराय महोदय ने एक भी न सुनी।

इस विषय मे माननीय पडित मदनमोहन मालवीय जी ने तथा अन्य असेम्बली के कुछ सदस्यो ने वायसराय से मिलकर भी प्रयत्न किया था कि मृत्युदड न दिया जावे। इतना होने पर सब को आशा थी कि वाससराय महोदय अवश्यमेव मृत्युदड की आज्ञा रद्द कर देगे। इसी हालत मे चुपचाप विजयादशमी से दो दिन पहिले जेलों को तार भेज दिए गए कि दया नही होगी। सबको फॉसी की तारीख मुकर्रर हो गयी। जब मुझे जेल सुपरिन्टेडेट ने तार पढकर सुनाया, मैंने भी कह दिया कि आप अपना कार्य कीजिए। जेल सुपरिन्टेंडेट के अधिक कहने पर कि एक तार दया-प्रार्थना का सम्राट के पास भेज दो क्योकि उन्होंने यह एक नियम सा बना रखा है, कि प्रत्येक फॉसी के कैदी की ओर से, जिसकी दया-भिक्षा की अर्जी वायसराय के यहाँ से खारिज हो जाती है, वह एक तार सम्राट के नाम से प्रातीय सरकार के पास अवश्य भेजते है, कोई दूसरा जेल सुपरिन्टेडेट ऐसा नही करता है। उपरोक्त तार लिखते हुए मेरा कुछ विचार हुआ कि प्रिवी-कौसिल इग्लैड मे अपील की जावे। मैंने श्रीयुत् मोहनलाल सक्सेना वकील लखनऊ को सूचना दी। बाहर किसी को वायसराय की अपील खारिज होने की बात पर विश्वास ही न हुआ। जैसे-तैसे करके श्रीयुत् मोहनलाल सक्सेना द्वारा प्रिवी कौंसिल मे अपील कराई गई। नतीजा तो पहले ही मालूम था। वहॉ से भी अपील खारिज हुई।

यह जानते हुए भी कि अंग्रेज सरकार कुछ भी न सुनेगी, मैंने सरकार को प्रतिज्ञा-पत्र क्यो लिखा? क्यो अपीलों पर अपीले तथा दया-प्रार्थनाएँ की? इस प्रकार के प्रश्न उठते है। मेरी समझ मे सदैव यही आया है कि राजनीति एक शतरज के खेल के समान है। शतरज के खेलने वाले भली भॉति जानते है कि आवश्यकता होने पर किस प्रकार अपने मोहरे भी देने पडते है। बंगाल आर्डिनेस के कैदियो के छोडने या उन पर खुली अदालत मे मुकदमा चलाने के प्रस्ताव जब असेम्बली मे पेश किए गए तो सरकार की ओर से बडे जोरदार शब्दो मे कहा गया कि सरकार के पास पूरा सबूत मोजूद है। खुली अदालत में अभियोग चलाने से गवाहो पर आपत्ति आ सकती है,

यदि आर्डिनेस के कैदी लेखबद्ध प्रतिज्ञा-पत्र दाखिल कर दे कि वे भविष्य मे क्रातिकारी आन्दोलन से कोई सबध न रखेगे तो सरकार उन्हे रिहाई देने के विषय मे विचार कर सकती है। बगाल मे दक्षिणेश्वर तथा शोभा बाजार बम केस, आर्डिनेस के बाद चले। खुफिया विभाग के डिप्टी सुपरिन्टेडेट के कत्ल का मुकदमा भी खुली अदालत में हुआ, और भी कुछ हथियारो के मुकदमे भी खुली अदालत मे चलाए गए। किंतु कोई एक भी दुर्घटना या हत्या की सूचना पुलिस न दे सकी। काकोरी-षड्यंत्र केस पूरे डेढ साल तक खुली अदालतो मे चलता रहा। सबूत की ओर से लगभग तीन सौ गवाह पेश किए गए। कई मुखबिर तथा इकबाली खुली तौर से घूमते रहे पर कहीं कोई दुर्घटना या किसी को धमकी देने की पुलिस ने कोई सूचना न दी।

सरकार की इन बातो की पोल खोलने की गरज से ही मैने लेखबद्ध बधेज सरकार को दिया। सरकार के कथनानुसार जिस प्रकार बगाल-आर्डिनेस के कैदियो के सबध मे सरकार के पास पूरा सबूत था और सरकार उनमे से अनेक को भयकर षड्यत्रकारी दल का सदस्य तथा हत्यारो का जिम्मेदार समझती तथा कहती थी तो इसी प्रकार काकोरी के षड्यन्त्रकारियो के लेखबद्ध प्रतिज्ञा करने पर कोई गौर क्यो न किया? बात यह है कि जबरा मारे रोने न दे। मुझे तो भली भॉति मालूम था कि सयुक्त प्रात में जितने राजनीतिक अभियोग चलाए जाते हैं, उनके फैसले, खुफिया पुलिस की इच्छानुसार लिखे जाते है। बरेली पुलिस कान्स्टेबलो की हत्या के अभियोग मे नितात निर्दोष नवयुवकों को फॅसाया गया और सी० आई० डी० वालो ने अपनी डायरी दिखलाकर फैसला लिखाया। काकोरी-षड्यत्र मे भी अत मे ऐसा ही हुआ। सरकार की सब चालों को जानते हुए भी मैने सब कार्य उसकी लबी-लंबी बातों की पोल खोलने के लिए ही किए। काकोरी के मृत्युदंड पाए हुओ की दया-प्रार्थना न स्वीकार करने का कोई विशेष कारण सरकार के पास नही। सरकार ने बंगाल आर्डिनेंस के कैदियो के सबध में जो कुछ कहा था, सो काकोरी वालो ने किया। मृत्युदंड को रद्द कर देने से देश मे किसी प्रकार की शाति भग होने अथवा किसी विप्लव के हो जाने की सभावना न थी। विशेषतया जबकि देशभर के सब प्रकार के हिदू-मुसलमान असेम्बली के सदस्यो ने इसकी सिफारिश की थी।

षड्यंत्रकारियों की इतनी बडी सिफारिश इससे पहले कभी नही हुई।

किंतु सरकार तो अपना पासा सीधा रखना चाहती है। उसे अपने बल पर विश्वास है। सर विलियम मैरिस ने ही स्वयं शाहजहाँपुर तथा इलाहाबाद के हिंदू-मुस्लिम दगो के उन अभियुक्तो के मृत्युदड रद्द किए है जिनको कि इलाहाबाद हाईकोर्ट से मृत्युदड ही देना उचित समझा गया था और उन लोगो पर दिन-दहाडे हत्या करने के सीधे सबूत मौजूद थे। ये सजाएँ ऐसे समय माफ की गई थी जबकि नित्य नए हिंदू-मुस्लिम दगे बढते ही जा रहे थे। यदि काकोरी के कैदियों को मृत्युदड माफ करके दूसरी सजा देने से दूसरो का उत्साह बढता तो क्या इसी प्रकार मजहबी दगों के सबध मे भी नही हो सकता था। मगर वहाँ तो मामला कुछ और ही है, जो अब भारतवासियो के नरम-से-नरम दल के नेताओ के भी शाही कमीशन के मुकर्रर होने और उनमें एक भी भारतवासी के न चुने जाने, पार्लियामेंट में भारत सचिव लार्ड बर्कनहेड के तथा अन्य मजदूर दल के नेताओ के भाषणो से भली भाँति समझ मे आया है कि किस प्रकार भारतवर्ष को गुलामी की जजीरो में जकडे रहने की चाले चली जा रही है।

मुझे प्राण त्यागते समय निराश होना नही पड रहा है कि हम लोगो के बलिदान व्यर्थ गए। मेरा तो विश्वास है कि हम लोगो की छिपी हुई आहो का ही यह नतीजा हुआ कि लार्ड बर्कनहेड के दिमाग मे परमात्मा ने एक विचार उपस्थित किया कि हिंदुस्तान के हिंदू-मुस्लिम झगडो का लाभ उठाओ और भारतवर्ष की जजीरे और कस दो। गए थे रोजा छोडने, नमाज गले पड गई। भारतवर्ष के प्रत्येक विख्यात राजनीतिक दल ने और हिंदुओ के तो लगभग सभी तथा मुसलमानो के भी अधिकाश नेताओं ने एक स्वर मे रायल कमीशन की नियुक्ति तथा उसके सदस्यों के विरुद्ध घोर विरोध किया है। और अगली कांग्रेस (मद्रास) पर सब राजनीतिक दलों के नेता तथा हिंदू-मुसलमान एक होने जा रहे है। वायसराय ने जब हम काकोरी के मृत्युदड वालों की दया-प्रार्थना अस्वीकार की थी, उसी समय मैंने श्रीयुत् मोहनलाल जी को पत्र लिखा था कि हिदुस्तानी नेताओ को तथा हिंदू-मुसलमानो को अगली काग्रेस पर एकत्रित हो हम लोगो की याद मनाना चाहिए। एक ने अशफ़ाकउल्ला खाँ को रामप्रसाद का दाहिना हाथ करार दिया। अशफाकउल्ला कट्टर मुसलमान होकर पक्के आर्यसमाजी रामप्रसाद का क्रातिकारी दल के सबध में यदि दाहिना हाथ बन सकते हैं तब क्या भारतवर्ष

की स्वतत्रता के नाम पर हिदू-मुसलमान अपने निजी छोटे-छोटे फायदो का ख्याल न करके आपस मे एक नही हो सकते ?

परमात्मा ने मेरी पुकार सुन ली और मेरी इच्छा पूरी होती दिखाई देती है। मै तो अपना कार्य कर चुका। (मैंने मुसलमानो मे से एक नवयुवक निकालकर भारतवासियो को दिखा दिया, जो सब परीक्षाओ मे पूर्णतया उत्तीर्ण हुआ। अब किसी को यह कहने का साहस न होना चाहिए कि मुसलमानो पर विश्वास न करे। पहला तजुर्बा था जो पूरी तौर से कामयाब हुआ।) अब देशवासियो से यही प्रार्थना है कि यदि वे हम लोगो के फॉसी पर चढने से जरा भी दुखित हुए हो, तो उन्हे यही शिक्षा लेनी चाहिए कि हिदू-मुसलमान तथा सब राजनीतिक दल एक होकर काग्रेस को अपना प्रतिनिधि माने। जो कांग्रेस तय करे उसे सब पूरी तौर से माने और उस पर अमल करे। ऐसा करने के बाद वह दिन बहुत दूर न होगा जब अग्रेजी सरकार को भारतवासियो की मॉग के सामने सिर झुकाना पडे, और यदि ऐसा करेगे तब तो स्वराज्य कुछ दूर नही।

क्योंकि फिर तो भारतवासियो को काम करने का पूरा मौका मिल जावेगा। हिदू-मुस्लिम एकता ही हम लोगो की यादगार तथा अतिम इच्छा है, चाहे वह कितनी भी कठिनता से क्यो न हो। जो मै कह रहा हूँ वही श्री अशफाकउल्ला खॉ 'वारसी' का भी मत है क्योकि अपील के समय हम दोनो लखनऊ जेल मे फॉसी की कोठरियों मे आमने-सामने कई दिन तक रहे थे। आपस मे हर तरह की बाते हुई थी। गिरफ्तारी के बाद से हम लोगो की सजा पडने तक श्री अशफ़ाकउल्ला खॉ की बडी उत्कट इच्छा यही रही थी कि वह एक बार मुझसे मिल लेते जो परमात्मा ने पूरी कर दी।

श्री अशफाकउल्ला खॉ तो अग्रेज सरकार से दया-प्रार्थना करने पर राजी ही न थे। उनका तो अटल विश्वास यही था कि खुदावद करीम के अलावा किसी दूसरे से दया की प्रार्थना न करना चाहिए परतु मेरे विशेष आग्रह से ही उन्होंने सरकार से दया-प्रार्थना की थी। इसका दोषी मै ही हूँ जो मैंने अपने प्रेम के पवित्र अधिकारों का उपयोग करके श्री अशफाकउल्ला खॉ को उनके दृढ निश्चय से विचलित किया। मैंने एक पत्र द्वारा अपनी भूल स्वीकार करते हुए भ्रातृ-द्वितीया (भइया-दूज) के अवसर पर गोरखपुर जेल से श्री अशफ़ाक को पत्र लिखकर क्षमा-प्रार्थना की थी। परमात्मा जाने वह पत्र

उनके हाथो तक पहुँचा भी या नही। खैर! परमात्मा की ऐसी इच्छा थी कि हम लोगों को फॉसी दी जावे। भारतवासियो के जले हुए दिलों पर नमक पडे, वे बिलबिला उठे और हमारी आत्माएँ उनके कार्य को देखकर सुखी हो। जब हम नवीन शरीर धारण कर देश-सेवा मे योग देने को उद्यत हो उस समय तक भारतवर्ष की राजनीतिक स्थिति पूर्णतया सुधरी हुई हो। जनसाधारण का अधिक भाग सुशिक्षित हो जावे। ग्रामीण लोग भी अपने कर्तव्य समझने लग जावे।

प्रिवी कौंसिल मे अपील भिजवाकर मैंने जो व्यर्थ का अपव्यय करवाया उसका भी एक विशेष अर्थ था। सब अपीलों का तात्पर्य यह था कि मृत्युदंड उपयुक्त दंड नही। क्योंकि न जाने किसकी गोली से आदमी मारा गया हो। अगर डकैती डालने की जिम्मेदारी के ख्याल से मृत्युदड दिया गया तो चीफ कोर्ट के फैसले के अनुसार, भई मै ही डकैतियो का जिम्मेदार तथा नेता था। और प्रात का नेता भी मै ही था। अतएव मृत्युदड तो अकेले मुझे ही मिलना चाहिए था, अन्य तीनो को फॉसी नहीं देना चाहिए था। इसके अतिरिक्त दूसरी सजाएँ सब स्वीकार होती। पर ऐसा क्यो होने लगा? मै विलायती न्यायालय की भी परीक्षा करके स्वदेशवासियों के लिए उदाहरण छोडना चाहता था कि यदि कोई राजनीतिक अभियोग चले तो वे कभी भूल करके भी किसी अग्रेजी अदालत का विश्वास न करे, तबीयत आये तो जोरदार बयान दे। अन्यथा मेरी तो यही राय है कि अग्रेजी अदालत के सामने न तो कभी कोई बयान दे और न कभी कोई सफाई पेश करे। काकोरी षड्यंत्र के अभियोग से शिक्षा प्राप्त कर ले।

इस अभियोग मे सब प्रकार के उदाहरण मौजूद है। प्रिवी कौंसिल से अपील दाखिल कराने का एक विशेष अर्थ यह था कि कुछ समय तक फॉसी की तारीख हटवाकर मैं यह परीक्षा करना चाहता था कि नवयुवकों मे कितना दम है? और देशवासी कितनी सहायता दे सकते है? इसमे मुझे बडी निराशापूर्ण असफलता हुई। अत मे मैंने निर्णय किया था कि यदि हो सके तो मैं जेल से निकल भागूँ। ऐसा हो जाने से सरकार को अन्य तीनो फॉसी वालो की फॉसी की सजा माफ कर देनी पड़ेगी। और यदि न करते तो मैं करा लेता। मैंने जेल से भागने के अनेक प्रयास किए किंतु बाहर से कोई सहायता न मिल सकी। यही तो हृदय पर आघात लगता है कि जिस देश मे मैंने इतना

बडा क्रातिकारी आदोलन तथा षड्यत्रकारी दल खड़ा किया था, वहॉ से मुझे प्राण-रक्षा के लिए एक रिवॉल्वर तक न मिल सका। एक नवयुवक भी सहायता को न आ सका।

अत मे फॉसी पा रहा हूँ। फॉसी पाने का मुझे कोई भी शोक नही है। क्योकि मैं इस नतीजे पर पहुॅचा हूॅ कि परमात्मा को शायद यही मजूर था। परतु मै नवयुवकों से भी नम्र निवेदन करता हूॅ कि जब तक भारतवासियो की अधिक सख्या सुशिक्षित न हो जावे, जब तक उन्हे कर्तव्याकर्तव्य का ज्ञान न हो जावे तब तक वे भूलकर भी किसी प्रकार के क्रातिकारी षड्यत्रो मे भाग न ले। यदि देश-सेवा की इच्छा हो तो खुले आदोलनो द्वारा यथाशक्ति कार्य करे अन्यथा उनका बलिदान उपयोगी न होगा। दूसरे प्रकार से इससे अधिक देश-सेवा हो सकती है जो अधिक उपयोगी सिद्ध होगी। परिस्थिति अनुकूल न होने से ऐसे आंदोलनो से अधिकतर परिश्रम व्यर्थ जाता है। जिनकी भलाई के लिए करो, वही बुरे-बुरे नाम धरते है और अन्त मे मन-ही-मन कुढ़-कुढकर प्राण त्यागने पड़ते हैं। देशवासियों से यही अन्तिम विनय है कि जो कुछ करे सब मिलकर करे और सब देश की भलाई के लिए करें। इसी से सबका भला होगा, बस!

मरते बिस्मिल, रोशन, लाहिडी, अशफ़ाक अत्याचार से,
होगे पैदा सैकडो इनके रुधिर की धार से।

'बिस्मिल' की स्वरचित कविताएँ

ऐ मातृभूमि !

ऐ मातृभूमि ! तेरी जय हो, सदा विजय हो।
प्रत्येक भक्त तेरा, सुख-शाति-कातिमय हो ॥

अज्ञान की निशा में, दुख से भरी दिशा मे,
ससार के हृदय मे, तेरी प्रभा उदय हो।

तेरा प्रकोप सारे जग का महाप्रलय हो ॥
तेरी प्रसन्नता ही आनद का विषय हो ॥

वह भक्ति दे कि 'बिस्मिल' सुख मे तुझे न भूले,
वह शक्ति दे कि दुख मे कायर न यह हृदय हो ॥

मातृ-वंदना

हे मातृभूमि ! तेरे चरणो में शिर नवाऊँ।
मै भक्ति भेंट अपनी, तेरी शरण में लाऊँ ॥

माथे पे तू हो चदन, छाती पे तू हो माला,
जिह्वा पे गीत तू हो, तेरा ही नाम गाऊँ ॥

जिससे सपूत उपजे, श्रीराम - कृष्ण जैसे,
उस धूल को मै तेरी निज शीश पे चढाऊँ ॥

माई समुद्र जिसकी पदरज को नित्य धोकर,
करता प्रणाम तुझको, मैं वे चरण दबाऊँ ॥

सेवा मे तेरी माता ! मै भेदभाव तजकर;
वह पुण्य नाम तेरा, प्रतिदिन सुनूँ-सुनाऊँ ॥

तेरे ही काम आऊँ, तेरा ही मंत्र गाऊँ।
मन और देह तुझ पर बलिदान मैं चढाऊँ ॥

प्रार्थना

दुख दूर कर हमारे, ससार के रचैया!
जल्दी से दे सहारा, मँझधार मे है नैया॥

तुझ बिन कोई हमारा, रक्षक नही यहाँ पर;
ढूँढा जहान सारा, तुम सा नही रखैया॥

दुनिया में खूब देखा, आँखे पसार करके;
साथी नही हमारा माँ, बाप और भैया॥

सुख के सभी हैं साथी, दुनिया के मित्र सारे,
तेरा ही नाम प्यारा, दुख - दर्द के बचैया॥

दुनिया में फँस के हमको, हासिल हुआ न कुछ भी;
तेरे बिना हमारा, कोई नही सुनैया॥

चारो तरफ से हम पर, ग़म की घटा है छाई
सुख का करो उजाला, हे प्रकाश के करैया।

अच्छा - बुरा है जैसा, राजी मैं 'राम' रहता;
चेरा है यह तुम्हारा, सुधि लेउ सुधि लिवैया॥

जब प्राण तन से निकलें !

जगदीश ! यह विनय है, जब प्राण तन से निकले,
प्रिय देश ! देश ! रटते, यह प्राण तन से निकले।

भारत वसुन्धरा पर, सुख - शांति - सयुता पर,
शुचि शस्य-श्यामला पर यह प्राण तन से निकले।

देशाभिमान धरते, जातीय गान करते,
निज बन्धु-व्याधि हरते, यह प्राण तन से निकले।

भारत का चित्रपट हो, युग नेत्र के निकट हो,
श्री जाह्नवी का तट हो, तब प्राण तन से निकले।

दुख दैत्य पर विजय हो, अज्ञान रात्रि क्षय हो,
भारत समृद्धिमय हो, तब प्राण तन से निकले।

उद्योग शांति सुख हो, आलस्य हो न दुख हो,
सबका प्रसन्न मुख हो, तब प्राण तन से निकले।

संकट न दुःख-भय हो, सर्वत्र ही विजय हो,
ऐसा सुकाल जब हो, तब प्राण तन से निकले।

सब ही सतत सबल हो, विद्या-कला-कुशल हो,
कर्त्तव्य पर अटल हो, तब प्राण तन से निकले।

देशोपकार करते, मन मातृ - भक्ति भरते,
जय-जय स्वदेश रटते, यह प्राण तन से निकलें ॥

धर्म-हित मरना

जो मरता धर्म-हित समझो वो मरकर भी नहीं मरता।
अमरता उसको मिलती है जो मरने से नहीं डरता॥

है नश्वर देह, सब कहते है, मर जावे तो अचरज क्या
सदा मरने मे हमको चाहिए दिखलाना तत्परता।

नहीं जेलों से भय खाना, नही फॉसी से घबराना,
नहीं आत्मा पे है इनका जरा-सा भी असर पडता॥

समर मे कट के मर जाना भला शय्या पे मरने से,
वो मरकर स्वर्ग को जाता ये मरकर नर्क मे सडता।

निराशा मन मे लाना है तेरे 'बिस्मिल' की कायरता
उसे ही सिद्धि मिलती है जो भय का सामना करता॥

मेरी भावना

न चाहूँ मान दुनिया मे, न चाहूँ स्वर्ग को जाना
मुझे वर दे यही माता, रहूँ भारत पे दीवाना।

करूँ मै देश की सेवा, पडे चाहे करोडों दुख,
अगर फिर जन्म लूँ आकर तो हो भारत मे ही आना।

मुझे हो प्रेम हिंदी से, पढूँ हिदी लिखूँ हिदी
चलन हिदी चलूँ, हिदी पहनना ओढना खाना।

रहे मेरे भवन मे रोशनी हिदी चिराग़ो की
स्वदेशी ही रहे बाजा बजाना राग का गाना॥

लगें इस देश के ही अर्थ मेरे धर्म, विद्या, धन,
करूँ मैं प्राण तक अर्पण, यही है सत्य प्रण ठाना।

सम्हल कर पहन ले भारत-वदन पर भक्ति का चोला
चढा लो प्रेम की रंगत, दुई का त्याग कर बाना।

नही कुछ भी असम्भव है जो चाहो दिल से तुम 'बिस्मिल'
उठा लो देश हाथो पर, न समझो अपना - बेगाना।

मातृभूमि-वियोग

हाय ! जननी जन्मभूमि ! छोडकर जाते है हम ।
वश नही चलता है रह-रह करके पछताते है हम ।

स्वर्ग के सुख से भी ज्यादा सुख मिला हमको यहॉ
इसलिए तजते इसे हर बार शरमाते है हम ।

ऐ नदी, नालो, दरख्तो, मेरा कसूर—
माफ करना जोडकर कर तुमसे फ़रमाते है हम ।

मातृभूमि ! प्राण-प्यारी ! दुख बहुत तुमको दिया
कर क्षमा अपराध बारम्बार सिर नाते हैं हम ।

कुछ भलाई भी न हम तुम सबकी खातिर कर सके
हो गए बलिदान बस सन्तोष यूँ पाते हैं हम ।

मॉ ! तुझे इस जन्म मे कुछ सुख न दे पाए कभी
फिर जनम लेगे यहीं यह कौल कर जाते है हम ।

शीघ्र करके यत्न मेरे देश ! फिर आकर तुझे
दुश्मनो से छीन लेगे, यह कसम खाते हैं हम ।

फ़कीरों की फेरी

यदि तुझे देश की चिन्ता है तो हिदू जाति जगा बाबा !
यह ऊँच-नीच के भेद-भाव का घर से भूत भगा बाबा !

फॅस दया-अहिंसा फदे मे हो गये हीजडे ये पक्के,
कुछ जगे जोश मर्दो वाला अब ऐसा जोर लगा बाबा !

बाईस कोटि है तो भी ये मर रहे मौत कुत्तो जैसी,
इस जग मे नही रहा कोई इनका माँ-बाप सगा बाबा !

'बिस्मिल' तू इन्हें सिखा गीता या भूषण जैसी कविताई,
लचका-लचकाकर कमर चकाचक गदे गीत न गा बाबा !

अफ़सोस

मिट गया जब मिटने वाला फिर सलाम आया तो क्या,
दिल की बरबादी के बाद उनका पयाम आया तो क्या ?

काश ! अपनी जिदगी मे हम तो मजर देखते,
यूँ सरे-तुर्बत कोई महशर-खिराम आया तो क्या ?

मिट गई जब सब उमीदे मिट गए जब सब खयाल,
उस घडी गर नामाबर लेकर पयाम आया तो क्या ?

ऐ दिले-नाकाम ! मिट जा तू भी कूए-यार मे,
फिर मेरी नाकामियो के बाद काम आया तो क्या ?

आखिरे-शब दीद के काबिल थी 'बिस्मिल' की तडप,
सुब्ह-दम कोई अगर बालाए-बाम आया तो क्या ?

वतन के वास्ते

क्या हुआ गर मिट गए अपने वतन के वास्ते,
बुलबुले कुर्बान होती है चमन के वास्ते।

तरस आता है तुम्हारे हाल पर ऐ हिन्दियो,
ग़ैर के मुहताज हो अपने कफ़न के वास्ते।

देखते है आप जिसको शाद है आबाद है,
क्या तुम्ही पैदा हुए रंजो-मिहन के वास्ते।

दर्द से अब बिलबिलाने का जमाना जा चुका,
फिक्र करनी चाहिए मर्ज़े-कुहन के वास्ते।

हिंदुओ को चाहिए अब कस्द काबे का करे,
और फिर मुस्लिम बढ़े गंगो-जमन के वास्ते।

सरफ़रोशी की तमन्ना

सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है ज़ोर कितना बाजुए-कातिल मे है।

रहबरे - राहे - मुहब्बत रह न जाना राह में
लज़्जते - सहरा - नवर्दी दूरिए - मजिल मे है।

आज मक्तल में यो क़ातिल कह रहा है बार-बार,
अब भला शौके-शहादत भी किसी के दिल मे है।

वक्त आने पे बता देंगे तुझे ऐ आसमॉ,
हम अभी से क्या बताएँ क्या हमारे दिल मे है।

ऐ शहीदे-मुल्को-मिल्लत ! हम तेरे ऊपर निसार,
अब तेरी हिम्मत की चर्चा गैर की महफ़िल मे है।

अब न अगले वल्वले है औ' न अरमानो की भीड,
एक मिट जाने की हस्रत अब दिले-'बिस्मिल' में है।

ज़ेरे-ज़ुल्मत

ज़ेरे-ज़ुल्मत क्यो है किस्मत भारते-नाशाद की,
ऐ खुदा ! अब तो ख़बर ले हिंद की औलाद की।

क्या ये कुछ तक्सीर कम थी उल्फते-दिलदार की,
घर दिया और ज़र दिया सर दे के भी इम्दाद की।

खूबिए-क़िस्मत तो देखो जॉ-निसारी के सिले,
जो मिली सब पर अयॉ है सनअते उस्ताद की।

मार्शल-लॉ, जेलख़ाना फॉसी औ' हब्से-दवाम,
बन्दिशे-नज़्रो-ज़ुबॉ क्या क्या नही ईजाद की।

अपनी हिम्मत औ' शुजाअत से भी कुछ तो काम लो,
अब तलक तो बुज़्दिली में जिन्दगी बर्बाद की।

ग़र्क होगा खुद सितमगर बहे-खूने-हिन्द मे,
सुर्ख मछली बनके तैरेगी छुरी जल्लाद की।

अरमाने-दिल

पूछते हो क्या कि क्या अरमॉ हमारे दिल मे है,
कुछ वतन की याद मे आहे-दमे-'बिस्मिल' मे है।

साकियाने - बाग़े - आलम सब रिहाई पा चुके,
यक हमी आफ़त के मारे क़ैद की मुश्किल मे हैं।

देश वालो ! दामने- हिम्मत कभी छोडा नहीं,
इम्तहाने-इश्क की हम पहली ही मजिल मे है।

आ ही पहुँचेगी किनारे क़श्तीए - भारत कभी,
कोई दम मे देखना हम दामने-साहिल में है।

जोशे - तूफ़ॉ शोरे - दर्या बर्के - लर्जा बादे - तुन्द,
कश्तीए - उम्रे - रवॉ या रब ! बडी मुश्किल मे है।

जिन्दाबाद ऐ जाने-उल्फत, जानो-दिल तुझ पर निसार,
क्योकि इक तेरे सबब से याद उसकी दिल में है।

बज़्म मे बर्क़े - नजर है सद - तमन्ना आफ्रीं,
दिल में है महफिल कोई या दिल मेरा महफ़िल में है ॥

अहद

देश - हित पैदा हुए है देश पर मर जाएँगे,
मरते-मरते देश को जिन्दा मगर कर जाएँगे।

हमको पीसेगा फलक चक्की में अपनी कब तलक,
खाक बनकर आँख मे उसकी बसर कर जाएँगे।

फिर वही बागे-खिज़ाँ का बादे-सर है दूर क्यो,
पेश्वाए फस्ले-गुल है खुद समर कर जाएँगे।

ख़ाक मे हमको मिलाने का तमाशा देखना,
तुख्मरेजी से नए पैदा शजर कर जाएँगे।

नौ-नौ आँसू जो रुलाते है हमे उनके लिए,
अश्क के सैलाब से बरपा हशर कर जाएँगे।

गर्दिशे - गिर्दाब मे डूबे भी तो परवा नही,
बहे - हस्ती मे नई पैदा लहर कर जाएँगे।

क्या कुचलते हैं समझकर वो हमे बर्गे-हिना,
अपने खूँ से हाथ उनके तर-ब-तर कर जाएँगे।

नक़्शे-पा हैं क्यों मिटाता है हमे 'बिस्मिल' फ़लक,
रहबरी का काम देगे जो गुज़र कर जाएँगे।।

वन्दे मातरम्!

कौम के खादिम की है जागीर 'वन्दे मातरम्'।
है वतन के वास्ते अक्सीर 'वन्दे मातरम्'॥

जालिमों को है उधर बदूक़ पर अपनी गुरूर,
है इधर हम बेकसों का तीर 'वन्दे मातरम्'।

क़त्ल की हमको न दो धमकी, हमारे सब्र से
तेग पर हो जायगा तहरीर 'वन्दे मातरम्'।

किस तरह भूलूँ इसे मैं जबकि किस्मत मे मेरी,
लिख चुका है हाकिमे-तहरीर 'वन्दे मातरम्'।

फ़िक्र क्या जल्लाद ने गर क़त्ल पर बाँधी कमर
रोक देगा दूर से शम्शीर 'वन्दे मातरम्'।

जुल्म से गर कर दिया खामोश मुझको, देखना
बोल उट्ठेगी मेरी तस्वीर— 'वन्दे मातरम्'।

सरजमी इंग्लैण्ड की हिल जाएगी दो रोज में
गर दिखाएगी कभी तासीर 'वन्दे मातरम्'।

सन्तरी भी मुज्तरिब थे, जबकि 'बिस्मिल' झूमकर
बोलती थी जेल मे जजीर—'वन्दे मातरम्!'

ज़ुबाँ तलवार की

बददुआ ज़ालिम न ले तू बेकसो-लाचार की,
तुझको खा जाएँगी आहे बेकसो-गमख़्वार की।

हमसे ज़ाँबाजो को करना कत्ल क्या कुछ खेल है,
धार खुंडा पड़ गई ज़ालिम तेरी तलवार की।

दम तेरा भरते थे जो अब वो भी बरगश्ता हुए,
खुल गई सारी हकीक़त जब से तेरे प्यार की।

हर किसी नाकस की गरदन पर इसे रखना न था,
अपने हाथो खोई इज़्ज़त तुमने खुद तलवार की।

बेकसों के ख़ून में रँगना इसे अच्छा नही,
रोज़े-महशर ख़ून उगलेगी ज़ुबाँ तलवार की।

कर रिहा पीछा छुडा लो वरना फिर पछताओगे,
खैर पड़ जाएगी तुमको माँगनी फिर जान की!

हाथापाई और अमानत मे ख़यानत गर रही,
एकदम मिट जाएगी सब आबरू सरकार की।

फिर तुम्हें 'बिस्मिल' सिखाता कौन ये ज़ाँबाजियाँ,
कुछ हमारी मेहरबानी कुछ तेरी तलवार की।

क्या चाहते हैं?

बताएँ तुम्हे हम कि क्या चाहते है?
ग़ुलामी से होना रिहा चाहते है।

फ़कत इस सजा के सजावार है हम,
कि दर्दे-वतन की दवा चाहते हैं।

बुरा चाहते है जो हम बेकसो का,
हम उनका भी दिल से भला चाहते है।

गरीबो को तेरा ही बस आसरा है,
निगाहे - करम या खुदा! चाहते हैं।

इस उजडे हुए गुलशने-हिंद को फिर,
हरा और फूला - फला चाहते है।

घड़ा पाप का ग़ालिबन् भर चुका है,
जमाने. से ज़ालिम मिटा चाहते है।

वतन पर दिलो - जान क़ुर्बान करके,
जो मर कर भी आबे-वफा चाहते हैं।

शहीदों के ख़ूँ का असर

शहीदो के खूँ का असर देख लेना,
मिटा देगे ज़ालिम का घर देख लेना।

किसी के इशारे के हम मुंतजिर है,
बहा देगे खूँ की नहर देख लेना।

झुका देंगे गर्दन को हम ज़ेरे-खजर,
खुशी से कटा देगे सर देख लेना।

जो खुदगर्ज गोली चलाएँगे हम पर,
तो क़दमो मे उनके ही सर देख लेना।

जो नक़्श हमने खींचा है खूने-जिगर से,
वो होगा कभी बारवर देख लेना।

किनारे पे आए भँवर से ये कश्ती,
वो आएगी इक दिन लहर देख लेना।

बलाएँ ये जाएँगी खुद सर-निगूँ हो,
नही होगी इनकी गुजर देख लेना।

ऐ 'बिस्मिल' हुआ हिंद आज़ाद अपना,
छपेगी ये इक दिन ख़बर देख लेना।

सदा-ए-नफ़स

दुश्मन के आगे सर ये झुकाया न जाएगा,
बारे-अलम अब और उठाया न जाएगा।

अब इससे ज़्यादा और सितम क्या करेंगे वो,
अब इससे ज्यादा उनसे सताया न जाएगा।

ज़ुल्मो-सितम से तंग न आयेंगे हम कभी,
हमसे सरे - नियाज़ झुकाया न जाएगा

हम ज़िन्दगी से रूठकर बैठे हैं जेल मे,
अब ज़िन्दगी से हमको मनाया न जाएगा।

यारो ! है अब भी वक़्त हमे देखभाल लो,
फिर कुछ पता हमारा लगाया न जाएगा।

हमने जो लगाई है आग इन्क़िलाब की,
उस आग को किसी से बुझाया न जाएगा।

कहते हैं अलविदा अब हम अपने जहान को,
जाकर खुदा के घर से तो आया न जाएगा।

अहले वतन अगरचे हमें भूल जाएँगे,
अहले-वतन को हमसे भुलाया न जाएगा।

यह सच है मौत हमको मिटा देगी एक दिन,
लेकिन हमारा नाम मिटाया न जाएगा।

आजाद हम करा न सके अपने मुल्क को,
'बिस्मिल' यह मुँह खुदा को दिखाया न जाएगा।

हिन्दुस्तानी बच्चों का गीत

सरो पे शौक से कोहे - अलम उठाएँगे।
पडेगे आग में, माता से लौ लगाएँगे॥

हजारो सख्तियाँ झेलेंगे देश की ख़ातिर,
वतन के नाम पर गर्दन भी हम कटाएँगे।

हम अपने हाथो से काटेंगे देश का बन्धन,
सपूत बनके जमाने मे नाम पाएँगे॥

मिटेगे शम्‌ए - मुहब्बत पे मिस्ले-परवाना,
जुबाँ पे हर्फ़ - शिकायत मगर न लाएँगे।

पडेंगे क़ौम के दर पे रटेगे आजादी,
फकीर बनके यहाँ धूनियाँ रमाएँगे॥

स्फुट रचनाएँ

जो कुछ किया सो 'तू' किया, मै कुछ कीन्हा नॉहि।
जहॉ कहीं कुछ मै किया, 'तू' ही था मुझ मॉहि ॥

थाती यह तन पाए के, क्यो करता है नेह।
मुख उज्ज्वल कर सौप दे, 'उस' को उसकी देह ॥

खे लेने दो नाव आज
कल कर पतवार गहे न गहे
जीवन सरिता मे शायद फिर
ऐसी धार बहे न बहे ॥
अतिम सॉस निकलने तक
है 'बिस्मिल' की अभिलाष यही
तेरा वैभव अमर रहे मॉ।
हम दिन चार रहे न रहें ॥

गोरखपुर जेल से अन्तिम पत्र

(फॉसी से एक घटा पूर्व)

देश - दृष्टि मे माता के चरणो का मै अनुरागी था,
देश - द्रोहियों के विचार से मै केवल दुर्भागी था।

माता पर मरने वालो की नजरो मे मै त्यागी था,
निरकुशो के लिए अगर मै कुछ था तो बस बागी था।

माता के बन्धन तोड़ूँगा रखता था नित्य ध्यान यही,
मातृमान पर मर जाऊँगा था मुझको अभिमान यही।

चाह रहा था जीवन मे मै फॉसी का वरदान यही,
जनमूँगा फिर भी भारत में होता उर मे मान यही।

देश - प्रेम के मतवाले कब झुके फॉसियो के भय से,
कौन शक्तियॉ हटा सकी है उन वीरों को निश्चय से।

हो जाता है शक्ति-हीन जब शासन अतिशय अविनय से,
लखता है जग बलिदानों की पूर्ण विजय तब विस्मय से।

वीर शहीदों के शोणित से राष्ट्रमहल निर्माण हुए,
उत्पीडन बन राजकुलो के भाग्य - दीप निष्प्राण हुए।

माता के चरणो पर अर्पित जिन देशों के प्राण हुए,
रहे न पल भर पराधीन फिर प्राप्त उन्हें कल्याण हुए।

'बिस्मिल' की स्वरचित कविता

जाता हूँ दो मातृ ! यही वर, भारत मे फिर
एक नही, तेरी स्वतन्त्रता पर जननी ! सौ

(फॉसी के फन्दे पर)

मालिक ! तेरी रजा रहे और तू ही तू रहे ।
बाकी न मै रहूँ न मेरी आरज़ू रहे ॥
जब तक कि तन मे जान रगो मे लहू रहे ।
तेरा ही जिक्र हो औ' तेरी जुस्तजू रहे ॥

"I wish the downfall of British Empire!"



चन्द्रशेखर आज़ाद

जज ने उन से पूछा ·

"तुम्हारा नाम क्या है ?"

"आजाद"—बालक चन्द्रशेखर ने निर्भीकतापूर्वक कहा।

"पिता का नाम ?"

"स्वाधीन," आजाद ने तन कर कहा।

"तुम्हारा घर कहाँ है ?"

"जेलखाना" आजाद ने गर्जना के साथ कहा।

"दुश्मनों की गोलियों का हम सामना करेंगे।
आज़ाद ही रहे हैं, आजाद ही रहेंगे।"

उपेक्षा की धुध मे पड़ा चन्द्रशेखर आजाद का जन्मस्थल

ग्राम बदरका

लखनऊ से कानपुर को जाने वाले राजमार्ग पर जाजमऊ के गगा पुल के एक-दो किलोमीटर पहले बाई तरफ एक सडक जाती है, एक पत्थर पर लिखा है—चन्द्रशेखर आजाद मार्ग, बदरका। मै इसी जगह बस से उतर पडता हूँ। कानपुर की ओर से एक बस आती है और बदरका की ओर मुडकर खडी हो जाती है। मै बस मे बैठ जाता हूँ। कडक्टर सीटी बजाता है। ड्राइवर बस चलाने की कोशिश करता है, लेकिन—घुर्र-घुर्र-घो-घो करके बस नही चलती। ड्राइवर दो डिब्बे पानी डालता है, फिर प्रयत्न करता है, किंतु इजन से वही—घुर्र-घुर्र-घो-घो-की आवाज। ड्राइवर कुछ खीझ कर अपनी सीट से कूद पड़ता है और तैश मे आकर कहता है—"उतरिए आप लोग, धक्का लगाइए।"

दो-चार महिलाएँ और बच्चे बस में बैठे रहते है, अन्य लोग धक्का परेड के लिए तैयार होते है। मै भी धोती को खोसकर धक्का-योजना मे सम्मिलित हो जाता हूँ। आगे चढ़ाई की वजह से बस को ढकेलने मे लोग काफी बूत लगा रहे है। अचानक धुआँ निकलता है और बस घरर-घरर की आवाज करके स्टार्ट हो जाती है। ड्राइवर के चेहरे पर हल्की मुस्कान दौड जाती है। वह सामने लगे आइने मे अपना चेहरा देखता है, मूँछ ऐठता है और एक बीडी सुलगाकर मुँह मे खोस लेता है। कडक्टर जेब मे पान मसाले की पुडिया निकाल कर उसे दॉतों से फाडता है और मसाले को मुँह मे झोक लेता है। वह बिना टिकट दिए ही वसूली कर रहा है।

"आप कहाँ जाएँगे?" मैं 'बदरका' कहकर उसे रुपए दे देता हूँ। वह

टिकट बिना दिए ही दूसरी सवारी की ओर मुडने लगता है, तो मै कहता हूँ—"टिकट तो दे दो।"

"नए आए है क्या इस रूट पर? टिकट-विकट का झमेला यहाँ नही चलता, यह उन्नाव है।"

मै समझ जाता हूँ कि बैसवारा क्षेत्र की हेकडी मशहूर है, इस से भिडना ठीक नही है।

उत्तर प्रदेश की पी डब्लू डी की खन्दको वाली सडक पर चलने वाली यह खडबडिया बस भी उत्तर प्रदेश परिवहन निगम की ही है। बस का अजर-पजर सब ढीला है। खडबड-खडबड करती हुई बस बदरका की ओर रेगती चल रही है।

बसत का मौसम है। फागुनी बयार हौले-हौले चल रही है। सडक के दोनो ओर बबूल अपने कॉटो की नोकों को झलका रहे है। तुख्मी आम के बागो मे बौर लदे है। डाले धरती छूने की होड मे मगन है। खेतो मे सरसो पक गई है, गेहूँ और जो की बालियो मे दाने भर गए है, चने की बोड्रियाँ भी पकने लगी है। अरहर के खेतो मे झुनझुनियाँ जैसी फलियाँ गुच्छो में लटक रही है। प्रकृति मे चारो ओर प्रसन्नता झलक रही है।

एक झटके के साथ बस रुकती है। कुछ सवारियाँ उतरती है और कुछ चढती है। यह आटावथर गॉव है। बस ड्राइवर फिर बीडी सुलगाकर आइने मे चेहरा देखकर मूँछों को सँवारता है और बस स्टार्ट करता है। थोडी ही देर मे ग्राम बदरका आ जाता है। मै बस से उतर पडता हूँ।

बदरका! चन्द्रशेखर आज़ाद का जन्मस्थान, क्रातिवीर आजाद का क्रीडास्थल! मै चारो ओर नजर दौडाता हूँ औरएक फुटपाथी दर्जी से चन्द्रशेखर आजाद के स्मारक का रास्ता पूछता हूँ। वह कहता है—"अरे भाई साहब! बस के सामने ही तो है, वो देखो—" मै शहीदे-वतन के स्मारक की ओर चल देता हूँ।

चारो ओर से मजबूत चहारदीवारी और लोहे के बडे गेट को देखकर मन प्रसन्न होता है। अन्दर बहुत बडा परिसर है। सगमरमर की बहुत सुदर प्रतिमा लगी है। प्रतिमा का रख-रखाव अच्छा है। इसी परिसर की फुलवाडी मे एक स्तम्भ भी लगा है जिसमे सिकन्दरपुर-करन ब्लाक के स्वतत्रता सेनानियो के नाम अकित है। स्तम्भ के पृष्ठ भाग मे भारतीय सविधान के

कुछ वाक्य भी लिखे है। फुलवारी मे गुलाब, गेदा, गुलाबॉस के फूल खिले है। तुलसी के तमाम पौधे भी अपनी मजरियो के साथ वातावरण को शुद्ध कर रहे है। केले के पौधो मे फलियो की घॉवरे लटक रही है। यहॉ एक हैडपम्प भी लगा है, पानी की टकी भी पास मे है, पर पानी कभी-कभी ही दे पाती है। यहॉ एक अतिथि-गृह और पुस्तकालय भी है।

इस स्मारक क्षेत्र का काम श्री गगाप्रसाद गोडिया देखते है। उन की पत्नी और पुत्री भी उन की मदद करती है। उन्हे स्मारक ट्रस्ट के मत्री डॉ० ब्रजकिशोर शुक्ल ने नियुक्त किया है। पास ही गेहूँ और आलू के दो-तीन खेत है। इन्ही से गोडियाजी अपनी गुजर-बसर करते है। उन की लडकी मालती आलू के ढेर से छोटे-बडे आलू छॉट-छॉट कर अलग कर रही है। मै उस से पूछता हूँ—"ये मूर्ति किस की है ?"

मालती कडकदार आवाज मे कहती है—"यह आजाद जी की है। जो हमारे गॉव के थे और अंग्रेजो को इलाहाबाद मे हरा दिया था। छर्रों से भून डाला था और जब एक छर्रा बचा तो अपने मार लिया। उन्होने कसम खाई थी कि जीते-जी गिरफ्तार नहीं हूँगा, सो निभाया उसे।"

स्वभाव के मजाकिया भगतसिह ने जब राजगुरु के साथ आज़ाद के नेतृत्व मे सहायक पुलिस सुपरिन्टेडेट सैंडरसन को गोलियो से मार गिराया तो मजाक मे उन्होने आज़ाद से कहा—"दल के नेता के रूप में पकड़े जाने पर आप को तो निश्चित रूप से फॉसी होगी। आप के लिए दो रस्सो की जरूरत पडेगी। एक आप के गले के लिए और दूसरा आप के इस भारी-भरकम पेट के लिए।"

उन्हे झिड़ककर आजाद ने कहा—"देख, पुलिस मुझे रस्सी से बॉधकर बॅंदरिया जैसा नाच नचाती फिरे और फिर फॉसी पर टॉग दे, यह मुझे कतई पसद नही। यह तो तुझे मुबारक हो। जब तक यह 'बमतुल बुखारा' (आज़ाद ने अपने पिस्तौल का यही विचित्र नाम रखा था) मेरे हाथ मे है, कोई माई का लाल मुझे जीवित नही पकड़ सकता। उन्होने कहा—

दुश्मन की गोलियो का हम सामना करेगे।
आजाद ही रहे है, आज़ाद ही रहेगे॥

प्रयाग का एलफ्रेड पार्क, 27 जनवरी 1931। आजाद वही क्रांतिकारियो से मत्रणा करने के लिए बैठे है। एक जीप से पुलिस अफसर नाटबावर के

साथ सिपही उतरते हैं।

"तुम्हारा वारट है ?"

पिस्तौल निकालकर आजाद ने कहा—मेरा वारट ये है और खड़े हो गए। उन के चारों ओर से गोलियाँ बरसने लगी। विशेसर सिह ने पीछे की ओर से एक गोली मारी। वह आजाद की पीठ मे लगी।

"हिदुस्तानी कुत्ते ! ले मजा।"—कहकर ऐसी गोली आज़ाद ने मारी कि उस का जबड़ा उड गया।

आजाद गोलियाँ तो चला रहे थे, उन का निशाना भी अचूक था, पर उनकी सारी गोलियाँ खत्म हो गई, उनके पिस्तौल में केवल एक गोली शेष बची।

अब तक आज़ाद का शरीर गोलियो से छलनी हो चुका था। चालीस से अधिक गोलियो ने शरीर को छेद दिया था।

अतिम गोली को उन्होने अपने मस्तक पर मार लिया। अपने ही हाथो से अपना रक्त तिलक करने वाला, ऐसा वीर-बाँकुरा दुनिया के इतिहास मे और कही नही हुआ।

'आज़ाद ही रहे है, आजाद ही रहेगे'—इस प्रण को निभाने वाला उन्नाव की धरती का यह लाल दुनिया के शहीदो का सिरमौर शहीद बन गया। ग्राम बदरका ! तू धन्य है।

यह रील मस्तिष्क मे चल रही है; और अतिशय भावुकता के कारण मै प्रतिमा के सामने बैठकर वहाँ की मिट्टी को मस्तक पर लगा लेता हूँ और एक डिबिया मे भी थोडी सी रख लेता हूँ।

आत्म-बलिदानी की इस जन्मभूमि को कोटिशः नमन।

मै सडक-सडक चला जा रहा हूँ। बाई ओर एक गली गई है, खडजा बिछा है, एक पट्ट लगा है, लिखा है—सीताराम तिवारी मार्ग। प० सीतारामजी आजाद के पिता थे। जब उन का चन्दू (चन्द्रशेखर) आठ वर्ष की उम्र का था तो वे मध्य प्रदेश के अलीपुर राज्य के ग्राम भावरा नौकरी करने चले गए थे, परिवार साथ गया था, किंतु साल मे एक-दो बार गाँव जरूर आते रहते थे।

बदरका की इस सडक के दोनो ओर मिठाई, पान, परचून आदि की दुकाने हैं। एक हलवाई की दुकान मे शकरपाले, बिल्कुल ताजे तैयार हो रहे

है। मै आज कोई चालीस वर्ष बाद शकरपाले खाने जा रहा हूँ। दुकानदार एक दोने मे पचास ग्राम शकरपाले देता है। मै वही खडे-खडे खाता हूँ और तनियाकर एक लोटा पानी पीता हूँ, मुँह पर भी छीटे मारता हूँ और अँगोछे से पोछकर आगे चल देता हूँ।

भेट होती है श्री देवी प्रसाद गुप्त से। वे विचारो से साम्यवादी है। बस की प्रतीक्षा मे तिपाई पर बैठे है। वे बताते है—"अब गॉव उजड रहा है। यही गॉव नही, सभी गॉव उजड रहे है। गॉवो मे जीविकोपार्जन के साधन नही है। खेती मे लागत बहुत है और आमदनी कुछ नही। यहाँ के अधिकांश लोग कानपुर या उन्नाव में नौकरी करते है। कोई-कोई रोज आते-जाते है और ज्यादातर तो वही रहते है। यहॉ पढाई के लिए एक हाई स्कूल तक तो है नही। 'आज़ाद' का जन्मस्थान, आजाद हिदुस्तान मे एक हाईस्कूल के लिए तरस रहा है। जो विधायक या मंत्री है, वे अपने-अपने गॉव के विकास की परवाह करते है। वहाँ तो उन्हे वोट लेने है। किंतु जिन के कारनामों से हम आज़ाद हुए, उन को इस कृतघ्न राष्ट्र ने ऐसा भुला दिया कि क्या कहा जाए?"

यह कहते-कहते वे तैश मे आ जाते है और आक्रोश के स्वर मे कहते है—"यहॉ एक अस्पताल तक नही है। बिजली है, खम्भे लगे है पर कही बल्ब है, कही नही। फिर बिजली आती ही नही। देश को बेच खाया नेताओ ने। जिधर देखो उधर घोटाला! जहॉ देखो वहॉ मार-काट। कोई टेलीफोन हजम किए जा रहा है, कोई दवाओ की धनराशि गटक रहा है, कोई चारा खाए जा रहा है। अजब कहानी हो गई है अपने देश की!

श्री गुप्त मेरे साथ चन्द्रशेखर आज़ाद के पैतृक घर की ओर चल देते है। सडक की एक ओर सेम की फलियो की झालरे लटकी है। यहॉ सब्जी खूब पैदा होती है। सप्ताह मे तीन दिन—इतवार, मंगल और शुक्रवार को प्रातः से ही बाजार चमक जाती है। कानपुर-उन्नाव के व्यापारी खरीदकर ले जाते है। बाजार में कोई चुगी नही लगती।

गुप्तजी एक मजेदार बात बताते है—इस गॉव मे फसलो मे गन्ना और आदमियो मे ठाकुर नही हैं। पहले ही से ऐसा है।

छप्परो वाले मकानो के बीच से गुजरते हुए हम उस स्थल पर आ जाते है, जहॉ आजाद की जननी की प्रतिमा लगी है। यही आज़ाद का पुश्तैनी मकान था। ऊँचाई पर एक छोटा-सा पक्का मंदिर बनाया गया है। लोहे का

फाटक लगा है। अन्दर आजाद की माता जगरानी देवी की प्रतिमा स्थापित है। नीचे लिखा है—"भारतीय स्वतत्रता सग्राम के अजेय योद्धा चन्द्रशेखर आजाद की महिमामयी माँ जगरानी देवी"।

इस स्मारक की दीवारो पर कई प्रेरणाप्रद, राष्ट्रभक्तिपूर्ण वाक्य लिखे है

"आजादी माँगने से नही, वरन् बाहुबल से प्राप्त होती है।"

"वीरभोग्या वसुंधरा।"

"दुश्मन की गोलियो का हम सामना करेगे।
आजाद ही रहे है, आजाद ही रहेगे॥"

यही पर ये वाक्य भी लिखे है

"यह वही पावन स्थल है, जहाँ स्वनामधन्य माता जगरानी देवी की कोख से दिनाक 7 जनवरी 1906 को पिता प० सीतारामजी तिवारी के गृह मे सिह-शावक चन्द्रशेखर आजाद जेसे स्वतत्रता के महान उपासक का जन्म हुआ था।

"इस नरपुगव ने बाल्यावस्था में ही मातृभूमि को ब्रिटिश साम्राज्य की दासता की बेडियों से मुक्त कराने के लिए जो सघर्ष किया, उससे अग्रेजों की हुकूमत का तख्त डगमगा उठा था। आजाद की इस प्रतिज्ञा से—"दुनिया में कोई भी ऐसी शक्ति नही है जो मुझे बंदी बना सके।" गोराशाही के छक्के छूट गए थे। इस प्रतिज्ञा का अत तक निर्वाह करते हुए 27 जनवरी 1931 को प्रयागराज मे उस समय के एलफ्रेड पार्क मे अग्रेजो से गुलामी के विरुद्ध युद्ध करते हुए अपनी ही गोली से शहीद हो गए।"

मै फर्श पर बैठ जाता हूँ। मूर्ति को नमन करते हुए सोचता हूँ

इसी माँ ने अपने वीर पुत्र मे उन गुणो को भरा था, जिनके कारण वह निर्भीक, साहसी और अग्रेजो के अदर कँपकँपी पैदा करने वाला बना। वाराणसी मे सन् 1921 में असहयोग आंदोलन के समय, जब आज़ाद कक्षा चार में पढते थे, उन्हें ब्रिटिश शासन के विरुद्ध नारे लगाने और सिपाही को पत्थर का निशाना बनाने के जुर्म में जज के सामने उपस्थित किया गया तो जज ने उन से पूछा :

"तुम्हारा नाम क्या है?"

"आज़ाद"—बालक चन्द्रशेखर ने निर्भीकतापूर्वक कहा।

"पिता का नाम ?"

"स्वाधीन," आजाद ने तन कर कहा।

"तुम्हारा घर कहाँ है ?"

"जेलखाना" आजाद ने गर्जना के साथ कहा।

जज आश्चर्यचकित हो गया। वह समझ गया, जिस देश मे ऐसे वीर बालक हैं, उसे अधिक दिनो तक गुलाम नही रखा जा सकता।

जज ने बालक चन्द्रशेखर को पद्रह बेतो की सजा सुनाई। उन के शरीर पर बेत लग रहे थे और मुँह से बार-बार निकल रहा था—"भारत माता की जय !", "भारत माता की जय !"

काशी में उसी दिन वीर बालक चन्द्रशेखर का स्वागत-अभिनदन हुआ और वहाँ उन का नाम 'आजाद' हो गया। तभी से चन्द्रशेखर, चन्द्रशेखर आजाद हो गए।

आज़ाद की माता के स्मारक स्थल का रख-रखाव ठीक से नही हो रहा है। महीनों से झाड़ू नही लगी। बकरियो की ढेरो लेडियाँ पडी हुई है। बिजली की फिटिग की लकडी उखड गई है, तार टूट गया है, लटक रहा है।

इसी के पडोस मे बोरा बिछाए एक माताराम कथरी सिल रही है। मैं उन के सामने ठिठक जाता हूँ। वे मेरी ओर देखकर कहती है—"का देखत हो बच्चा ? कथरी तैयार करित हैं, बिछावै खातिर। यह गद्दा, गलीचा तेने नीकि होति है; जाडे मे गर्माती है और गर्मी मे जुडती है।"

मै उन से पूछता हूँ—"माताराम, आपने आजाद की माँ को देखा था ?"

"न लाला, हम नाई दीख, मुलु उइ हियै रहती रहै।"

वहाँ से गाँव मे घूमता-घामता मै वहाँ का वातावरण देख रहा हूँ। एक बालक धनुष-बाण लिए तीर चला रहा है। कुछ औरते कडे पाथ रही है। एक पुराने लखौरी ईट वाले मकान के सामने कई स्त्रियाँ बैठी सामूहिक गीत गा रही है, किसी लडकी का कनछेदन है यहाँ।

गाँव के बीच मे ददइया बाबा का मदिर और बद्रीनाथ बाबा का मदिर बैसवारे की पुरानी सस्कृति को उपस्थित करते हैं।

यही भेट होती है श्री शिवमोहन मिश्र से जो उन्नाव शहर मे रहते है। यहाँ रिश्तेदारी मे आए हुए है। वे आजाद के विषय मे कहते है कि आजाद वर्षा ऋतु मे गगाजी तैरने जाते थे, गगा यहाँ से दो कोस ही तो है। मेरे बाबा

ने उन्हे देखा था। वे आजाद के विषय मे बहुत-सी बाते बताया करते थे। अब तो सब भूल-भाल गया हूँ। यहीं के कवि ने उन के विषय मे कवित्त लिखे है, सुनाता हूँ आपको। यह कहते-कहते वे एक कवित्त सुनाने लगते है। मै उसे नोट करने लगता हूँ। वे कहते है—आप पहले सुन लीजिए फिर लिख लीजिएगा। मै उनकी बात मानकर नोटबुक झोले मे डाल लेता हूँ। जब वे कवित्त सुना लेते है, तब मुझे लिखा देते है। कवित्त यहाँ दे रहा हूँ।

छाँही भी न छूने कभी पाए शत्रु जीवन मे,
नाम सुनते ही तन पीले पड जाते थे।
ठाँय-ठाँय सुन घुट जाता कितनो का दम,
दिग्गजो के हाथ-पैर ढीले पड जाते थे।
ऐसा शक्तिशाली व्यक्ति देखा न सुना गया
दृष्टि पडते ही गोरे नीले पड जाते थे।
एक पल भी जो पड़ जाता सामने शत्रु,
कोट और पैंट दोनो गीले पड जाते थे।

कवित्त लिखकर मैं आगे की ओर चल देता हूँ। एक साइकिल की दुकान पर पुरानी साइकिल की मरम्मत करा रहे है श्री शिरोमणि दयाल शुक्ल। वे बदरका के ही रहने वाले हैं, खेती करते है, किंतु आजाद के परिवार के विषय मे अच्छी जानकारी है उन्हे। वे बताते है कि आज़ाद के चाचा पं० देवकीनदनजी अपने समय के उन्नाव जिले के मशहूर पहलवान थे। एक दिन जब वे कसरत कर रहे थे तो बालक चन्द्रशेखर भी वहाँ पहुँच गया। मात्र 6 वर्ष की आयु मे वह बालक कसरत करने लगा। जब चाचा ने रोका तो कहा—"चाचा, मै आप की तरह ही पहलवान बनूँगा।" हमारे गाँव मे प्रतिवर्ष आज़ाद की याद में दगल लगता है।

साइकिल मरम्मत करने वाले सज्जन उठकर खडे हो जाते हैं और हाथो मे लगा काला-काला चीकट पैजामे मे पोछते जाते है और मुझे सबोधित करके कहते है—भाई साहब! आज़ाद जैसे बहादुर के गाँव को देख लिया आपने? सरकार ने यहाँ एक अस्पताल तक नही बनवाया।" मै उन की बात पर बिना कोई टिप्पणी किए जमीन ताकता हुआ चल देता हूँ।

थोड़ी दूर बढने पर एक नल के पास पानी पीने की इच्छा से जाता हूँ। टोटी को कई बार उमेठता हूँ, पर एक बूँद पानी नही टपकता। हरे-हरे बूट हाथ

मे लिए, चने खाते हुए एक किसान, जो खेतो से आ रहा है, ने कहा—"अरे, भैया ! कुआँ सब सूख गए। बूँद-बूँद पानी का मनई तरसत है।"

जी करता है आजाद भारत की इस व्यवस्था को माचिस लगा दूँ। देश स्वतत्र हुए पसाच वर्ष हो गए और हम लोगो को पीने का पानी तक मुहैया न करा सके। लगता है अब देश को एक नवीन क्राति की आवश्यकता है। खूनी क्राति नही, कम्युनिस्टो की क्राति नही, विचारो की क्राति; जिससे सत्ता मे बैठे घपला करने वाले लोगो को जेल के सीखचो के अन्दर डाला जाए और सत्ता ईमानदार, चरित्रवान और सच्चे राष्ट्रभक्तो के हाथ में आ जाए। एक बार फिर कहना पडेगा—"सिहासन खाली करो कि जनता आती है।"

इस गॉव के वर्तमान प्रधान श्री गया प्रसाद मिश्र से भेट करना चाहता हूँ। किंतु वे गॉव मे नही है, उन्नाव गए है। अब मै बदरका का ऐतिहासिक मुगलकालीन महल देखने जाता हूँ। जहॉगीर के जमाने मे उन के एक मंत्री ने यह महल बनवाया था। वे इसी गॉव के निवासी थे। महल अब तो खॅडहर हो रहा है, किंतु छह-छह फुट चौडी लखौरी ईटो की दीवाले आज भी बहुत मजबूत हैं। अदर एक भाग ठीक है। उस में एक परिवार रह रहा है। इस महल का लकडी का उस जमाने का बना गेट इतना ऊँचा और चौडा है कि हाथी आसानी से चला जाता है।

अपने देश मे पुरातत्त्व विभाग भी है। काश ! उस की दृष्टि भी कभी इधर पड जाती ?

महल के अदर जाकर उसे देखकर लौटता हूँ तो सड़क पर ग्राम के पूर्व प्रधान और 'चन्द्रशेखर आज़ाद ट्रस्ट' के मत्री डॉ० बृजकिशोर शुक्ल खादी की धोती, कुर्ता, सदरी पहने मिल जाते है। वे मुझे अपने साथ अपने घर ले जाते है। स्वभाव से विनम्र डॉ० शुक्ल का घर बीच गॉव मे है। दरवाजे पर तुलसी के तमाम पौधे लगे है। घर तो गॉव का जैसा ही है किंतु स्वच्छता शहरातू मकान जैसी है।

डॉ० शुक्ल बदरका ग्राम की उपेक्षा की बात चलाते है। किंतु जब मै उन से यह कहता हूँ कि आप तो इस गॉव के कई वर्ष प्रधान रहे और दैवयोग से आप के ट्रस्ट मे प्रदेश के भारी-भरकम कांग्रेसी नेता प्रमुख पदो पर है और कांग्रेस का ही देश-प्रदेश मे लबे समय तक शासन रहा तो फिर गॉव की उपेक्षा क्यो हुई ? इस बात का वे कोई उत्तर नही देते है किंतु आजाद के जन्मदिन

7 जनवरी को लगनेवाले मेले का जिक्र करते हुए वे विस्तार मे चले जाते है। वे कहते है—यहाँ क्रातिकारियो मे योगेशचन्द्र चटर्जी, रामदुलारे त्रिवेदी, महावीर प्रसाद पाडे, राजकुमार सिन्हा, रामकृष्ण खत्री आदि आ चुके है। और नेताओ मे श्रीमती इन्दिरा गाधी, उमाशकर दीक्षित, लक्ष्मीरमण आचार्य, विद्याचरण शुक्ल आदि भी पधारे है। मै फिर अपना चुभता हुआ सवाल पूछ देता हूँ—तो फिर इस गॉव मे एक अस्पताल तक क्यो नही बन पाया ? वे फिर मौन साध लेते है। मै ज्यादा कुरेदना अच्छा नहीं समझता।

इतना तो मुझे पहले ही एक महाशय बता चुके थे कि यहाँ चन्द्रशेखर स्मारक के नाम पर दो लोग अपनी-अपनी दुकाने अलग-अलग खोले है। एक श्री विश्वनाथ पाडे और एक डॉ० शुक्ल। विश्वनाथजी ने 'चन्द्रशेखर आजाद स्मारक सोसाइटी' की स्थापना की थी तो डॉ० शुक्ल ने ट्रस्ट की। अपनी-अपनी श्रद्धा, अपने-अपने सम्पर्क, अपने-अपने काम। सोसाइटी तो समाप्त हो गई, ट्रस्ट चल रहा है। भाई जिस दुकान का माल अच्छा होता है, उसकी 'गुडविल' चारों ओर फैल जाती है। यह बात तो माननी ही पड़ती है कि डॉ० शुक्ल की देख-रेख मे अन्य स्थानों की अपेक्षा आजाद स्मृति-स्थल अच्छी दशा मे है।

इसी बीच शुक्लजी की धर्मपत्नी, जो शुद्ध बैसवारी कान्यकुब्जो ठाठ की सुगृहस्थ महिला है, पूडी और रसेदार सब्जी ले आती है, अरे हॉ, अचार भी साथ मे है। भूख लगी ही है, छककर खाता हूँ। बाद मे वे चाय भी पिलाती है।

पेटपूजा के बाद बाते फिर शुरू हो जाती है। डॉ० शुक्ल बताते है—आज़ाद के दल में जो लोग थे, वे बडे कलेजे वाले थे। काशी के विद्वान् आचार्य विश्वनाथ मिश्रजी उन के दल में थे। आजाद उन के यहाँ ठहरते थे। कानपुर में वे बाबू प्यारे लाल अग्रवाल के यहाँ रात-बिरात आकर ठहरा करते थे। कानपुर से ही एक बार अपने जन्मदिन पर वे गॉव आए थे।

आज़ाद के विषय मे कानपुर के अग्रवाल परिवार की श्रीमती तारा अग्रवाल बताया करती थीं कि आजाद भैया को गेहूँ-चना के मिले हुए आटे की रोटियॉ और आम का अचार बहुत अच्छा लगता था। उन्हे रबडी बहुत पसद थी।

डॉ० शुक्ल से विदा लेकर मै चल देता हूँ। कई मकानो के बाद एक चारपाई पर धोती और बनियाइन पहने, माथे पर गोल-गोल चदन लगाए और

चोटी मे कई गॉठे बॉधे एक महाशय बैठे दोहरा काट रहे है। सरौते से सुपारी, कत्था काट चुके है, अब मुलेठी काट रहे है। सब को मिलाकर मुँह मे झोक लेते है। बाद मे थोडा चूना चाट रहे है। मै उन के करीब से निकल रहा हूँ। अब वे अपने दोहरा की अंतिम चीज यानी लौग मुँह मे डाल रहे है। मुँह मे दोहरा भरे ही वे कहते है—"क्या मर्दमशुमारी करने आए है? हम तो कानपुर मे रहते हैं, परिवार मे आठ आदमी है। लिख लो।"

मै उन को बताता हूँ—"आज़ाद जी के विषय मे कुछ जानकारी लेने आया हूँ, मर्दमशुमारी करने नही।"

उन का पारा सातवे आसमान पर पहुँच जाता है, प्रतीत होता है आज गहरी भॉग छनी है। वे कहते है—"क्या धटा है बदरका मे? उनके नाम पर लूट-खसोट है। गॉव मे गुडई हो रही है, कोई देखने वाला नही है। अपना देश अब चोरो-डकैतो के हाथ मे है। क्या "

मै उनकी बाते आगे नही सुनता हूँ। जानता हूँ भग की तरग मे ये पूरा लेक्चर दे डालेंगे। कितु सोचने जरूर लगता हूँ .

"स्वतत्रता के बाद जिस लोकतत्र को हमने स्वीकारा, आज हमारे यहॉ वह लोकतत्र ही नही बचा, और चाहे जो कुछ बचा हो। जनता को लोकतंत्र ने क्या यही दिया कि जनता लोकतत्र को रात-दिन कोसे। हमने जिन लोक-पूज्य, लोकवद्य, लोकमान्य अमर क्रातिवीर शहीदो के कारण स्वतत्रता प्राप्त की, उन का जन्म-स्थान उपेक्षा के धुंध मे पडे कराह रहे हैं।"

मेरे पैर जमीन पर चल रहे है; कितु मस्तिष्क अतीत की ओर दौडा जा रहा है। कोई तीस वर्ष पूर्व कानपुर के डी ए. वी कालेज के आचार्य मुशी राम शर्मा 'सोम' ने आजाद के विषय के कुछ सस्मरण सुनाए थे। आजाद उन से यदा-कदा मिला करते थे। जिस दिन क्रातिवीर सालिगराम को परमट की चढाई वाली सड़क पर पुलिस ने गोली से मार दिया था, उस दिन भी आजाद वहॉ गए थे। सोमजी कहा करते थे—"आजाद के हाथी जैसे शरीर मे सिह जैसी फुर्ती थी। उन की शहादत के बाद देश ने, हम सब ने उन्हें वह श्रद्धाजलि नही दी, जिसके वे अधिकारी थे। उनके जन्म-स्थान को स्वतंत्रता का महाकुभ मानकर वहॉ ऐसी संस्थाएँ बननी चाहिए थी, जिससे भावी पीढियो को प्रेरणा मिलती, उन में राष्ट्र के प्रति त्यागभाव उत्पन्न होता। स्वतत्रता के बाद राष्ट्र के नेताओ ने राजनीति को साध्य मान लिया है, जब कि

वह साधन मात्र है।"

एक हाथ में एक लबी लौकी और पत्तों सहित कई मूली पकडे और दूसरे हाथ मे सोंटा लिए नगे पैर एक वृद्ध किसान भाई खेतों की ओर से लौट रहे है। मै उन से पूछता हूँ।

"ये आजाद का गॉव है ना?"

"हॉ भैया! मुलौ हम सब तौ आजाद नही है। पुलिस, गुडा, लफगा—सब सतावा करत हैं। नेता लोग मालपुआ छान रहे है, हम को तो दोनो जून रूखी-सूखी रोटी भी नही मिलती। कैसी आज़ादी ¨च, च, च?" यह कहकर वह चल देता है।

उधर से एक छोकरा बीडी का धुऑ फकाफक उडाते हुए चला आ रहा है—"अरे, यह बुढऊ बहिरे हैं, सुनते नही।" मै आगे बढ जाता हूँ।

घूमते-घामते एक भव्य विश्वास मंदिर के पास पहुँचता हूँ। कोई छह-सात फुट ऊँचे बडे चबूतरे पर वह मंदिर प्राचीन वास्तुकला का सुदर, नमूना हैं। केवल ईट और चूने से डाट पर बना हुआ यह मंदिर कोई दो-ढाई सौ वर्ष पुराना है। आज इस के निर्माण मे पचीसो लाख रुपया खर्च होगा, किंतु यह मंदिर इतना उपेक्षित रहता है कि धीरे-धीरे गिर जाएगा। कई जगह से दीवाले चटक रही है। ऊपर का कलश चोर चुरा ले गए। गॉव के लोगो को भी इस की कोई चिता नही है। वे कर ही क्या सकते है? उन्हे अपनी पेट-पूजा के ही लाले पडे रहते है। सरकारी अधिकारियो को इस से कुछ लेना-देना नहीं है। अपने मुल्क मे राष्ट्रीयता की भावना और राष्ट्रीय चरित्र का विकास नही हो पाया। वर्षो गुलाम रहा यह मुल्क गुलामी की मानसिकता मे आज भी जी रहा है।

दिल्ली मे एक सस्था है इन्टैक। सुना है कि वह प्राचीन मदिरो, भवनो आदि को सरक्षण देती है, देखिए उसे सूचना दूँगा, शायद कुछ हो जाए क्यो कि पुरातत्त्व विभाग तो कुछ करने को रहा! उस के पास साधन है, धन है किंतु अधिकारियो को ग्रामीण अचलो की धरोहर के सरक्षण की कोई रुचि नही है। अपने गॉववाले इस देश मे ग्रामीण क्षेत्रो मे सैकडो प्राचीन मदिर लावारिस पडे हैं।

बदरका, चन्द्रशेखर आज़ाद का जन्मस्थान देखकर मै किसानों के इस गॉव से विदा लेता हूँ। बस पर बैठ जाता हूँ और गभीर सोच में डूब जाता हूँ।

"क्या शहीदो के गॉवों, जन्मस्थानो आदि के प्रति शासन की कोई जिम्मेदारी नही है? वतन की आजादी के लिए अपना जीवन कुर्बान करने वाले वन्दनीय शहीदों के प्रति ऐसा उपेक्षा का भाव रखने वाली कौम दुनिया मे अपना सिर ऊँचा करके नही चल सकती। बदरका एक गॉव मात्र नही है, बदरका एक महातीर्थ-स्थल है। हजारो तीर्थों से भी अधिक पवित्र यह वह महातीर्थ है, जहॉ की रज का कण-कण वन्दनीय है, जहॉ की इच-इच धरती मे 'आजाद ही रहे है, आज़ाद ही रहेगे' की अनुगूँज आज भी सुनाई देती है।

परिशिष्ट-2

- आज़ाद को समर्पित कुछ कविताएँ

आज़ाद हिंद खेले होली

तरु छाँह खड़े मन मे उमंग,
थे अरुण नयन कुछ अजब ढंग।
इकले झूमे नहि कोई सग,
लख तेज फिरगी हुए दग।
निज देश जाति की चढी भग,
नस नस मे आजादी तरंग।
मच रहा खूब घनघोर जग,
बरसता बाग में लाल रग।
चहुँ ओर दुश्मनो की होली,
आजाद हिद खेले होली।
तरु ओट बचाकर कठिन वार,
अरि दल पर करते थे प्रहार।
थे खड़े सिपाही बेशुमार,
आ रही चली मोटरे कार।
टिड्डी दल की सेना अपार,
छाया नभ मे था अन्धकार।
बाएँ कर मूँछो की सभार,
दे घड़ी कलाई में बहार।
दाएँ कर छूट रही गोली,
आज़ाद हिद खेले होली।
नभ मे घन भरते सिसकारी,
चल रही हवा बारी-बारी।

उड धूलि भीर के अनुहारी,
छा रही देश मे भयकारी।
आतक प्रजा मे था भारी,
कानून लगा था सरकारी।
हो गई बंद सडके खोली,
आजाद हिद खेले होली।

नहि अफसर की कुछ गले दाल,
भौहे सिकुडी चमकता भाल।
बन गया शत्रु का विषम काल,
हो गई गरम पिस्तौल नाल।
चमचमा रही थी लाल-लाल,
बच रहा बीरवर बाल-बाल।
सुर नर मुनि तक बोले ! कमाल,
है धन्य - धन्य भारत का लाल।
लग रही बदन भर मे रोली,
आज़ाद हिद खेले होली।

—काका बैसवारी

के

आज़ाद खड़े अब ज़िंदा हैं

तिहत्तर कै जिनकी वर्ष गाठि का लाग बदरका मा मेला,
म्वाछन पर फ्यारैं ताव खडे यहि पावन पूज्य क्यार रेला।
खोपरी उधारि पहिरे माला पिस्तौल गरे मा डारे हैं,
उई ई ऑही आजाद जउन आजादी के मतवारे हैं।
बरबादी का जिन मेटि-मेटि आजादी हमका दई डारेनि,
भारत के दुश्मन का इनहिन छोटे मा खेदि-खेदि मारेनि।
यह अमर शहीदन की धरती घर घर मा अब पूजी जाई,
सब जन खूब खेली खाई अरै याकै सुरमा गाना गाई।
उनहिन की दाया माया ते सब घूमैं आज करिन्दा हैं,
हम दीख बदरका माँ आजाद खडे अब जिदा हैं।

—घूरु प्रसाद (कुसुम्भी),

नरकेशरी 'आज़ाद'

लेखनी नही थकी है, लिखते शहीद यश गाथा,
उनके पावन चरणो पर झुकता श्रद्धा से माथा।
उन शोणित दाताओ मे आजाद एक नर वर था,
सच्चा स्वदेश अनुरागी, बल वीर्य शौर्य सागर था॥
जिसने अपने कौशल से शासन को सदा नचाया,
आजाद रहा जीवन-भर पड सकी न अरि की छाया।
वह रगभूमि कवियो की वह अमर शहीदो का थल,
जगविदित बैसवारा है उन्नाव मध्य भू अचल॥
महिमा गौरव से गर्वित वह ग्राम बदरका न्यारा,
नरनाहर देकर जिसने जननी का भाग्य सॅवारा।
थी धन्य - धन्य वह माता जगरानी थी जगरानी,
श्री सीताराम पिता की गृह लक्ष्मी शोभा सानी॥
आतरिक वेदना उनकी लेखनी नही लिख सकती,
सुचि भूमि बदरका की बस थी व्याकुल बिकल बिलखती।
चौदह - पंद्रह की वय में वह बदी गया बनाया,
क्रोधित शासन ने उसको राज्यद्रोही ठहराया॥
क्या नाम पुत्र किसका तू घर कहॉ काम क्या करता,
कारापति के प्रश्नों पर वह बोला हॅसता-हॅसता।
आज़ाद नाम है मेरा, जननी मेरी आज़ादी,
घर यही जेलखाना है पेशा शासन-बरबादी॥
सुन उत्तर अधिकारी ने जड दिये दो थप्पड,
फिर बेत पीठ पर उसकी पडने लग गयी सडासड।

चमडी थी उधड रही पर उफ् करता था न विचारा,
प्रत्येक चोट का उत्तर था 'इन्क़लाव का नारा।'
पर हाय भाग्य के आगे कोई भी क्या कर सकता,
इसका कुचक्र जब चलता तब बनता खेल बिगडता।
भावी कब किसने देखी किसके टाले टल सकती,
विधि का विधान ही ऐसा, होनी होकर के रहती॥
जाने किस राष्ट्रविघाती सठ ने लालच मे आकर,
वे कहॉ कौन-सी स्थिति मे दी खबर पुलिस मे जाकर।
रुक गयी कार आ सम्मुख बैठे थे वीर जहॉ पर,
हो सजग तुरत दोनो ने कर मे ले लिया रिवाल्वर॥
दी चला नाटबावर ने गोली तुरत शेखर पर,
गोली से ही गोली का मिल गया उसे प्रतिउत्तर।
शेखर को कितु अचानक आ लगी जॉघ मे गोली,
कह उठा खेलनी होगी अब मुझे रक्त की होली॥
जामुन तरु के पीछे हो वह निज को रहा बचाता,
ले आड उसी तरुवर की वह गोली रहा चलाता।
लुकता - छिपता झाडी मे आ गया तभी विशेश्वर,
ली ताक निशाना उसने छोडी गोली शेखर पर॥
गोली तुरंत शेखर की उसके जवाब मे छुटी
उड गया दुष्ट का जबडा यो किस्मत उसकी फूटी।
थी शेष एक ही उसकी बस रण निर्णायक गोली,
ली खेल उसी से उसने अपने प्राणों की होली।
कर अपना आप सफाया उसने प्रण खूब निभाया,
जीते - जी वह नरनाहर शासन के हाथ न आया॥

—जंगबहादुर सिंह

'आज़ाद चन्द्रशेखर'

स्वातत्र्य समर के सेनापति, निर्भय सेनानी को प्रणाम
जिसको दुश्मन छू तक न सके ऐसे बलिदानी को प्रणाम;
जो टूट गए पर झुके नही, है जिनका नाम अमर जग मे—
'आज़ाद चन्द्रशेखर' की जय, जनपद के पानी को प्रणाम ॥

थी आयु अभी सोलह की ही, तब वह काशी मे पढता था
वह देशभक्त अपने मन मे, मनमाने सपने गढता था,
बापू के सत्याग्रहियों को ठोकरें लगाई जाती थीं,
सीधे-सादे लोगो पर जब लाठियाँ चलाई जाती थीं ॥

ऐसा ही किसी जगह काशी मे आया कोई मौका था,
जब बूटों की ठोकरें देख आज़ाद अचानक चौका था,
वह रोक नही पाया खुद को, बस एकत्र सिपाही को पटका,
वह दूर गिरा जाकर फौरन दे दिया दूसरे को झटका ॥

थे कई सिपाही दौडे वह एक अकेला काफी था,
हो गई खूब धर-पकड और लग गया झमेला काफी था,
जैसे-तैसे काबू पाकर वह उसे अदालत मे लाए,
तब मजिस्ट्रेट ने भी उससे कुछ खरे-खरे उत्तर पाए ॥

आजाद नाम है लेकिन मै रहता हूँ कारागारो मे,
मेरी आवाज गूँजती है, बस आज़ादी के नारो मे,
मेरे इन नारो को सुनकर भारत की जनता जागेगी,
अब वह दिन दूर नही है, जब बेशर्म गुलामी भागेगी ॥

ये खरी-खरी बातें सुनकर था मजिस्ट्रेट तिलमिला गया,
पद्रह कोड़े की सजा सुना, मन ही मन झल्ला गया,

के

हर कोड़े पर आज़ाद वीर माता का वदन करता था,
हो गया लहू से था लथपथ फिर भी वह आह न भरता था ॥
पद्रह कोडो का दड उसे ऐसा कुछ याद हो गया था,
अब नही चद्रशेखर था वह, वह तो आजाद हो गया था,
पढना-लिखना सब छूट गया लग गयी लगन आज़ादी मे,
देखा कुछ चलती नही चाल, सत्याग्रह की या खादी मे ॥
चौरी - चोरा की हत्या से बापू ने सत्याग्रह छोडा,
तब अपना सैन्य सगठन कर, उससे कुछ नूतन क्रम जोडा,
सुखदेव, भगतसिह, राजगुरु, बटुकेश्वर को भी साथ लिया,
जो भी आगे बढकर आया हाथो में उसका हाथ लिया ॥
चेतना एक जग गयी नयी भटके उन युवक अनाथो मे,
बगाल जुडा, पंजाब जुडा, उत्तर प्रदेश के हाथो मे,
सेनापति बने चन्द्रशेखर जो 'पडित जी' कहलाते थे,
उनके निर्देशो पर साथी अपना कर्त्तव्य निभाते थे ॥
काकोरी मे गाडी लूटी लुट गया खजाना सरकारी,
बिस्मिल, अशफ़ाक, लाहिडी औ' रोशनसिह की आयी बारी,
ये सब हो गए शहीद मगर दल नही टूटने वाला था,
वह एक सूत्र मे बॉध रहा 'आजाद' वीर रखवाला था ॥
शासन ने उन्हे पकडने के कितने उपाय कर डाले थे,
थे उन पर अनगिन पुरस्कार, पर किसको मिलनेवाले थे,
वे वेश बदलने मे माहिर जाने क्या क्या बन जाते थे,
जब बड़े पुलिस के अफसर भी उनको पहचान न पाते थे ॥
झाँसी मे था कप्तान एक, जो बडा पुलिस का अफसर था,
ये रहे ड्राइवर बन उसके घर, इन्हे नही कोई डर था,
फिर उससे ही लाइसेस लिया फिर भी पहचान नही पाया,
पछताता रहा बाद मे वह क्या करता, जान नही पाया ॥
सघर्ष नही रुकने पाए इसलिए सतत गतिमान रहे,
उनका केवल यह कहना था सब कुछ जाए पर सम्मान रहे,
सम्मान नही हो माता का ऐसे मे जीना क्या जीना,
ऐसे मे क्या शादी विवाह, ऐसे मे क्या खाना-पीना ॥

जब तक आजाद न हो स्वदेश, तब तक मिल सकता चैन नहीं
मॉ की हथकडी और बेड़ी, अब देख सकेगे नैन नही।
साइमन कमीशन आया तो सबने उसका प्रतिरोध किया
'वापस जाओ' कहकर जनता ने कडा विरोध किया॥
घनघोर लाठियो मे घिरकर लालाजी लहूलुहान हुए,
सत्याग्रह करते हुए अमर आज़ादी हित बलिदान हुए।
पडित जी के आदेशो का सबने पालन तत्काल किया,
जिसने उनकी हत्या की उस पर घेरा डाल दिया॥
फिर भगतसिह औ' राजगुरु ने वदला खूब चुकाया था,
साडर्स अधम की हत्या कर अपना पौरुष दिखलाया था,
फिर असेम्बली बमकाड हुआ निर्णय आज़ाद कर रहे थे,
जो साथ छोडते जाते थे उनको भी याद कर रहे थे॥
फिर भगतसिंह बटुकेश्वर भी हो गये अनत. बदी,
थी जगह-जगह फॉसियॉ हुई गतिविधियो मे आई मंदी।
लेकिन फिर भी सगठन कार्य अब भी आज़ाद कर रहे थे,
ऐसे में कुछ गद्दार छिपे दल को बर्बाद कर रहे थे॥
अल्फ्रेड पार्क पर दुश्मन ने जब उन पर घेरा डाला था,
इनका ही साथी था कोई जो भेद बताने वाला था।
थी घटे भर गोलियॉ चली, फिर भी वह वीर न हारा था,
अतिम गोली खुद को मारी पहले कितनो को मारा था॥
आजाद रहे आज़ाद सदा कोई भी पकड नही पाया,
वे मरे नही हो गए अमर हर तरफ उन्हीं का यश छाया,
थे मूर्ति वीरता की अद्भुत, साहसी निडर बलशाली थे,
वे क्रांति वाटिका के रक्षक, मॉ की बगिया के माली थे॥
वे थे चरित्र के धनी और आज़ादी के दीवाने थे,
भारत माता थी दिव्य ज्योति वे बस उसके परवाने थे,
वे आज़ादी के लिए लडे, आज़ादी हित बलिदान हुए,
वे चले गए लेकिन आखिर पूरे उनके अरमान हुए॥
आजाद और आजादी का सार्थक हो गया है नाता,
आजाद हो गया देश और आजाद हुई भारत माता,

नवयुग के नए जवानों से मुझको बस इतना कहना है,
क्या वीरों की गाथाएँ ही केवल दुहराते रहना है ॥
उनके जीवन के सद्‌गुण ले हम सब भी उन पर अमल करे,
मुँह नही दूसरो का देखे, आगे बढकर खुद पहल करे,
कसकर पकडे फिर ठीक ठौर हम आज वक्त की नाड़ी को,
कुछ नया पथ कुछ नयी चाल दे आज देश की गाडी को ॥
धरती से अम्बर तक गुजित यह बलिदान सवाद रहे,
युग-युग अपना प्यारा स्वदेश, आजाद रहे आजाद रहे ॥

—मदन मोहन 'मधुर'

चन्द्रशेखर

एक चन्द्रशेखर कैलास मध्य सोभित है,
दूसरे ने भ्रमण किया है हिद भर का
एक चन्द्रशेखर के सगी सव भूत प्रेत,
एक साथ क्रांतिकारी दल देश भर का।
एक चन्द्रशेखर के हाथ मे त्रिशूल राजे,
दूसरे के बम देखि शत्रु हिय दरका।
एक चन्द्रशेखर को पाकर कैलास धन्य,
दूसरे को पाके धन्य हो गया बदरका।

—होरीलाल शुक्ल

है धन्य बदरका ग्राम

जिस धरती को गगाजल की लहरो ने सीचा बार-बार।
जिस धरती को है प्राप्त हुआ अगणित वीरो का अतुल प्यार ॥
जिस धरती पर सत्तावन में जागी स्वतन्त्रता की ज्वाला।
जागे राणा बेनी माधव चम - चम चमका भाला ॥
अत्याचारी अंग्रेज़ रहे पाया भारत ने नही त्राण।
वीरो ने पाया अमर रूप, स्वातत्र्य वह्नि मे होम प्राण ॥
भारत माता रो उठी हुआ शोषण मजदूर किसानों का।
काला कारागृह गेह बना, आजादी के दीवानों का ॥
लुट गए खज़ाने भरे - पूरे, घर हरे - भरे बरबाद हुए।
बीसवीं सदी मे करने को, आजाद हमे आजाद हुए ॥
माता को देख दुखी याद आयी झाँसी वाली रानी की।
आ गया याद तात्याटोपे, सन् सत्तावन का सेनानी ॥
स्वातत्र्य समर मे कूद पडे करने को वैरी पर प्रहार।
नौकरशाही से युद्ध किया सह सके नही वह अनाचार ॥
जो आँख उठाकर देख सके, ऐसी थी किसमें कहाँ ताब।
सामने विरोधी ने पाया गोली से गोली का जवाब ॥
माने वे बधन नही जो कि, अग्रेज़ों ने निर्माण किए।
हँसते - हँसते गोली खाकर न्योछावर अपने प्राण किए ॥
शासन का दानव काँप उठा, मुख देख-देख अभिमानी का।
है धन्य बदरका ग्राम जहाँ, पर जन्म हुआ बलिदानी का ॥
आज़ाद पार्क की रोती अपने सुत हेतु धरा है।
उस वीर केहरी तन का, शोणित उस जगह गिरा है ॥

सीने मे गोली खाई, स्वीकार न की हथकडियॉ।
उड गया स्वर्ग को क्षण मे, नहि गिनी मौत की घडियॉ ॥
इस ग्राम-धूलि को लेकर, मस्तक मे क्यो न लगाए।
इस देवस्थल को अपना, आभार न क्यो बरसाए ॥
वदरका कुटी मे जन्मा, वह महा तेज की ज्वाला।
जिसने बचपन से पी थी, स्वातत्र्य शक्ति की हाला ॥
धनि वीर प्रसवनी माता जिसने था उसको जाया
वह श्रद्धा का भाजन है, जो उसका पितृ कहलाया ॥
आजादी की श्रद्धाजलि, आजाद तुम्हे अर्पण है।
खोवेगे इसे नहीं हम, इन मंत्रो से तर्पण है ॥

—असीम दीक्षित

शहीद शिरोमणि सेनापति श्री चन्द्रशेखर 'आज़ाद'

(1)

छाँही भी न छूने कभी पाए शत्रु जीवन मे,
नाम सुनते ही तन पीले पड़ जाते थे।
ठाँय-ठाँय सुन घुट जाता कितनो का दम,
दिग्गजो के हाथ-पैर ढीले पड जाते थे।
ऐसा शक्तिशाली व्यक्ति देखा न सुना भी गया,
दृष्टि पडते ही गोरे नीले पड जाते थे।
एक पल भी जो पड़ जाता सामने था शत्रु,
कोट और पैन्ट दोनो गीले पड जाते थे।

(2)

टक्करे सदैव महाकाल से थे लेते रहे,
बलिदानी दल के महानतम नेता थे।
चरण पखारे निज रक्त से स्वतन्त्रता के,
भारत के क्रातिकारी युग के प्रणेता थे।
त्याग, बलिदान, देशभक्ति मे, समर्पण मे,
कलियुग मे ही, वह द्वापर औ त्रेता थे।
लाखो वर्ष प्रेरणा मिलेगी नई पीढियों को,
वीर चन्द्रशेखर अजेय थे, विजेता थे।

शतशः प्रणाम

पिस्तौल का कर के मुख चुबन
कर लिया मृत्यु का आलिगन
हो शाम्यित देश की धरती पर
जन-मानस मे दी क्राति फूँक ॥
शतश प्रणाम हैं क्राति-दूत !
भूमि पर शव आजाद पडी
गोरा पल्टन ले दूर खडी
अब कौन निकट जाये उसके
क्या पता धॉय से करे शूट ॥
शतश· प्रणाम हैं क्रांति-दूत !
गोली मारी अरु ककड फेंके
फिर लबे से भाले भोके
मृत मान लिया फिर भी डरते
भय का कुछ ऐसा चढा भूत ॥
शतश प्रणाम है क्रांति-दूत !
त्रिवेणी का वह एल्फ्रेड पार्क
घिर गया व्यूह मे पूत-पार्थ
अभिमन्यु बध फिर हुआ जहाँ
फिर बिछड़ा मॉ का एक पूत ॥
शतशः प्रणाम हैं क्राति-दूत !
है धन्य-धन्य वह मॉ जिसने, जाया नर-नाहर सिह-पूत ।
शतश प्रणाम हैं क्रांति-दूत, भारत माँ के प्यारे सपूत ॥

—दीपनारायण शुक्ल 'दीप'

क्रांति का देवता

आज सन् इकतीस की जनवरी सत्ताइस है

अंकित इतिहासों मे शोणित की मसि से
आज के दिन ही
एक अभिमन्यु और मारा गया
नीच अविचारी जयद्रथ के कुचक्रों से

हुआ सूर्योदय उठ बैठा देशघाती वह
देखा दिननाथ भी लज्जा से लाल है
वातावरण सारा थरथराता है पारद सा
किंतु पुरस्कार की याद आई जैसे उसे
चल पड़ा जल्दी से अल्फ्रेड पार्क को
पहुँचा जब इमली के नीचे तो देखा वहाँ
बैठा राष्ट्रसिह है प्रतीक्षा मे आकुल
देख राष्ट्रघाती को बोले आजाद—अरे !
मित्र तुम सचमुच हो पक्के वचन के !
कुछ सकुचा कर वह बोला—व्यग्र होते क्यो
अभी तो बजा है मात्र नौ ही, कुछ देर है।

ठीक दस बजते ही सेठ यहाँ आएगा
सारी समस्याएँ अभी हल हो जाएँगी।
सहसा दिखाई पड़े सामने सडक पर

थान कुछ सेना के, पुलिस के आते हुए
शकित हो, चकित हो पूछा आजाद ने—
मित्र ! यह पुलिस कैसी ? इसी ओर आती है
इतने अनगिनत सिपाही क्या बात है ?
बोला वह घाती अरे कैसे यह बात हुई !
भेद क्या दिया है उस अधम-नीच सेठ ने
धन देने की बात जिसने सकारी थी !
सजग आज़ाद हुए,
देखा फिर चारो ओर
यूथ की यूथ पुलिस घेरे है अस्त्र ले
अब तो निकलने का कई नही मार्ग है
बोले—मित्र ! जाओ तुम भाग अभी जल्दी से
मुझको निपटने दो गीदडों से खुल कर
जाओ ! रणचंडी का निमत्रण आज आया है ।

सहसा नाटबाबर ने हुक्म दिया पीछे से—
भाडे के टट्टुओ को
गीदड निखट्टुओ को
भागने न पाए शेर आज फॅसा घेरे मे
घेरा और छोटा करो; रहना खबरदार
इतने मे मात्र दस गज़ की लघु दूरी से
बोला फिरगी वह—"हैड्स अप, फेको अस्त्र
अपना समर्पण करो
बच नही सकते हो, पुलिस है कई हज़ार ।"
उत्तर में सिंह का गरज उठा माउजर,
लाल-विकराल अग्निशोलो को उगलता हुआ
तोड कर दायॉ हाथ गोली पार हो गई
धूल चाट गया नाटबाबर एक गोली से
लेटे ही लेटे उस फिरगी ने वार किया
आहत सिह हो गया

लगी थी गोली जाँघ मे,
तब तक गरज उठी रायफले-मशीनगनें
रण मे कुशल नर-नाहर ने आड ली
लेटे ही लेटे उस इमली के पेड की
कायर नाटबाबर जा छिपा था वहीं झाडियो मे ।
द्वापर का दृश्य साकार फिर हो गया
घेरा कौरवो ने आज अभिनव अभिमन्यु को ।
धीरता मे राम, वीरता मे परशुराम सम
भिड गया सिह बैसवाडे का अकेले ही
युद्ध घमासान था
विषम महान था
देख रहा अम्बर से लज्जित दिनमान था ।
अग-अग छिद गए
छलनी शरीर हुआ
फिर भी उगलता रहा शोले माउजर वह
साहस नही था पास आने का स्यारो मे
कितनो को उसने इस भव के उस पार किया
अंत मे बची जब मात्र गोली एक पास मे
सोचा—क्या जीवित ही मुझे ये दुष्ट पकडेंगे ।

हम तो आजाद ही रहे है सदा
इस अतिम बेला मे वैसे ही मरेगे हम ।

इतना कह उसने प्रणाम किया माता को
भारत की माटी को
अपने बैसवाडे को ।

वन्दे मातरम् का घोष करके उतार दी
शेष बची गोली फिर कनपटी के आर-पार
गिर पडा निष्प्राण धरती की गोद में ।

फिर भी वह जम्बुक दल पास नही आता था।
मरने के बाद भी किए गए कई वार
उसके शरीर मे।

जीवित नही है सिह
जब यह जान गए
तब भी घबडाते हुए पास सब आये थे
देखा
पडा है वीर वीरगति पाकर अब
लज्जित हो आया नाटबाबर निकल कर
फिर भी नही देख सका
उस मृत शरीर को
ऐसा लगा जैसे धिक्कारता हो वीर वह
ऑखो से अब भी निकलती चिगारियॉ थी।
पाकर विजय भी नाटबाबर पराजित था।
इस बलिदान के गवाह है नील नभ,
सूरज-पवन और अल्फ्रेड पार्क
वह इमली का वृक्ष तो समूल काट डाला गया
क्षुद्र कापुरुषता का शिकार वृक्ष भी हुआ
समाचार फैला जब
सिह अब नही रहा
चढ़ गए मॉ की बलिवेदी पर चन्द्रशेखर
सहम गया था देश
गगा भी थमी थी
उमड़े आबाल-वृद्ध सगम के तीर पर
अंतिम दर्शनो की मात्र सब में अभिलाषा थी
अस्त हो गया था एक सूर्य असमय ही
जिस सिंह-शावक की
घर-घर में
दर-दर में

आग भरी शोणित कहानी कही जाती थी
बन गया खुद ही कहानी नर-नाहर वह
छली गई मित्रता
विश्वास भी दला गया
यही घाव देकर आजाद ही चला गया।

—डॉ० अरुण प्रकाश त्रिवेदी



अशफ़ाकउल्ला खाँ

वह रंग अब कहाँ है नसरीनो नसतरन में,
उजड़ा पड़ा हुआ है क्या ख़ाक है वतन में,
कुछ आरज़ू नहीं है, आरज़ू तो यह है,
रख दे कोई ज़रा सी ख़ाके-वतन कफ़न में,

ढेर-ढेर आँसू बहाता अशफाकउल्ला का जन्मस्थान

शाहजहाँपुर का मोहल्ला कदनशाह

यह शाहजहाँपुर है। दिल्ली-लखनऊ रेलमार्ग का एक साधारण स्टेशन। मै गाडी से उतरकर टिकिट हाथ मे लिए गेट पर खडे होने वाले टिकिट निरीक्षक को टिकिट देने के लिए इधर-उधर ताक रहा हूँ, किंतु कोई वहाँ नही है। टिकिट नोचकर फेक देता हूँ। बाहर आकर एक रिक्शेवान को बुलाता हूँ और अशफ़ाकउल्ला की मजार चलने को कहता हूँ। रिक्शेवान कमीज की जेब से बीडी निकालता है। मुझ से पूछता है—"माचिस है साहब!" मै 'न' कह देता हूँ। वह एक दूसरे रिक्शेवान के पास जाकर बीडी जला लाता है और चिकवई तहमत को सँभालता, समेटता हुआ रिक्शे की गद्दी पर बैठ जाता है। स्टेशन के परिसर से वह बाई ओर की सडक पर मुड जाता है।

बाप रे! सड़क है कि गड्ढों भरा गलियारा! रिक्शावान गड्ढे बचाकर चलने की कोशिश करता है; किंतु सडक ऐसी है कि गड्ढे ही गड्ढे है। वह कहता है—"बाबू! हर चौथे महीने टायर फट जाते है। महँगाई का जमाना! आधी कमाई तो रिक्शा ही खा जाता है। सरकार कुछ भी ध्यान नही देती और जो भी सरकार आती है, वह अपने को गरीबो, किसानो, मजदूरों की सरकार बताती है। अरे, साफ-साफ क्यो नही कहते कि सरकार अमीरों की है, मालदारो की है।" बीड़ी का आखिरी कश खींचकर वह उसे फेक देता है।

घुमावदार सडको के धचकोलो के धचके झेलता हुआ, गदी नालियों और बदबूदार कीचड के कारण नाक पर रुमाल रखकर मै एक मानसिक पीडा का अनुभव करता हूँ। पीडा, इसलिए कि दुनिया के और किसी मुल्क मे यदि अशफ़ाक जैसा वीर निर्भीक शहीद हुआ होता तो वहाँ उस की मजार

तक जाने के लिए शानदार मार्ग बनाया गया होता ! जिन के बलबूते वतन को आजादी मिली, उन की उपेक्षा करने वालो पर लानत है, धिक्कार है !

मै अशफाक नगर पहुँच गया हूँ। तग-सॅकरी सडक की बाई ओर एक ऊँचा-सा गेट लगा है, जिस पर लिखा है—"अमर शहीद अशफाकउल्ला खॉ वारसी 'हसरत' द्वार" चारो ओर से ऊँची चहारदीवारी बनी है। रॅगी-पुती भी है। अंदर काफी जगह है। एक हैडपम्प भी लगा है: अभी पानी देता है, आगे का राम जाने।

वहॉ लाइन से अशोक के वृक्ष लगाए गए है। गेदे फूलो से लदे हुए हैं, कही-कही हरी घास भी है। नगरपालिका वाला नल तो छठे-छमाहे ही पानी देता है। नीबू के भी एक-दो पेड लगे है, गुलाब, गुलाबॉस, गुलदुपहरी और तुलसी के पौधो के पौधे भी है।

यह स्थान अशफ़ाकउल्ला का खानदानी कब्रिस्तान है। मै उस स्थल पर खडा हूँ, जहॉ फैजाबाद जेल से शहीद अशफाकउल्ला का शव लाकर दफन किया गया था।

इस समय मेरे पूरे शरीर मे रोमांच और कम्पन-सा हो रहा है। फैजाबाद की जेल, जिस में इस नर-नाहर को फॉसी के तख्ते पर लटकाया गया था, आज भी कई चीजो की गवाह है। मैने ढाई दशक वहॉ बिताए है। अशफाक के सबध मे बहुत से सस्मरण है, अपनी झोली मे। उन सबो को अन्यत्र प्रस्तुत करूँगा। किंतु मन नहीं मानता, इसलिए बता दूँ, फैजाबाद के बुजुर्ग बताते थे कि जिस समय अशफ़ाक की लाश जेल से बाहर आई थी, उस समय वहॉ लोगो की अपार भीड़ उमडी थी। भीड गीले नयनो से अपने स्वतत्रता प्रेमी क्रातिकारी शहीद को श्रद्धाजलि दे रही थी। सैकडो लोग लाश के साथ शाहजहॉपुर तक गए थे।

फैजाबाद जेल मे 16 दिसंबर 1927 को, अशफाक ने देश के लिए जो पैगाम लिखा था, उसकी एक प्रति मुझे आज से कोई 27 वर्ष पहले फैजाबाद के एक बुजुर्ग से प्राप्त हुई थी। उस पैगाम की चद लाइनें यहॉ पेश है :

"बिरादराने वतन की खिदमत में उन के इस भाई का सलाम पहुँचे, जो उन की इज्जत व नामूस की खातिर फैजाबाद जेल में कुर्बान हो गया। आज यह पैगाम मैं बिरादराने वतन को भेज रहा हूँ। इसके बाद मुझे तीन दिन और चार रातें गुजारनी है। (अशफाक को 19 दिसबर को फॉसी दी गई थी।)

" बिरादराने वतन ! मै इसी पाक और मुकद्दस वतन की क़सम खा कर कहूँगा कि हम नग और नामूस पर कुर्बान हो गए है।

" मै अपने हिदू और मुसलमान भाइयो को बता देना चाहता हूँ कि सब ढोंग है जो सी आई डी के खुफिया खजाने से रचा गया है। मै मर रहा हूँ और वतन पर मर रहा हूँ।

" ऐ खुदावन्द कदूस ! क्या कोई ऐसा सवेरा नही आएगा कि जिस सुबह को तेरा आफताब आजाद हिदोस्तान मे चमके और फ़जाए हिद आजादी के नारो से गूँज उठे ?

"हजार दु:ख क्यो न आएँ, वहर व जख्खार दरमियान मौजे, आतिश पहाड़, दरमियान में क्यो न घायल हो जाएँ; मगर ऐ आजादी के शेरो ! अपने गरम-गरम खून को मातृभूमि पर छिडकते हुए अपनी जानो को मातृभूमि की वेदी पर कुरबान करते हुए आगे बढते चले जाओ।

" मैं बहुत खुश हूँ। क्या मेरे लिए इस से बढकर कोई और इज्जत हो सकती है कि सब से पहला और अव्वल मुसलमान मैं हूँ, जो आजादी-ए-वतन की खातिर फॉसी पर चढ रहा हूँ। मेरे भाइयो ! मेरा सलाम लो और इस नामुकम्मिल काम को जो हम से बाकी रह गया है, तुम को पूरा करना है .

उठो - उठो सो रहे हो नाहक पयामे बॉग सुन लो।
बढो कि कोई बुला रहा है निशाने मंजिल दिखा-दिखाकर।

" ज्यादा क्या लिखूँ। सलाम लो और कमरें बॉध लो और मैदानी अमल मे आन पहुँचो। खुदा तुम्हारे साथ है। वतन की मुत्तहदा सियासी जमातो और उन के लीडरो ! मेरा सलाम कबूल करो। तुम हम लोगों को उस नज़र से न देखना जिस नजर से दुश्मनाने वतन देखते हैं। न हम डाकू थे न कातिल :

कहाँ गया वह कोहेनूर हीरा, किधर गई हाय मेरी दौलत ?
वह सब का सब लूट करके, उल्टा हमी को डाकू बता रहे है ॥

" अच्छा, अब मै रुखसत होता हूँ और हमेशा के लिए खैरबाद करता हूँ। खुदा तुम्हारे साथ हो और फ़जाए हिद पर आज़ादी का झंडा लहराए। उन भाइयों से शुक्रिया के साथ रुखसत होता हूँ, जिन्होंने हमारी मदद जाहिरा तौर पर की या पोशीदा, और उन्हें यकीन दिलाऊँगा कि अशफ़ाक आखिर दम तक सच्चा रहा और खुश-खुश मर गया और खयानते वतनी का इस पर कोई जुर्म नहीं लगाया जा सकता। वतनी भाइयो से गुजारिश है कि वह मेरे

भाइयो को मेरे बाद न भूले और उन की मदद करे और खयाल रखे ।"

—अशफ़ाकउल्ला खॉ 'हसरत' वारसी
फैजाबाद जेल
16 दिसंबर 1927 ई०

मै शहीद अशफाकउल्ला की मजार के पास खडा हूॅ। मजार पहले कच्ची थी, अब पक्की है और छतरी भी बनी है। मजार के ऊपर काफी धूल पडी है। लगता है दस-पद्रह दिनो से सफाई नही की गई। अरे! यहॉ से थोडी ही दूर पर तो शहीदे आजम का घर है, भतीजे हैं, सम्पन्न है, उन्हे इस ओर ध्यान देना चाहिए। सरकार के भरोसे कब तक बैठा जाएगा?

मै यहॉ लिखी इबारत को पढ रहा हूॅ। लिखा है ·

या अल्लाह-बिसमिल्लाउल-रहीमान उलरहीम-या मुहम्मद—

'शहीदे वतन अशफाकउल्ला खा'

(फारसी लिपि मे भी यही इबारत लिखी है।)

इसी मजार के बगल मे अशफ़ाकउल्ला के एक भतीजे रजीउल्ला खा की मजार भी बनी है।

मजार के पास लाइट का कोई इन्तजाम नही है। इस स्मारक का रखरखाव सतोषजनक तो नही है किंतु बहुत गडबड़ भी नही है।

मजार के सामने खड़ा, मै शहीदे-वतन को प्रणाम करता हूॅ। वहॉ की मिट्टी को माथे पर लगा लेता हूॅ और सोचता हूॅ कि यदि दुनिया के और किसी मुल्क में ऐसे वीर शहीद का जन्म हुआ होता तो वहॉ मेले लगते, पर यहॉ अपने मुल्क मे स्वार्थी राजनेताओं ने उन शहीदों को भुला दिया, जिन की बदौलत वतन को आज़ादी मिली।

अशफ़ाक शायर थे। उन्होने अपने समय के हालात का जिक्र कई गजलो में किया है। वे देशवासियों को ही देश का दुश्मन मानते थे। वे फर्माते हैं :

सुनाऍ गम की किसे कहानी हमी को अपने सता रहे है।
हमेशा वो सुबहो-शाम दिल पर सितम के खजर चला रहे है।
न कोई इंगलिश, न कोई जर्मन, न कोई रशियन, न कोई तुर्की।
मिटाने वाले हैं, अपने हिंदी जो आज हम को मिटा रहे है।

कहाँ गया कोहेनूर हीरा, किधर गई हाय मेरी दौलत।
वो सबका सब लूट करके उलटा हमी को डाकू बता रहे है।
जिसे फना वो समझ रहे है वफा का है राज इसी मे मुजमिर।
नहीं मिटाए से मिट सकेगे वो लाख हम को मिटा रहे है।

इस स्मारक के सामने ही एक पुराना मकान है, उसी मे अशफ़ाकउल्ला नित्य व्यायाम करते थे। जिन काठ के हत्थों पर हथेली रखकर वे दड करते थे, वे आज भी वहाँ रखी है। उन की हथेलियो के निशान उन पर बने है। इसी जगह कक्षा दस मे पढने वाले एक छात्र से मै पूछ बैठता हूँ:

"अशफाकउल्ला के बारे मे तुम क्या जानते हो?"

छात्र पहले तो कुछ नर्वस होता है किंतु दो-चार क्षणो के बाद वह धीमी आवाज मे कहता है—"ये हमारे शहर के क्रांतिकारी थे। काकोरी में ट्रेन डकैती डाली थी। इन के साथ चन्द्रशेखर आज़ाद, रामप्रसाद बिस्मिल, रोशन सिह, राजेन्द्र लाहिडी वगैरह थे। अग्रेज सरकार का खजाना लूट लिया था। उन्हे गिरफ्तार करके फैजाबाद की जेल मे डाला गया था। वहाँ फॉसी की कोठरी मे उन्होने कई नज्मे लिखी थी।"

"कोई याद हो तो सुनाओ।" मेरे यह कहने पर वह छात्र खॉसता है और कुछ सोचकर कहता है—"आधी ही याद है।"

"सुनाओ, कोई बात नही, आधी ही सुनाओ।"

वह कुछ-कुछ घबराता-सा पढता है·

बुज़दिलो को सदा मौत से डरते देखा,
गोकि सौ बार उन्हे रोज़ मरते देखा,
वीर को मौत से हमने नहीं मरते देखा,
तख्ताए मौत पै भी खेल ही करते देखा।
मौत इक रोज़ जब आनी है तो डरना क्या है,
हम सदा खेल ही समझा किए मरना क्या है,
तग आकर हम भी उन के ज़ुल्म से बेदाद से,
चल दिए सूए अदम ज़िन्दाने फ़ैज़ाबाद से।

नाबदानों का गदा पानी गलियो की सीमा रेखा को लॉघ कर सड़क पर बह रहा है। सडक के गड्ढों मे भरा हुआ वह बदबूदार कीचड राजनेताओं के थोबडों पर फेके जाने की प्रतीक्षा मे है। वह दिन कब आएगा जब शहीदो

के नाम पर अपनी मछली तलने वाले बेहया नेता जगह-जगह धिक्कारे जाएँगे ?

वतन पर अपनी जवानी कुर्बान करने वाले अशफ़ाक के घर को जाने वाली यह सडक दिल्ली की ससद के सामने वाली सडक से भी अच्छी होनी चाहिए, क्योकि इसी सडक ने तो उस सडक को चमक दी है। और इन नेताओ के चमकदार कपडों, गमकदार चेहरो और झमकदार आलीशान निवासो का श्रेय अशफाक जैसे शहीदो को ही है। कभी अशफ़ाक इस मोहल्ले मे खेलते थे, पतग उडाते थे, कभी इसी रास्ते से स्कूल जाते थे और कभी अंग्रेज शासन को उखाड फेकने के मनसूबे बनाते थे।

उधर से पंचा और सलूका पहने लंबी खिजाबी दाढ़ी फहराते हुए दो-तीन बकरियॉ लिए एक दुबले-पतले ढॉचे वाले सज्जन नंगे पैर चले आ रहे है। मुझे देखकर वे ठिठक जाते है और पूछते हैं—"क्या राशनकार्ड वाले है आप ?" "नहीं भाई! मै तो अशफ़ाकउल्ला का जन्मस्थान देखने आया हूँ।"

वे मेरी ओर एक टेढी नज़र फेक कर कहते है—"चले जाइए, थोडा आगे है उनका घर। लेकिन ये पूरा शहर ही उनका जन्मस्थान है, अरे शहर क्या पूरा मुल्क! मेरे वालिद उन के साथ बचपन मे खेला करते थे। गरीबी की वजह से वे पढ़ने नही जा सके। शहीद अशफाक चचा शायर थे, शायरी करते थे। वालिद बताया करते थे कि उन्हे फारसी और अरबी का अच्छा इल्म था। उन की नज़्मे मेरे वालिद को बहुत याद थी।"

"आप को भी कुछ याद है?' मेरे यह कहने पर वे बकरियों की रस्सी दूसरे हाथ मे पकड कर, माथे पर उँगलियॉ रखकर कहते हैं—"हॉ, चद लाइने सुना सकता हूँ। क्या करूँ जनाब, मुसीबत का मारा हूँ—खैर !" वे सुनाते है :

वह रग अब कहॉ है नसरीनो नस्तरन मे।
उजड़ा हुआ पडा है क्या खाक है वतन में॥
कुछ आरजू नही है, है आरज़ू तो यह है।
रख दे कोई ज़रा-सी ख़ाके वतन कफन मे॥
मौत और ज़िन्दगी है दुनिया का इक तमाशा।
फरमान कृष्ण का था अर्जुन को बीच रन मे॥

जिस ने हिला दिया है दुनिया को एक पल मे।
अफसोस, क्यो नही है वह रूह अब वतन मे॥
ऐ वारिसाने मिल्लत यह खूब याद रखना।
है बोस औ' कन्हाई अब भी बहुत वतन मे॥
सैयादे-ज़ुल्म पेश आया है जब से हसरत—
हैं बुलबुले कफस मे जागो जगत चमन मे॥

"माफ करिए भाई साहब! गज़ल पूरी ठीक से नही याद। वैसे पहले मै, हारमोनियम पर अशफाक की गजले खूब गाया करता था। वे 'हसरत' और 'वारसी' तखल्लुस से शायरी करते थे। उनके दोस्त पडितजी थे—पडित रामप्रसाद 'बिस्मिल'। उनका दौलतखाना यही खिन्नी बाग मे था। वे भी शायर थे। वालिद बताया करते थे कि दोनो मे दॉत-काटे की रोटी थी। आपस में बड़ी मुहब्बत थी, याराना था (हॅसते हुए) जी हॉ, वे कट्टर पडित और ये नमाजी मुसलमान। लेकिन दोनो मे खूब याराना था। ये हिदू- मुसलमान की लडाई तो नेताओ ने वोट के लिए पैदा करा दी। मुसलमान से कहते है—तुम्हारी तरफ जो हाथ बढाएगा, उसका हाथ काट देगे और हिदुओ से कहते हैं—ये वतन तुम्हारा है, मुसलमानों का नहीं। खुदा के लिए ये नेता कही चले जाते तो पूरा वतन पाक हो जाता। आपस की लडाई ये नेता ही भडकाते है—अरे यही शाहजहॉपुर मे ̈"

मै उन की बातों को आगे नही सुनना चाहता और एक लखौरी (छोटी) ईटो वाली बहुत सुदर पुरानी कोठी को देखता चला जा रहा हूॅ। कुछ गज आगे चलकर एक खूब विस्तृत परिसर मे एक पुरानी कोठी की नए ढंग से मरम्मत हुई है। यह वही पाक सरजमी है, जहॉ शहीदे-वतन अशफ़ाकउल्ला का जन्म हुआ था। इसी कोठी मे जननी के उदर से वे धरा पर अवतरित हुए थे। कोठी का रख-रखाव, शान-शौकत काबिले तारीफ है। वास्तव मे अशफाक के बुजुर्ग रईस थे। शहर की हस्ती थे।

मैं दरवाजे पर लगी बिजली की घंटी के बटन को दाबे चला रहा हूॅ। बिजली हो तब तो कोई अंदर से निकले। कोई किसी मत्री का घर है, जहॉ चौबीसों घटे बिजली आती हो? मै कुडी पर हल्की चोटे जमाता हूॅ। कुछ ही क्षणो में एक गोरा, अत्यत सौम्य चेहरा पठानी सूट मे अदब के साथ मेरे सामने आ जाता है। ये है श्री शादाबउल्ला खा।

शादाबउल्ला इस समय इन्टर मे पढ़ रहे है। इन्होने हिंदी, अंग्रेजी, गणित, रसायन-शास्त्र और भौतिकी विषय लिए है। मै पूछता हूँ—"उर्दू क्यो नहीं लिया ?"

वे बताते है—"उर्दू की लिपि बहुत कठिन है और उसका कोई खास भविष्य नहीं है।" ये शहीदे आजम के भाई के सब से छोटे पोते है।

ड्राइग रूम साफ-सुथरा है। कुछ किताबे भी रखी हैं। इसी बीच शादाबउल्ला के बडे भाई जनाब अशफाकउल्ला आ जाते है। गोरा-चिट्टा गोल चेहरा, अधरो पर मुस्कान, ऑखों मे मोहब्बत का लबरेज प्याला छलक रहा है। पैंट-कमीज में खूब जम रहे है।

बातचीत शुरू होती है। वे बताते है .

"मेरा नाम घर-परिवार के लोगो ने भी बाबा अशफाकउल्ला खॉ वारसी के नाम पर रखा। इसलिए कि उन का नाम हमेशा घर मे बना रहे।" इसी बीच चाय और कई तरह के बिस्कुट से सजी प्लेटें सामने की मेज पर आ जाती है। चाय की चुस्कियो और बिस्कुटो की खुटकियो के साथ बातचीत चल रही है।

सभ्रान्त और विनम्र अशफ़ाकउल्ला (आगे चलकर मै इन्हें केवल 'प्रियवर' से ही संबोधित करूँगा) बहुत शीरी जुबान से बताते है :

हम लोग तीन भाई हैं—मैं और शादाबउल्ला। घर मे फार्मिग होती है और कुछ कारोबार भी। मै इस समय शहर की कांग्रेस पार्टी का अध्यक्ष हूँ। हमारे एक पूर्व क़दनशाह अफगानिस्तान से आए थे और मुगल सल्तनत मे उन को अच्छा पद मिला था। बाद मे अवध की नवाबी के समय भी हमारे कई पूर्वज अच्छे पदो पर रहे। यह मोहल्ला। कदनशाह का ही बसाया हुआ है। इस का नाम पहले उन्ही के नाम पर था पर अब 'अशफाक नगर' है।

शहीदे आजम अशफ़ाकउल्ला खॉ के भाई थे रियासत उल्ला खॉ और शाहनशाह खां। अशफ़ाकउल्ला (अच्छू) सबसे छोटे थे। उन्होने शादी नही की थी। रियासतउल्ला खा के पुत्र इस्तियाक उल्ला खा हमारे वालिद मरहूम थे।

घर के लोगो ने अशफाकउल्ला की हमेशा हौसला-बुलंदी की। गोकि परिवार को इस का बहुत खमियाजा भुगतना पडा। लेकिन वतन की मोहब्बत ने हर मुसीबत को झेलने की कुव्वत दी थी।

देश की आजादी के बाद हमारे परिवार को किसी ने पूछा तक नही। परिवार मे किसी को पेशन तक नही मिली। खैर, पेशन हम लोग लेते भी न, क्योंकि जो कुछ हमारे बाबा ने किया था, क्या वह इसलिए किया था कि उनके परिवार वालो को सरकारी भीख मिलेगी! मर जाना बेहतर है पर सरकारी भीख पर जीना निहायत शर्म की बात है।

वे कुछ रुक कर, सँभलकर बैठते हुए कहते है—"जिन शहीदो ने मुल्क के लिए कुर्बानी दी उस का फख्र आज सारा देश कर रहा है; किंतु शासन अधा और बहरा है। शहीदे आजम की मजार की व्यवस्था हम लोगो ने की है। सरकार से कहते-कहते हार गए, वहाँ एक बल्ब तक नहीं लग सका। वतन को आफताबी रोशनी देने वाले महान देशभक्त की मजार एक अदद बल्ब की रोशनी के लिए तरसती है। यहाँ ⋯"

"मै उनकी बात काट कर कहता हूँ—आप तो नगर काग्रेस के अध्यक्ष है और आप के ही शहर शाहजहाँपुर के 'बाबा साहब' प्रदेश काग्रेस के अध्यक्ष हैं। इस के पूर्व वे भारत के प्रधानमत्री के निजी सलाहकार और सर्वेसर्वा थे। उनकी तो देश मे तूती बोलती थी।"

मेरे ये वाक्य सुनकर प्रियवर का चेहरा उतर जाता है, लगता है बिच्छू ने उन्हे डंक मार दिया है। वे निरुत्तर हो जाते हैं। भाई, आप शहर काग्रेस के अध्यक्ष हैं और चार दशको से अधिक आपकी पार्टी देश-प्रदेश मे शासन की बागडोर सँभाले रही, तो दोषी कौन है? निर्णय स्वयं आप करे? स्वर्ग मे बैठी आप के बाबा शहीदे वतन अशफ़ाकउल्ला की आत्मा आप को क्या कहती होगी? इस का निर्णय आप स्वय ले सकते है।"

आज इस शहर, इस प्रदेश और इस देश की बदहाली के जिम्मेदार कौन हैं? वही न जिन के हाथ में शासन की बागडोर रही है। और आप उसी पार्टी के नगर अध्यक्ष हैं। आप को, कम से कम यह कहने का अधिकार नही है कि अशफाकउल्ला के लिए शासन ने कुछ नही किया। आप यह कहें कि आप की पार्टी ने कुछ नही किया। क्या कभी पार्टी को इस के लिए कोसा है, धिक्कारा है? मै जानता हूँ कि यदि आपने धिक्कारा होता तो नगर काग्रेस अध्यक्ष न रह पाते। एक ही बात हो सकती है—या तो अशफाक उल्ला की आत्मा को खुश कर ले या कांग्रेस अध्यक्ष का पद बरकरार रखे। पहले मार्ग मे कष्ट है, दूसरे मे सुख-सुविधाएँ है, भविष्य की आशाएँ है। किंतु शहीद

अशफाकउल्ला के ये वाक्य एक बार जरूर पढना, पढा तो होगा ही, इन पर विचार करना, चितन करना, मनन करना :

जेल मे कैद अशफाकउल्ला ने दिनाक 9 अक्टूबर 1927 को अपनी माँ को यह खत लिखा था :

मेरी सोगवार माँ, भाइयो, बहनो और अजीजो,

यह खत जब तक तुम्हारे हाथ मे पहुँचेगा तब तक न मालूम तुम्हारा हाल क्या होगा। न मालूम उस वक्त मै जिदा रहूँगा या राही-ए-अदम हो चुका हूँगा। मुझे पूरा इतमीनान है कि जेल के हुकमरान यह खत जरूर रवाना कर देंगे। जब कि यह मरने वाले की आखिरी ख्वाहिश है। बहरहाल मै लिख रहा हूँ। अब खुदा आलिम है कि क्या हो। खैर, आखिरी हुक्म आ गया है, अब एक-दो रोज के मेहमान है।'

मेरे घर मे आने वाले बच्चो और मौजूदा छोटो, तुम जब दुनिया मे आओगे, मेरी कहानी सुनने को पाओगे और तहरीर देखोगे। मेरी इस तहरीर को मेरे दिमाग का असर न समझना। मै बिल्कुल सही दिमाग का हूँ और अकल ठीक काम कर रही है। मेरा मकसद महज आने वाले बच्चो के लिए लिखना यूँ है कि वह अपने फराइज महसूस करे और मेरी याद ताजा रखे। प्यारे रजी व खलील—तुम्हारा चचा चन्द रोज के बाद इस दुनिया मे नही रहेगा और हमेशा-हमेशा के वास्ते इस दुनिया को छोड जाएगा। तुम से वह कुछ नही चाहता और न कहना चाहता है। तुम्हारा खुदा मददगार रहे। तुम्हे परवान चढाए। आला तालीम फरमाए और तुम्हें किसी काबिल बनाए। काबिले-फख्रे खानदान करे।''''

वतन की मुहब्बत का मुझ पर इल्जाम लगाया गया है। और यूँ ही मुझे सजाए मौत मिली। जब तुम इस काबिल होगे, मेरे मुकदमे की कुल कार्यवाही पढना। ज्यादा तुम को क्या लिखूँ।

—अशफाकउल्ला खाँ

अशफ़ाक ने आखिरी वक्त में अपनी आने वाली पीढियो के लिए सदेश दे दिया था अब उस के अर्थ को वे कितना समझते हैं, यह उनका काम है। किंतु अपना नाम अपने बाबा के नाम पर होने के कारण प्रियवर अशफ़ाक

उल्ला को जरूर सोचना होगा कि वे जिस गिरोह मे है क्या उनके बाबा शहीदे आजम को यह सब पसद था। क्या वे जानते थे कि उनकी शहादत के बाद कांग्रेस का राज करोडो के घोटालो की कहानियो से भरा होगा, क्या चोटी पर बैठा काग्रेस पार्टी का नेता रोज इस कोर्ट से उस कोर्ट के चक्कर लगाएगा और प्यारे पोते जी ! आप खुद सोचे, आप का फर्ज क्या है ? आप अपने बाबा को सच्ची श्रद्धांजलि देने के लायक है या नही ? और हॉ, वकील हजेला जी के साथ आप के सगे बाबा रियासतउल्ला खा 17 दिसबर को, यानी फॉसी के दो दिन पहले जब फैजाबाद जेल गए थे तो शहीदे आजम ने कहा था, “यह रोने का मौका है या हॅसने का। मुसलमानो मे शायद मै पहला खुशनसीब हूँ जो ऐसे क्रातिकारी षड्यन्त्र के सिलसिले में फॉसी पर चढूँगा। परसो देखना मै किस शौक से फॉसी पर चढूँगा।”

खैर, छोडिए ये सब ! मै प्रियवर के साथ बाहर निकलता हूँ। पोते जी फरमाते हैं—“सरकार की तरफ से शहीदों के लिए कुछ नही होता। अनवारुल बेगम, मेरी मॉ को पेशन तक नही मिलती। मैंने इन्दिराजी को लिखा था, चीफ मिनिस्टर को लिखा था, कुछ नही हुआ।”

मै मौन ! क्या उत्तर देता, बेचारे बहुत सीधे है, बहुत सरल स्वभाव के हैं। मन में तो आया कि कह दूँ कि आप उन्ही की पार्टी के शहर अध्यक्ष है और युवा काग्रेस के अध्यक्ष रहे है। पर कहा नही, खैर, सब चलता है।

पोते जी के साथ मै स्टेशन के करीब जहॉ उन का एक काम्प्लेक्स है और एक नया होटल बन रहा है, वहाँ आ जाता हूँ। वही उन के छोटे भाई, जो व्यवसायी है, से भेट होती है। उन का भी कहना है कि सरकार शहीदो के लिए कुछ नहीं कर रही है।

वहॉ से मै बस अड्डे की ओर निकल जाता हूँ। एक झुर्रियों वाले चेहरे के मौलवी साहब चारपाई पर बैठे पॉच-सात बच्चों को, जो बोरे वाली पल्ली पर बैठे हैं, उन्हे कुरान-शरीफ रटा रहे है। बच्चे सर और आधा धड हिला-हिलाकर आयतो की रटाई कर रहे है। मैं उन के समीप जाकर खडा हो जाता हूँ। वे तहजीबयाफ्ता और तालीमयाफ्ता हैं, लिहाजा बहुत आहिस्ता से मुस्काकर, चेहरे की झुर्रियो मे अधिक सिकुडन डालते हुए कहते है· “तशरीफ रखे जनाब।”

चारपाई बहुत जर्जर है, बिल्कुल उन्हीं की तरह—मै सॅभलकर अपना

बोझ पाटी पर करके बैठ जाता हूँ। उन को अपना इरादा बताता हूँ तो वे बिना साँस लिए बोलते चले जा रहे है। मुँह में भरे पान की छिट्टियाँ मेरे कुर्ते पर फुहारे डाल रही है। वे बताते है—

"जनाब, मै अस्सी का हूँ। अभी गर्रा नदी तक सुबो सैर करने जाता हूँ। खाना खुद पकाता हूँ। चार-चार औलादे है, सब साले बीवियो के कहने मे चलते है। कोई एक रोटी को नही पूछता। लेकिन मै किसी साले का मोहताज नही हूँ। अल्ला ने पेंसिन दे रखी है। उसी से काम चलता है। बच्चों को सुबह-शाम कुर्रान पढाता हूँ। मै··· ।" वे अपनी ही झोके चले जा रहे है। मैं धीरे से टोकता हूँ—"जी अशफ़ाक के बारे मे· ।" "हाँ-हाँ, वही बताने जा रहा हूँ। मैने उन्हें देखा नही है, लेकिन जिस दिन उनकी मय्यत फैजाबाद से आई थी, उस दिन शहर में हजारो-हजार औरत-मर्द जमा थे। क्या बहादुर जवान था, अशफाक—शहर का नाम दुनिया मे रौशन कर गया। शायर भी उम्दा था। अर्वी-फारसी, उर्दू, हिंदी जबानो में महारत हासिल थी। उन की वो लाइने—अहा-हा—क्या है वो लाइने—अरे-रे, दिमाग मे आई और निकली जा रही हैं। वाह री उम्र! हाँ-हाँ, याद आया। अशफाक ने लिखा है—

मै खिज़ाँ किस्मत मुजस्सिम गम की इक तस्वीर हूँ,
बेकसो की याद हूँ, बिगडी हुई तकदीर हूँ।
नालाहा - ए - बेरसा हूँ, आहे बेतासीर हूँ,
रास जो आती नही अफसोस वह तदबीर हूँ।
गुल भी किस्मत से हमारे वास्ते अब खार हैं,
राहतें जिनको समझते थे वो सब आजार है।
बेकसी अपनी है हमदम और मैं गमख्वार हूँ,
वो नही रोते मगर रोने के सब आसार है।
जो दुआएँ थी सरासर बददुआएँ हो गई,
दर्द ····

"अरे, भूल गया। अब दिमाग काम नही करता, जईफी आ गई।"

वे आगे बताते हैं : "हमारा ये शहर देखा है? क्या हालात हैं यहाँ? कोई इस ओर नजर ही नही करता। सब वोट के वक्त आते है, एक-दूसरे पर कीचड उलीचते हैं। सब साले वतन को बेच के खाए जा रहे है।· " सामने

बैठे बच्चे भी उनकी बाते सुनने लगते है। वे डॉटकर कहते है—"अबे, अपनी पढाई करो।" सब बच्चे नीची गर्दन करके फिर रटाई करने लगते हैं।

मौलवी साहब मे गुस्सा भरा है। वे खरखरे स्वर को फुल-पिच पर पहुँचा देते है और कहते हैं—"अल्ला, इन सालो को देखेगा। ये गरीबो, मासूमों का हक मारकर अपनी तिजोरियाँ भर रहे है। शहीदों के नाम पर चन्दा वसूलते है, उन के नाम पर वोट मॉगते हैं; खुद ऐशो-इशरत की ज़िन्दगी बिताते है और जनता से कहते हैं, हम गरीब मुल्क के बाशिदा हैं। जनता गरीब मुल्क की बाशिन्दा जरूर है, लेकिन ये साले तो अमीरी मे रह रहे है। इन के साथ बन्दूकधारी चलते है और जनता, जनता को जो चाहे लूटे, मारे-काटे।"

मौलवी साहब का पिच अब धीरे-धीरे नीचे उतर आया है, थक गए है। मै भी उन को सलाम करके उठ पडता हूँ।

गाडी आने मे अब आधा घटा ही शेष रह गया है। मै स्टेशन की ओर चल देता हूँ। वहाँ पहुँचने पर पता चलता है कि गाड़ी तीन घंटे लेट है। कही किसी नेता ने रैली कराई है। इसलिए सभी कार्यकर्ता जगह-जगह उसे रोक कर चढ़ रहे है।

तीन के बजाय चार घटे देरी से गाडी आती है। उस की छत पर भी लोग सवार है। कही तिल रखने की जगह नहीं है। आगे से पीछे तक कई चक्कर लगाता हूँ, कही जगह नही मिलती। गाड़ी सीटी देती है और चल देती है। मै हक्का-बक्का टिकिट लिए खडा लोकतंत्र का आनंद ले रहा हूँ। बाद मे टिकिट लौटा देता हूँ और बस स्टेशन जाता हूँ। बस से सात घटे मे लखनऊ पहुँचता हूँ। कम पैसो मे ज्यादा देर बस मे बैठने का आनद उठाने का अच्छा अवसर पाता हूँ।

परिशिष्ट-3

- अशफ़ाकउल्ला के पत्र
- अशफ़ाकउल्ला की गज़लें व गीत

रावण, न क़ारुन हैं न उसका खजाना और न इमाम हुसैन है न यजीद। हाँ, मगर उनकी याद, उनके कारनामे, उनके आमाल व अकबाल दुनिया के सामने मौजूद है और वह उनसे अच्छा या बुरा नतीजा निकालती है। दुनिया मे आज मुझे इन डकैतियो के इलजाम मे फॉसकर सजा दे दी जाए, दे ले, हम बेबस है। हॉ, मगर हॉ, मुन्सिफेहकीकी के यहॉ फैसला जरूर होगा, वहॉ न सी० आई० डी० की चालबाजी और न पब्लिक प्रासीक्यूटर के ही आरगूमेण्ट चलेगे, दूध का दूध और पानी का पानी होगा, मुझे इतमीनान है, मैं खुश हूँ। मेरा फर्ज और क्या है, राजी बरजाए मौला रहना :

फ़ैज़े मुहब्बत से है, कैदे मेहन
मेरे लिए एक बलाए हुस्न।

खुदा का कौल है दुनिया मे जो कुछ होता है मिनजानिब अल्लाह होता है। यह हमारा ईमान है। पस यह भी खुदा की मर्जी है कि मै फॉसी की कोठरी मे बंद किया गया। और इसमे भी कोई बला पोशीदा है जो बादीउननजर मे हम लोगो को नही मालूम होती। आप लोगों को सब्रो शुक्र से काम लेना चाहिए और जनाबे वालिदा साहिबा को अपनी, नजर खुदा की तरफ करनी चाहिए :

अजब क्या है जो बेडा गर्क होकर फिर उभर आए,
कि हमने इनकलाबे चर्खे गर्दूं यूँ भी देखे है।

खुदा मे बडी ताकत है, वह सबकुछ कर सकता है। दुआ करना इसान का काम है, कबूल करना उसका। अगर ज़िंदगी की रस्सी दराज है, तो फैजाबाद से एक दिन दूसरी जगह जरूर जाएँगे। वरना यही से जिंदगी की आखिरी सॉस लेकर दुनिया की ख़ैरबाद कहेंगे। और फिर रोजेकयामत जमीने फ़ैज़ाबाद ही से उठकर खुदायेरब्बेजलील से फरियादी होंगे। बहरहाल अभी तो कुछ महीने उम्मीद जीस्त है, यह भी बहुत काफी है। आप सबको मेरा समझाना बेकार है, क्योकि मै आप सबका छोटा हूँ। आप लोग खुद अक्लमंद है। मेरे मुकदमे की अपील की समाअत शुरू हो गई होगी। न मालूम कैसा रंग है। आप हजेला साहब और गुप्ता साहब को लिख दीजिएगा कि मुझको बराबर मुत्तला करते रहे कि क्या रग है। और नतीजे से

मुफस्सिल तौर पर इत्तिला दे। बख्शी के वालिद का क्या रहा? और उनकी बहन वगैरह गई या अभी नहीं? सब मुफस्सिल लिखिएगा। बख्शी के वालिद के मुकदमे का फैसला जो भी हो, लिखिएगा। अपील यहाँ से भेज दी है। कल नकले फैसला भी थी। वह खुद वहाँ वापस हो जाएगी। देखिए वकील कौन लिया जाएगा।

आप लखनऊ के चौधरी साहब से आकर मिलिएगा और मेरा सलाम कह दीजिएगा कि मेरे केस को आप करें और दीगर कार्यवाहियों से गाफिल न हो। अपील में चौधरी साहब का नाम, हजेला साहब का नाम लिख दिया है। अब देखिए कौन मिले। मगर आप कौंसिल के मुतालिक गाफिल न रहिएगा। अपना आदमी चीफ कोर्ट के अदर होना जरूरी है। हजेला साहब से सलाम कह दीजिएगा, ज्यादा क्या लिखूँ। भाई साहब अगर आएँ और फल लाएँ तो वह गालिबन मुझको मिल सकते है। लखनऊ जेल मे बनिस्बत यहाँ के ज्यादा आराम था। आज तक तो वही खाना मिलता है जो एक अखलाकी मुजरिम को मिलता है। मगर आज से शायद सुपरिन्टेडेंट साहब कुछ बेहतर दे मगर कहाँ लखनऊ जेल और कहाँ फैजाबाद।

हजार शेख ने दाढी बढ़ाई सन की सी,
वलै वह बात कहाँ मौलवी मदन की सी।

खैर, फीअमानिउल्ला बुजुर्गो की खिदमत मे आदाब दस्तबस्ता कुबूल हो। बच्चों को प्यार, छोटों को दुआ :

हसरत बहुत है मरतबाए आशकी बुलद,
मुझको तो मुफ्त लोगो ने मशहूर कर दिया।

खुदा का शुक्र है, यह दिन भी गुजर जाएँगे। रामप्रसाद का कौन वकील है या खुद वह चीफ कोर्ट में लाए जाएँगे? और कौन-कौन किस-किस की तरफ से है? और जाहिरा क्या असबाब है? भाई साहब जब यहाँ आएँ तो लखनऊ में हजेला साहब और गुप्ताजी से मिलकर आएँ और फल वगैरह भी लेकर आएँ। मुन्नू भैया को मेरी खैरियत लिख दीजिएगा और वहाँ के अहबाब को सलाम कहिए। जिनको लिखा था, उनसे सलाम कह दीजिएगा। अगर वह दोनो आ सके तो आ सकते हैं, वरना उनकी मर्जी।

अशफ़ाकउल्ला के पत्र

. 1 .

डिस्ट्रिक्ट जेल, फ़ैज़ाबाद
21 जुलाई 1927

बनाम रियासतउल्ला खॉ,

जनाब भाई साहब किबला बसद अदब गुजारिश है कि मै बखैरियत हूॅ और खैर व आफियत आप लोगो की बदरगाहे रब्बे बेनियाज नेक-मतलूब-कार्ड मुरसिला पहुॅचा—हालात से आगाही हुई। ऐनुद्दीन साहब के बारे में जो लिखा है उनके लिए मुझे किसी का एक शेर याद आ गया। लिखे देता हूॅ :

की मेरे क़त्ल के बाद उसने जफा से तोबा,
हाय उस जूद पशेमां का पशेमां होना।

जिस-जिसने मुझे फॅसाने की कोशिश की उन सबका शुक्रिया। अगर तेरी जान की कुर्बानी उन लोगो के मुफीदकार हो तो जहे किस्मत। मै भला कहॉ इस काबिल था कि मै दुनिया मे किसी तरक्की व नामवरी का बाइस होता। जिदगी और मौत यह तो दुनिया में चला ही जाता है। अगर मौत व जिंदगी का साथ न होता तो न तो जिंदगी का ही मजा रहता और न कोई मौत का ख्याल करता और न खुदा की खुदाई मानता। जो पैदा हुआ, और कुरयेआलम की हवा मे सॉस ली, उसके लिए मौत जरूरी हो गई। अजआदम ताईदम। बडे-बडे अबिया, औलिया व तकिया, पहलवानाने-तुहमतन हसीनानेदहर गर्ज कि सभी किस्म के आदमी आगे आए और अपना-अपना पार्ट दुनिया के स्टेज पर खेल-खेलकर चले गए। अब न मूसा है, न फिरऔन, न यूसुफ हैं न अजीजे मिस्र, न कृष्ण है न कस, न राम है न

रावण, न कारुन है न उसका खजाना और न इमाम हुसैन है न यजीद। हॉ, मगर उनकी याद, उनके कारनामे, उनके आमाल व अकबाल दुनिया के सामने मौजूद है और वह उनसे अच्छा या बुरा नतीजा निकालती है। दुनिया में आज मुझे इन डकैतियो के इलजाम मे फॉसकर सजा दे दी जाए, दे ले, हम बेबस है। हॉ, मगर हॉ, मुन्सिफेहकीकी के यहॉ फैसला जरूर होगा, वहॉ न सी० आई० डी० की चालबाजी और न पब्लिक प्रासीक्यूटर के ही आरगूमेण्ट चलेगे, दूध का दूध और पानी का पानी होगा, मुझे इतमीनान है, मै खुश हूँ। मेरा फर्ज और क्या है, राजी बरजाए मौला रहना

फ़ैज़े मुहब्बत से है, कैदे मेहन
मेरे लिए एक बलाए हुस्न।

खुदा का कौल है दुनिया मे जो कुछ होता है मिनजानिब अल्लाह होता है। यह हमारा ईमान है। पस यह भी खुदा की मर्जी है कि मै फॉसी की कोठरी में बंद किया गया। और इसमे भी कोई बला पोशीदा है जो बादीउननजर मे हम लोगों को नहीं मालूम होती। आप लोगों को सब्रो शुक्र से काम लेना चाहिए और जनाबे वालिदा साहिबा को अपनी, नजर खुदा की तरफ करनी चाहिए.

अजब क्या है जो बेड़ा गर्क होकर फिर उभर आए,
कि हमने इनकलाबे चर्खे गरदूँ यूँ भी देखे हैं।

खुदा मे बड़ी ताकत है, वह सबकुछ कर सकता है। दुआ करना इंसान का काम है, कबूल करना उसका। अगर जिदगी की रस्सी दराज है, तो फैजाबाद से एक दिन दूसरी जगह जरूर जाएँगे। वरना यही से जिंदगी की आखिरी सॉस लेकर दुनिया की खैरबाद कहेंगे। और फिर रोजेकयामत जमीने फ़ैज़ाबाद ही से उठकर खुदायेरब्बेजलील से फरियादी होगे। बहरहाल अभी तो कुछ महीने उम्मीद जीस्त है, यह भी बहुत काफी है। आप सबको मेरा समझाना बेकार है, क्योंकि मै आप सबका छोटा हूँ। आप लोग खुद अक्लमद है। मेरे मुकदमे की अपील की समाअत शुरू हो गई होगी। न मालूम कैसा रंग है। आप हजेला साहब और गुप्ता साहब को लिख दीजिएगा कि मुझको बराबर मुत्तला करते रहे कि क्या रग है। और नतीजे से

मुफस्सिल तौर पर इत्तिला दे। बख्शी के वालिद का क्या रहा? और उनकी बहन वगैरह गई या अभी नही? सब मुफस्सिल लिखिएगा। बख्शी के वालिद के मुकदमे का फैसला जो भी हो, लिखिएगा। अपील यहाँ से भेज दी है। कल नकले फैसला भी थी। वह खुद वहाँ वापस हो जाएगी। देखिए वकील कौन लिया जाएगा।

आप लखनऊ के चौधरी साहब से आकर मिलिएगा और मेरा सलाम कह दीजिएगा कि मेरे केस को आप करे और दीगर कार्यवाहियो से गाफिल न हो। अपील में चौधरी साहब का नाम, हजेला साहब का नाम लिख दिया है। अब देखिए कौन मिले। मगर आप कौंसिल के मुतालिक गाफिल न रहिएगा। अपना आदमी चीफ कोर्ट के अदर होना जरूरी है। हजेला साहब से सलाम कह दीजिएगा, ज्यादा क्या लिखूँ। भाई साहब अगर आएँ और फल लाएँ तो वह गालिबन मुझको मिल सकते है। लखनऊ जेल मे बनिस्बत यहाँ के ज्यादा आराम था। आज तक तो वही खाना मिलता है जो एक अखलाकी मुजरिम को मिलता है। मगर आज से शायद सुपरिन्टेडेंट साहब कुछ बेहतर दें मगर कहाँ लखनऊ जेल और कहाँ फैजाबाद!

हजार शेख ने दाढी बढ़ाई सन की सी,
वलै वह बात कहाँ मौलवी मदन की सी।

खैर, फीअमानिउल्ला बुजुर्गों की खिदमत में आदाब दस्तबस्ता कुबूल हो। बच्चों को प्यार, छोटो को दुआ·

हसरत बहुत है मरतबाए आशकी बुलद,
मुझको तो मुफ्त लोगो ने मशहूर कर दिया।

खुदा का शुक्र है, यह दिन भी गुजर जाएँगे। रामप्रसाद का कौन वकील है या खुद वह चीफ कोर्ट मे लाए जाएँगे? और कौन-कौन किस-किस की तरफ से है? और जाहिरा क्या असबाब है? भाई साहब जब यहाँ आएँ तो लखनऊ मे हजेला साहब और गुप्ताजी से मिलकर आएँ और फल वगैरह भी लेकर आएँ। मुन्नू भैया को मेरी खैरियत लिख दीजिएगा और वहाँ के अहबाब को सलाम कहिए। जिनको लिखा था, उनसे सलाम कह दीजिएगा। अगर वह दोनों आ सके तो आ सकते है, वरना उनकी मर्जी।

मुसीबत और दु:ख मे कोई किसी का दोस्त नही होता। बनी के सब साथी और दोस्त है, यही हाल उनका भी है, नई बात नही है। मेरा सबको सलाम। उम्मीद है आप मुफस्सिल जवाब देगे। सैयद को भी खत लिख देना कि मै अच्छा हूँ और तुम्हारी सबकी मुहब्बत का ख्वाहा हूँ। और लिख दीजिएगा कि बूढे को भी सलाम कह दें। और मि० जान को भी सलाम कह दें। अब देखना यह है कि आखिर क्या रहे। दुआ करो उससे जिसको तुम नही मानते। खैर, खुदा मदद फरमाए! आमीन! यह इबारत बजिनसही लिख दीजिएगा।

—अशफाक वारसी 'हसरत'

: 2

अज ज़िन्दाने
फैज़ाबाद
29 नवंबर 1927

खत बनाम रियासतउल्ला खॉ,

प्यारे भाई साहब। कार्ड मुरसिला ऑ जनाब मिला। हालात से अगाही हुई। कजा व कदर मे चारा ही क्या है? रजो-मुसीबत में इन्ना-विल्लाह पढकर सब्र करना चाहिए। इससे कब्ल के खत मे साफ लिख दिया कि खुद हर सूरत से, माल से, औलाद से, जानो से, जानवरों से इम्तिहान लेता है, पस जिसने सब्र किया, उसने उसे राजी कर लिया। क्योकि वह साबिर और शाकिर का साथी है। खुदा ही देता है और खुदा ही लेता है और वह फिर देगा। हर हाल में शुक्र कीजिए। भाभी को खुदा के सुपुर्द करता हूँ। खैरियत से मुत्तला फरमाइएगा। और उम्मीद है कि इस मर्तबा भाई साहब मुझसे मुलाकात करने आएँगे। क्योकि इस मर्तबा उनसे मुलाकात करने की मुझे सख्त जरूरत है। मसनवीशरीफ मिल गई है, खूब है। भाभी की तरफ से फिक्र है, जल्द मुत्तला फरमाइए। वालिदा साहिबा व भाई साहब किबला की खिदमत मे आदाब दस्तबस्ता कबूल हो।

—कैदिये ज़िन्दाने फरग अशफाक वारसी

3

कण्डैम्ड सैल,
फ़ैज़ाबाद
7 दिसबर 1927

मुकर्रम व मुअज़्ज़म जनाब भाई साहब किबला दामजिल्लकुम,

बसद अदब गुजारिश खिदमते आली है कि मै बखैरियत हूं और खैर-आफियत आपकी मय दीगर मुतअल्लकीन के नेक मतलूब। लल्लू भैया (रियासतउल्ला खॉ) के खत से मालूम हुआ कि अपील दाखिल हो गई है। 6 तारीख को बाबू मोहनलाल सक्सेना के पास दरियाफ्तहाल के लिए खत लिख दिया है। आप लोगो मे से जो आए, वह मिलता हुआ आए ताकि ताजे वाकियात व हालात से खबर मिले। भाई साहब, दुनियावी ताकतें मुजमहिल और मजहूल साबित हुई। अब उसी का दर खटखटाइए जिसके दरवाजे से सबको मिलता है और जहॉ से हुक्म सादिर होकर सूरतेअमल अख्तियार करता है। उसका जरा-सा इशारयेकरम काफी है और वह जब पूरा करना चाहता है किसी काम को, तो बस उसको कहता है कि हो जाए और वह हो जाता है। होगा तो वही से और न होगा तो उसी के हुक्म से। पस उसी से लौ लगाइए और। उसी की इल्तिजा और मेरे लिए दुआ फरमाइये कि तौबा कबूल फरमाए और रहम करे। उसी की दरगाह में इल्तिजा कीजिए और बुजुर्गो का दामन थामिए। यही अब कशूदेकार का बाइस हो सकता है। मै अपनी कैफियते-कल्ब भी लिख नही सकता। और यूँ ही मैने अगले खत मे आपको भी लिख दिया था कि जबानी कहकर सलाह लूँगा और अपने दर्द की दवा ढूँढ़ने के लिए आपसे अर्ज करूँगा। लल्लू भइया ने दुनियावी कोशिशो मे खाक छान डाली। अब आप मेरी दीनी मुश्किलात मे मदद फरमाइए। खुदा मालूम मैंने किस सूरत से यह इतजार के दिन गुजारे। इस इतवार को खत देखते ही तशरीफ लाइए।

—अशफ़ाकउल्ला खॉ

: 4 :

(माँ को जेल से लिखा गया खत)

डिस्ट्रिक्ट जेल,
लखनऊ

जनाब वालिदा साहिबा,

बाद अदब ये गुज़ारिशे खिदमते बाबरकत है कि बदा खैरियत है और सेहनबरी मिज़ाजे ऑजनाबा नेक मतलूब। 4 जून को मुकदमे की सुनाई खत्म हो गई और असेसरान की राय भी ले ली गई। यह सुनकर आपको बहुत दुख होगा कि मोअज़्ज़ज़ हिंदुस्तानी असेसरान ने क्या राय दी। मै आपको हरगिज न लिखता मगर मैं इसको अपना फर्ज ख्याल करता हूँ कि अपने मुकदमे के हालात से आपको काफी तौर से आगाह कर दूँ। यह तो आप जानती ही हैं कि चार असेसरों मे से एक का इंतकाल हो गया था और तीन बाकी रह गए थे, जिनमे एक खुदातरस बूढ़े ने हम दोनो को बिल्कुल बेकसूर कहा और दो ने न सिर्फ खुफिया साज़िश करनेवाला ही कहा, बल्कि डाकू भी कहा। खैर, इसका अफसोस मुझे तो कुछ भी नही, आप करे तो करे। यह हिंदुस्तानी ही तो हैं, जो हम पर जुल्म कर रहे है। और वह भी हिंदुस्तानी ही तो थे, जिन्होने मुझको इस मुकदमे मे ख्वाहमख्वाह घसीटा। अगर अग्रेज आज मेरे खिलाफ हो और मुझ पर ज्यादती करे हक बजानिब है क्योकि अपने मुल्क को फायदा वह इसी हाल मे पहुँचा सकते है कि हम पर हुकूमत करे, मगर तआज्जुब तो इन हिंदुस्तानियो पर है जो इस तरह ख्वाहमख्वाह बगैर समझे-बूझे महज खुशनूदीए मिजाज की खातिर हॉ मे हॉ मिला देते है। वह यह नही जानते कि हकीकतन उनकी क्या इज्जत अग्रेज कौम के दिल में है। अंग्रेज किसी भी ऐसे इंसान को पसंद नही करते जो काम निकालने की खातिर उनकी पीठ ठोक दिया करते है। खैर, मुझे इस मसले पर बहस नही करना है। मुझे तो आपको समझाना है। आपसे इस बात के लिए कहना है कि जो आप जैसी जईफ के लिए न सिर्फ बेजा बल्कि जुर्म होगा। यानी सबरोसुकून (शात और धैर्य) के बारे मे। बजाहिर सब्र तल्ख मालूम होता है मगर बाद को मीठा फल लाता है।

मैं बचपन से आपकी सब्र आजमा तबीयत देखता चला आ रहा हूँ और

आपको एक साबिर और राजीबरजाए मोला (ईश्वर की इच्छा पर राजी) पाया। यूँ ही मै आज पाक खुदा के नाम पर आपसे सबके लिए अपील करूँगा। आपकी उम्र का आखिरी हिस्सा निहायत अफसोसनाक और तकलीफ से भरा हुआ है। मगर यह सब महज इस वजह से कि खुदा का हुक्म यही है। आराम व राहत, तकलीफ व मसाइब (मुसीबते) सब उनके हुक्म के ताबे है। तारीखे मजहबी पर एक सरसरी नजर डालिए। अच्छा वाकये-कर्बला को ही लीजिए। क्या किसी मजहब की ऐसी दर्दनाक और खूनी तारीख मिलेगी कि खवातीन (महिलाऐं) खानदाने नबी को अपने बच्चो और घरवालो के जनाजे देखना पडे। क्या उनकी दानिस्त और इल्म मे नेजो, तलवारो और तीरो का निशाना न बनाए गए। सब कुछ हुआ और क्यों? महज इसलिए कि आइदा जब किसी पर दुख और तकलीफ आए, वह इस मिसाल को अपने सामने रखे और सब्र करे। आपको इस किस्म की मिसाले देना, हिमाकत होगी क्योकि बफजले तआला आप मुझसे ज्यादा लायक और वाकिफ है। मै इसे अब मजाक समझता हूँ कि लिखूँ कि मै बेकसूर हूँ क्योकि मेरा सबसे बडा कसूर यह था कि मै मोटा-ताजा हूँ और मिस्टर खैरात नबी की बहस के मुताबिक मुझको बडा मुजरिम होना चाहिए। वह मसखरापन कोर्ट मे हुआ कि खुदा की पनाह। मुझे तो न पहले उम्मीद थी, न अब है, मगर भाई साहब और लल्लू भैया के कहने के मुताबिक सफाई वगैरह पेश कर दी और चाराजोई की—खैर! अब सुनिए, आपको मालूम हो जाना चाहिए कि खैरात नबी ने साफ अलफाज मे कह दिया है कि इंतहाई सजा मिलेगी (यानी सजाए मौत)। मेरे लिए तो यह एक बड़े मजे की बात है। मेरे लिए इससे ज्यादा फख्र की बात कौन-सी हो सकती है। मेरी माँ से बढकर मेरे खानदान में कौन-सी माँ हो सकती है, जिसका बेटा जवाँमर्दी और बहादुरी से, इस्तकामत (साहस और दृढता) व इस्तकलाल से रास्तबाजी (सत्यता) के साथ, मासूमियत का जामा पहने हुए, कुरबानगाहे वतन पर कुरबान हो जाए। मेरे लिए सकून व इतमीनान यूँ ही है कि मैं अपने को मासूम (निरपराध) समझता हूँ और आपके भी सब्र के लिए यह काफी है कि आपका मासूम लडका एक ऐसे मकसद की खातिर जान से जाएगा, जो बडा ऊँचा और नेक व पाक है।

(जेल से आए इस पत्र मे दो स्थान पर दो लाइने काट दी गई, जो पढने

मे नही आती है-—)

इन इलजामात (अभियोग), जो मुझ पर लगाए गए है मै कभी भी इनके लिए तैयार नही हूँ। हाँ, एक हिंदुस्तानी होने की वजह से अगर यह तमाम बाते है तो खैर—दुनियावी बादशाहतें खत्म हो जाएँगी। किब्रो-गरूर मिट्टी मे मिल जाएगा—शौकत और हशमत (ठाट-बाट) का कही पता भी न होगा मगर हाँ खुदावद कद्दूस के दरबार मे वाकियात असली रोशनी मे होगे और वह हाकिम हकीकी जिसने 'मूसा' और 'फिरऔन' का फैसला किया था मेरा भी करेगा। चद रोज जिदगी पर खुश होने वाले इसान जुल्मातेअद्दी करने वाले सी० आई० डी० के लोग उस दिन मालूम करेंगे कि वे किसके सामने जवाबदेह है। आप खुदा पर शाकिर रहिए। सब्र कीजिए और मेरे लिए दुआ फरमाइए और अगर उसको मुझे शहादत की इज्जत देना मकसूद है, तो अजमो इस्तकलाल, जुरअत व हिम्मत भी अता करे और इम्तिहान के दिन मुझे बहादुर बनाए। आप कभी अफसोस न करे कि मैंने ऐनुद्दीन साहब और तसद्दुक साहब के कहने पर अमल नही किया। क्या वह इस बात की गारटी कर सकते थे कि मैं कभी न मरूँगा। नही, मौत व जिदगी खुदावदे करीम के हाथ मे है और दुनियावी ताकतो से बालातर एक ताकत है जो निजामे आलम को सँभाले हुए है।

मौत और जिदगी का साथ है—जो दुनिया मे आया वह एक रोज जरूर मरेगा—फिर एक ऐसी चीज, जिसका आना लाजिमी है, जरूरी है। गम करना या खौफ खाना फिजूल व अबस है। मैं अप्रूवर हो सकता था, मै इकबाली बन सकता था, मगर दूसरो की जान फँसाने के लिए अपनी जिदगी बचाने के लिए वह इंसान जो अपनी जिदगी की खातिर कमीनी हरकत करता है, क्या वह आने वाली नसलो के लिए वाइसे-नाज हो सकता है—नही, कभी नहीं।

मुझे इतमीनान है—मुझे खुशी है कि आने वाली नस्ल मुझको डरपोक और कमीना न कहेगी बल्कि सच्चा और बहादुर कहेगी। दुनिया महज इसी पर मरती है कि मरने के बाद उसको बुरे अलफाज से न याद किया जाए। मसजिदे, तालाब, मदरसा, कुएँ बनाकर छोड़ जाते है ताकि बाद को याद रखे जाएँ। मेरी मासूमियत भी कभी फरामोश नही की जा सकती। बस, मुझे कुछ लिखना नही। आपको फख्र करना चाहिए कि आपका बच्चा बहादुरी की मौत

मरेगा। अगर मौत से मुकाबला करना पडा तो आपको भी एक बहादुर माँ साबित करना होगा—क्या आपकी रगो मे खालिस अफगानी खून नही है। क्या आप मेरी माँ नही है। आप पठान है, आप मेरी माँ है। यह आपके ही दूध का असर है, जो मै इन्तहाई खौफनाक बातों पर हँस देता हूँ।

आप मुझसे मिलने को आएँगी, बोलो—व भाभी आएँगी, मगर बहादुर बनकर आएँ, जैसी पहले बनकर आई थी। मुझको बहादुर बनाकर वापस जाएँगी। मैं आपसे एक बार मिलकर जबानी बातचीत करना चाहता हूँ। क्या मौत से पहले खुदा के हुक्म के बिना मुझको कोई मार सकता है या तकलीफ मे डाल सकता है? नही, कभी भी नही। फिर जो कुछ भी है सब मिनजानिब अल्लाह है। इस पर सब्र करना शाने बंदगी है। चद बद किसी के याद आ गए लिखे देता हूँ। उनको पढ लीजिए। लल्लू भैया जब इतवार को आएँ तो महबूब से मिलते आएँ। अगर वह आएँ तो हमराह लेते आएँ और बिस्तरबद भी जरूर लाएँ ताकि सामान व बिस्तर वगैरह बाँधकर दे दूँ, बिस्तरबंद भूले नही—

है अर्ज आज मादरे नाशाद के हुजूर
मायूस क्यो है आप अलम का है क्यो वफूर
सदमा यह शाक आलमे पीरी मे है जरूर
लेकिन न दिल से कीजिए सब्रो-करार दूर
शायद ख़िज़ाँ से शक्ल अया हो बहार की
कुछ मसलहत इसी मे हो परवरदिगार की
यह जाल ये फ़रेब ये साज़िश यह शोरो-शार
होना जो है सब उसके बहाने है सर बसर
असबाब ज़ाहिरी है न उन पर करो नजर
क्या जाने क्या हो परदये कुदरत से जलवागर
खास उसकी मसलहत कोई पहचानता नहीं
मंजूर क्या उसे है? कोई जानता नहीं
राहत हो रज हो कि खुशी हो कि इतशार
वाज़िब हर रंग में है शुकरे मिर्दगार
तुम ही नही हो कुशतए नेरंगे रोजगार

मातमकदे मे दहर के लाखो है सोगवार
सख्ती सही नही कि उठाई कडी नही
दुनिया मे क्या किसी पे मुसीबत पडी नही
देखे है इससे बढ के जमाने ने इन्कलाब
जिनसे कि बेगुनाहो की उमरे हुई खराब
सोजे दरूँ से कलबो जिगर हो गए कबाब
पीरी मिटी किसीकी किसीका मिटा शबाब
कुछ बन नही पडा जो नसीबे बिगड गए
वह बिजलियाँ गिरी कि भरे घर उजड़ गए
पडता है जिस गरीब पै रजो-महन का वार,
करता है इनको सब्र अता आप किर्दगार
मायूस होके होते हैं इन्साँ गुनाहगार
यह जानते नही, वह है दानाये रोजगार
इंसान उसकी राह में साबित कदम रहे
मरदन वही है अमरीरजा मे जो खम रहे

इन अशआर को जो किसी शाइर ने लिखे है, पढिए और खुदा से मदद माँगिए। आप कभी भी यह ख्याल न कीजिए कि आप नुक्सान मे है। यहाँ पर मुझे एक किस्सा याद आ गया। इंग्लैड के एक बडे शख्स हिदुस्तान आए। वह अपनी बीवी के हमराह आगरे गए। जब ताजमहल मे पहुँचे तो उनकी बीवी ने कहा कि अगर कोई वायदा करे कि मेरे मरने के बाद ऐसी आलीशान इमारत जैसा यह ताजमहल है, बनाकर मुझे दफन करेगा तो मै इसी वक्त अपने गोली मारने को तैयार हूँ। यह बात उस औरत ने कैसे कही, महज इस वजह से कि मरने के बाद वह ख्वाहिशमंद थी कि याद की जाए। हर शख्स की ख्वाहिश होती है कि मर जाने के बाद लोग उसको भूले नही और याद करे। मै भी फख्र करता हूँ कि ख्वाह मै इस लायक था, या न था मगर लोग मुझको समझते हैं और हरगिज फरामोश न करेगे। मै सी० आई० डी० का मशकूर हूँ कि उसने हमेशा की जिंदगी दे दी, मेरे खानदान को फख्र करना चाहिए। जो मैं हूँ, वह मैं खुद जानता हूँ, और सी० आई० डी० भी खूब जानती है। खैर, अब खत्म करता हूँ, खुदा आपको सब्र अता फरमाए

और मुझको इस्तकलाल दे। भाई साहब, अब्दुल कादिर दादा, बूलू भाभी, दिल्ली वाली भाभी, शहादत भाई की दुल्हन को सलाम। रजी, अनीसा, खलील, रुकय्या, सुल्ताना, माहजबीन सबको दुआ व प्यार।

—अशफ़ाकउल्ला खॉ

: 5 :

मेरी सोगवार मॉ—भाइयो, बहनो और अजीज़ो! यह खत जबकि तुम्हारे हाथ मे पहुँचेगे तब न मालूम तुम्हारा हाल क्या होगा। न मालूम उस वक्त मै जिदा रहूँगा या राही-ए-अदम हो चुका हूँगा। मुझे पूरा इतमीनान है कि जेल के हुक्काम यह खत जरूर रवाना कर देंगे। जबकि यह मरने वाले की आखिरी ख्वाहिश है। बहरहाल मैं लिख रहा हूँ, अब खुदा आलिम है कि क्या हो। खैर, आखिरी हुक्म आ गया है, अब दो-एक रोज के मेहमान है।

इसान की कोशिश हुक्म खुदावदी को टाल नही सकती। जिसने बिसातेआलम पर मोहरे लगाए, वह मौत के हाथो जरूर मात खाएगा। आज आदम ताईदम कौन रहा है या कौन बाकी रहेगा। एक खानदान के अदर दस-पॉच आदमी होते है, वक्तन-फवक्तन जिसका वक्त पूरा होता जाता है वह कूच कर जाता है। बकिया रोते-धोते है जो तकाजाए मुहब्बत है। मगर इनमे से जाना हर एक को है। कोई जल्दी जाएगा, कोई बदेर। जिसको आप लोग समझते हैं कि कब्ल-अज-वक्त मर गया, वह उम्र ही इसलिए लेकर आया था और बाकी मसलहत खुदा जानता है। जिसको हुक्म उसकी जानिब से होता है वह लब्बैक कहता है और चला जाता है। तुम्हारे दिलों को रज होगा, गम करोगे, मगर खुदा के नाशुक्रे न बनना। सब्र करना और मेरे लिए मगफिरत की दुआ करना कि खुदा मुझ पर रहम करे और जवारे रहमत मे जगह दे। मै तुम्हारे लिए सब्र की दुआ करता हूँ।

मौत इसी बहाने थी सो आएगी और जो-जो लिखा है वह भी पूरा होगा। उसके हुक्म मे मजाले दमजदन नहीं। उसी की अमानत थी, उसी की जानिब वापस जाती है। आप लोगो के साथ इतना ताल्लुक उसने पैदा कर दिया था, वह अब रखना नही चाहता, तुम लोगो को क्या-क्या लिखकर

समझाऊँ। मुझमे न इतनी काबिलियत है, न मैं आलिमेदीन हूँ कि मजहबी बाते लिखूँ या आहादीस व आयत लिखूँ। हॉ, बस इतना जानता हूँ और इतना ही लिखना चाहता हूँ कि सब फानी है और सबको फना है। सब मरेगे, न कोई रहा है और न कोई रहेगा। रहेगा तो वह, बस वही खुदावदकुद्दूस ही रहेगा जिसने दुनिया रची है। हम लोग खुदा को मानते है और मुत्तबये जानावेरसूल करीम है अगर दावा सही है तो बस :

है रजा उसकी तो हम पर बहरहाल ये फ़र्ज,
शुक्रे हक लब पे रहे शिकवये आदा न करें।
मान लें फैसलाए दोस्त को बेचूनो चरा,
फ़िकरे इमरोज ही रक्खे गमे फरदा न करे।

बस जाते खुदावदी से सामने सरे नियाज खम कर दे और अपने को उसकी मर्जी पर छोड दें। रोजे जजा का वह मालिक है। इसका भी गम न करे क्योंकि गुलाम है जनाबे रसूले करीम सलल्लाहो अलैहे वसल्लम के। ऐ मातम कुनिन्नदिमाने अशफाक! सब्र करो और दुआ करो कि वहॉ की मुसीबत आसान हो।

बनकर मै रजाकार मोहइयाये कजा हूँ,
आवाजे हके बॉगे दिरा मेरे लिए है।
खुशनूदिये फिरऔन के पैरो है यजीदी,
तकलीदे शाहे करबोबला मेरे लिए है।

मेरी जिंदगी इतनी ही थी। न वह घट सकती है, न बढ सकती है। न तुम्हारा नालओबुका का ही काम आ सकता है। न आह बजारी ही जिदगी का एक लमहा बढा सकती है। हॉ, तुम्हारी दुआएँ मेरे लिए वहॉ काम आ सकती है। पस सब्र करो और दुआ से याद करो। मै नही जानता कि मेरी लाश तुम लोगो को दी जाएगी या न दी जाएगी। यूँ तो जब जान निकल गई फिर मिट्टी का ढेर है। मगर फिर भी मुझे तसफीश है। खैर, मुरदा बदस्त जिदा का मजमून है। जबरदस्ती जो चाहे करे। उसका हर फेल दुरुस्त है। खैर मै अपने दिमाग को इस ख्याल से परेशान करना नही चाहता। दो भी हो, हो, इसमे कोई शक नही है कि मै तख्तयेमौत पर खड़ा हुआ यह खत लिख

रहा हूँ, मगर मैं मुतमइन व खुश हूँ कि मालिक की मर्जी इसी मे थी। वडा खुशकिस्मत है वह इसान दो कुर्बानगाहे वतन पर कुर्बान हो जाए। गोकि यह फिकरा जिस स्प्रिट के साथ मे लिख रहा हूँ वह आप लोगो मे नहीं है। यूँ आपको तकलीफ महसूस होगी। मेरी गजलियात मकान पर मौजूद होंगी। वह आज से बहुत पहले की लिखी हुई है, उनको पेशीनगोई समझिएगा और वैसा ही होना था जो कलम से निकला। मेरे सुकून की वजह मेरी बेगुनाही है और यकीन रखिए कि अशफाक का दामन इसानी खून के धब्बे से पाक व साफ है।

मेरे घर आने वाले बच्चो, और मौजूदा छोटो, तुम जब दुनिया मे आओगे, मेरी कहानी सुनने को पाओगे और तहरीर देखोगे। मेरी इस तहरीर को मेरे दिमाग का असर न समझना। मै बिल्कुल सही दिमाग का हूँ और अकल ठीक काम कर रही है। मेरा मकसद महज आनेवाले बच्चो के लिए लिखना यूँ है कि वह अपने फराइज महसूस करे और मेरी याद ताजा रखे। प्यारे रजी व खलील—तुम्हारा चचा चद रोज के बाद इस दुनिया में नही रहेगा और हमेशा-हमेशा के वास्ते तुम सबको छोड़ जाएगा। तुमसे वह कुछ नही चाहता और न कहना चाहता है। तुम्हारा खुदा मददगार रहे। तुम्हे परवान चढाए। आला तालीम अता फरमाए और तुम्हे किसी काबिल बनाए। काबिले-फख्रे खानदान करे।

किये थे काम हमने भी जो कुछ हम से बन आए,
ये बाते जब की है आजाद थे और था शबाब अपना।
मगर अब तो जो कुछ भी हैं उम्मीदे बस वह तुमसे हैं,
जवॉ तुम हो लबे बाम आ चुका है आफताब अपना।

तुमको बुजुर्गो की राय पर चलना चाहिए और तालीम मे तन-मन-धन लगा देना चाहिए और बेहतरीन इसान अपने को साबित करना। मेरी बस तुमसे इतनी ख्वाहिश है और मौत का ख्याल रखना। वतन की मुहब्बत का मुझ पर इल्जाम लगाया गया है और यूँ ही सजाए मौत मिली। जब तुम इस काबिल होगे मेरे मुकदमे की कुल कार्यवाही पढना। ज्यादा तुमको क्या लिखूँ। मेरी दुआएँ तुम्हारे साथ है।

—अशफाकउल्ला खॉ

6 ·

(फैसले से एक दिन पूर्व माँ को लिखा गया पत्र)

8 अक्टूबर 1927

जनाबा वालिदा साहिबा,

बखैरियत हूँ और जनाबा की खैरियत का ख्वाहा हूँ। कल फैसला सुनाया जाएगा। खुदा मुझको हिम्मत दे। ताकत, इतमीनान दे। सुकूने कल्ब अता फरमाए। आप सबको सब्र दे। दुनिया सराय-फानी है। कौन रहा है और कौन रह जाएगा। अज आदम ताईदम मौत व जीस्त का सिलसिला चला जा रहा है और चला जाएगा। कहाँ तक गम, कहाँ तक रंज किया जाए। मुझे अपनी सजा का कोई गम नही, कोई रज नही। सजाए मौत या सजाए कैद या कोई भी हो मेरा ईमान है कि सब मिनजानिब अल्लाह होगी। फिर "सरे तसलीम खम है जो मिजाजे यार में आए।" मगर जो दुख है वह तुम्हारी जईफी का है। जो तकलीफ है वह तुम्हारी कमजोर और काबिले रहम हालत पर। खुदा वाकिफ है कि इस इतवार की मुलाकात के बाद किसी घडी किसी पल तुम्हारा कमजोर चेहरा और नाउम्मीदी से भरे हुए अल्फाज फरामोश नही कर सका। खैर, जो मर्जी मौला। मेरी गुजारिश और आखिरी गुजारिश यह है कि अगर खुदा ने जिदा मुझको बाहर निकाला, तो आपकी जईफी देखकर जिसकी मुझको उम्मीद तो है ही नही, वैसे हुआ है कि खुदा आपको उम्रेनूह अता फरमाए। आप अपनी तस्वीर हिंगू से खिचवा लीजिएगा। आप कुछ फिक्र न करे। वह आपका दामाद है और सामने आता है यानी साफिया का खाविद। कम-अज-कम बाहर आकर आपकी तस्वीर से कुछ तसल्ली होगी। आप बखूबी वाकिफ है कि आपको बिना देखे हुए मैं दो रोज भी नही रह सकता। मगर यह मसला मजबूरी और इज्जत व जिल्लत का था। लिहाजा उन लोगो के कहने पर नही चला। क्योकि जिदगी जैसी जलील चीज के लिए दुनिया की नजरो मे और अपनी नजरो मे गिरकर रहने से मौत बेहतर व अफजल है।

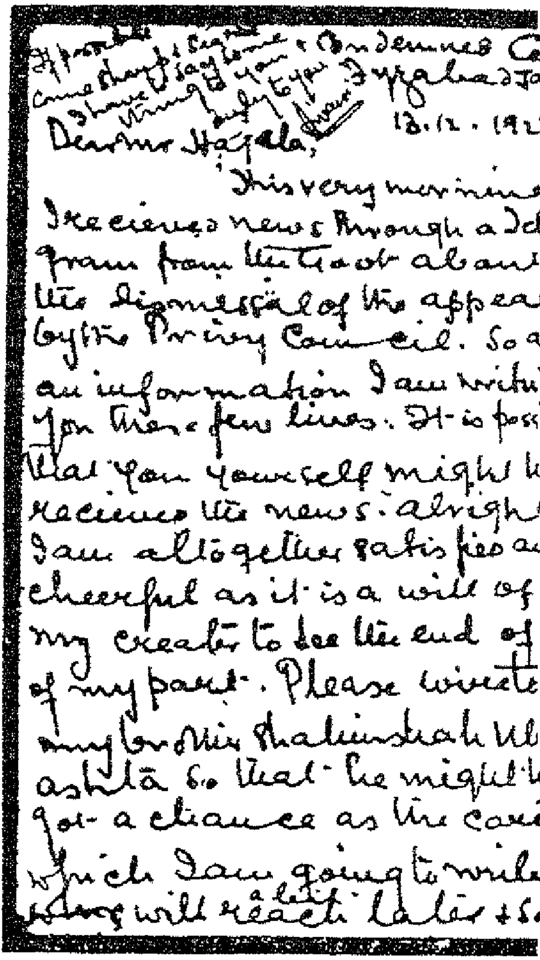
काश कि खुदा एक मौका और अता करता कि आपकी खिदमत करूँ और कदमों से जुदा न हूँ। मैं निहायत बदकिस्मत हूँ कि आपकी खिदमत

करने का जब मेरा वक्त आया तो आपके कदमो से दूर हूँ। खैर खुदा की मर्जी यही थी। आप भी सब्र कीजिए और मेरे लिए दुआ कीजिए। आपको जईफी मे जो मुझसे दुख पहुँचा, आप खुदारा मुझे माफ फरमाइएगा। तब दिल को तस्कीन होगी। ज्यादा क्या लिखूँ। हाँ, एक बात और यह है कि मेरे फैसले के बाद लोगो को ढोग न फैलाने देना, जो बिहीख्वाह और दोस्त थे, सब मालूम हो गए। आपके खानदानवालो को भी देख लिया। मेरा खानदान मेरे हकीकी भाई, मेरी भावज, बहन व बहनोई है। और मुल्क के हिदू और मुसलमान मेरे भाई व बुजुर्ग है। और किसी बदमाश से वास्ता नही। जो मुसीबत मे शरीक था, वह बहादुर और दोस्त है। बाकी सब कमीने है, जो आरामो आराइश के साथी और दुख-दर्द पर अलग। मै कसम खाकर कहता हूँ कि मै उन सबसे नाराज हूँ। अगर बाहर निकलने का मौका मिल गया तो उनसे कितातआल्लुक करके जानवरो से दोस्ती कर लूँगा। साँपो से प्यार करूँगा। भेडियो के गिरोह मे बैठा रहूँगा, मगर इन अजीजो से अलग रहूँगा। फीअमानिल्लाह।

अपना फोटो जरूर खिचवाइएगा और जिदा बाहर निकला तो मेरे लिए वही काफी होगा। अगर वक्त बराबर आ गया है तो खैर खुदा के सुपुर्द किया।

आपका खादिम
अशफ़ाक वारसी

: 7 :

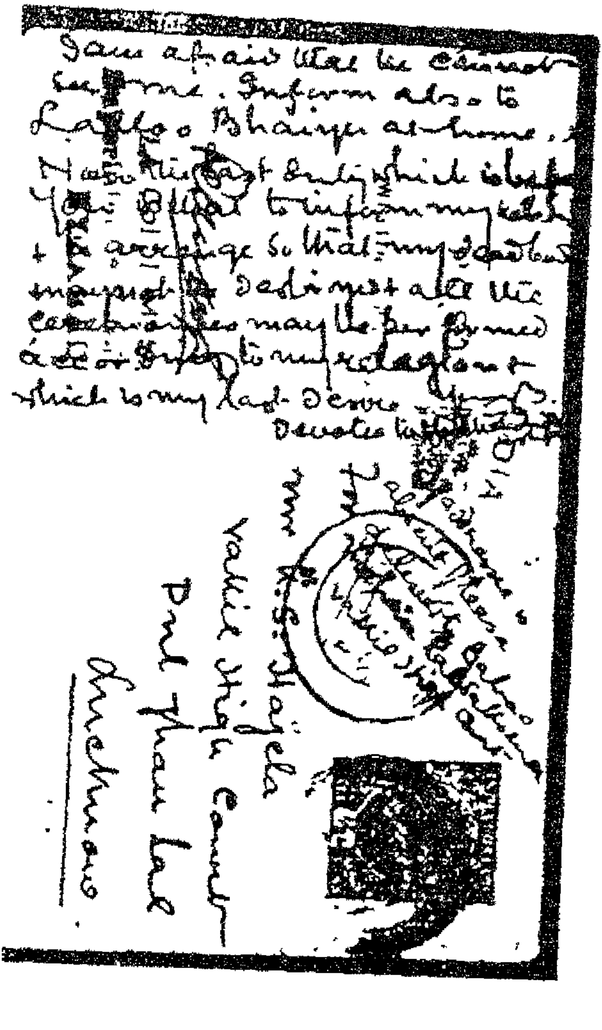


Condemned Cell
Fyzabad Jail
18.12.1927

Dear Mr Hazela,

This very morning I received news through a telegram from the Govt about the dismissal of the appeal by the Privy Council. So as an information I am writing you these few lines. It is possible that you yourself might have received the news. Alright I am altogether satisfied and cheerful as it is a will of my creator to see the end of my part. Please write my brother Shahinshah Ullah so that he might have got a chance as the card which I am going to write a letter will reach later & so

अमर शहीद अशफ़ाक़उल्ला ख़ाँ का, फाँसी से पहल
जेल मे अपने वकील श्री हजेला को लिखा गया
ख़त


I am afraid that he cannot see me. Inform also to Lalloo Bhaiya at home. I also the last duty which is left to inform my relatives + to arrange so that my dead body ... & all the ceremonies may be performed according to my religion which is my last desire.

Devotedly

Mr R. S. Hajela
Vakil High Court
Lucknow

—— — के पत्र

: 8 :

अज जिन्दाने फ़ैजाबाद,
फॉसी की कोठरी,
15 दिसबर 1927

दुखिया और बूढी मॉ की खिदमत मे उसके मरते हुए फरजंद का सलाम पहुँचे, जो इसी हफ्ते में इस फानी दुनिया को अलविदा कहकर उस मुल्क जावेदा को जा बसाएगा जहॉ कि उससे पहले भी सब जा चुके है और हर जी रूह उसके बाद भी जाएगा—

फना है सबके लिए हमपे कुछ नही मौकूफ़,
बका है एक फकत जाते किब्रिया के लिए।

आप भी बखूबी वाकिफ हैं और तालीमयाफ्ता हैं मगर यह जरूर है कि बूढ़ी सिनरसीदा दुखिया मॉ के लिए यह सदमा जरूर बडा है कि उसका जवान बेटा नामुराद दुनिया से उठ जाए और वह उसकी लाश पर दो ऑसू भी न डाल सके या उसकी मरी हुई सूरत देख सके। मगर यह तो बताओ यह हुक्म किसका है? क्या दुनिया के किसी इसान का हुक्म है? क्या कोई मुझे उसके हुक्म के बिला मार सकता है? उसने रोजेअजल से ऐसा ही लिखा था कि अशफाक तुझको फॉसी पर मरना है और जब तू मरेगा तो कोई तेरे पास तेरे आइज्जा व अकरुबा (रिश्तेदार) व अहबाब मे से न होगा। पस हुक्म खुदावदी पूरा होकर रहेगा और ऐसा ही होता चला आया है। मै यह लिख देना चाहता हूँ कि मै बइतमीनान और पुरसुकून (शाति से) मौत मर रहा हूँ। हुक्मे खुदा ऐसा ही था और वह अटल है, होकर रहेगा। मौत सबके' लिए है और सब मरेगे। दुनियावी तकलीफ, माद्दी बदिशें, इसानी क्यूदात सब पीर के रोज तक खत्म हो जाएँगी और मेरी रूह इस कफसे अंसरी से आजाद हो जाएगी। अब दूसरी मंजिल सामने है, देखिए वहॉ कैसी गुजरे। यह उसकी बख्शीश-व-करम पर मुनहसिर है। सफर दरपेश है, जादेराह (रास्ते का सामान) पास नही। बस उसी की उम्मीदे करम पर खुश-खुश मर रहा हूँ। मै तौ आप सबको अलविदा कहता हुआ आप सबको और खसूसन आपको बकीया जिदगी मे वक्फे-नौहा व बुका करके उस तरफ जा रहा हूँ जहॉ से आया था और फिर वापस जाने का वायदा था। वायदा पूरा करना है। आप सबके सामने राहे अमल क्या है? मैने तो बुरा किया या अच्छा। मै इकरार

करता हूँ कि मेरी जिदगी इतनी बरसो गुमराही, मासियत, सियाकारी (गुनाह) और गुनाहो मे गुजरी उसके लिए मेरे दोस्त, मेरे अजीज, मेरे भाई और मुख्तसिर यह कि हर हमदर्द मुसलमान दुआए मगफिरत (आत्मा की शाति के लिए) करे और आप सब लोग सब्र कीजिए। सब्र तल्खअस्त व लेकिन बरे शीरीं दारद (फल मीठा)—मुझे डर है कि आप घबरा न उठे और यह न कह बैठे कि जिसकी जवान औलाद मर जाए वह कैसे सब्र करे तो सुनिए, मेरी प्यारी माँ !

खुदा ने मुझको आपके शिकम से पैदा किया था। मेरी पैदाइश पर खुशियाँ मनाई गई थी। शुकराने अदा किए गए थे। और किस्सा मुख्तसर यह है कि मुझको आँखों का नूर और दिल का सुरूर समझा जाता था। आपने इस सिले मे खुदा को क्या दिया कि उसने आपको एक इंसान की शक्ल मे औलाद दी। आपसे जो भी पूछता था आप यही कहती थी कि खुदा का बदा है, खुदा ने दिया है। उसी की अमानत है और मै अमानतदार हूँ। पस अब मालिक अपने गुलाम को तलब करता है। अमानत रखाने वाला अपनी अमानत तलब करता है। आप खयानत न करे, न आपकी चीज थी न आपसे छीनी गई। इतने दिन के वास्ते आपको दी गई थी। कि रखो, बाद को हम वापस ले लेंगे। अब वापस लिया जा रहा है फिर, आपको क्या हक है कि रद्दोकद करे। क्या आपने हमेशा से यह सोचा था कि मुझे मौत कभी न आएगी। अरे, तुम भी जानती थी और मुझे भी मालूम था कि हम तुम सब मरेगे। कोई आगे, कोई पीछे। या तो मुझको रोना पड़ता तुम्हारे लिए, या तुम्हे मेरे लिए। उसका मशा यह था कि बूढी माँ जवान औलाद को रोएगी और बकीया तीन भाई अपने छोटे भाई का मातम करेगे। तो क्या कोई आज इस दुनिया मे इतनी ताकत वाला है कि खुदावद के अहकाम पलट दे ? कोई नहीं।

अपने खानदान ही मे कितनी माँएँ है जो बुढ़ापे मे जवान औलाद का दाग खोए बैठी है और कितने ही ऐसे भाई है, जो अपनी आँखे अपने भाई के लिए सुर्ख कर चुके है और कितनी ही बहनें-भावजे, भतीजियाँ-भतीजे, भानजियाँ-भानजे हैं जोकि अपने भाई, देवर, चाचा, मामू, के लिए सीनाकोबी कर चुके है। दुनिया का यही धंधा है। दुनिया नाम ही उसका है। अगर मरना न होता तो जिंदगी का फायदा ही क्या था। अगर रात न हो तो दिन मे

लज्जत ही क्या। अगर गम न हो तो शादी-ब-मजिले गम है। गरज कि दुनिया एक माजूने मुरक्कब है। जिसमे सब जाइके है। ऐशो-मसर्रत, गमो-अन्दोह, आगम व तकलीफ, गफलत व बेदारी, नेकी व बदी, मौत व जीस्त, गरज कि हर चीज यहाँ मिलेगी। पस खुशकिस्मत वह है जिसने अच्छी बाते कुबूल की और बुराइयो से परहेज किया। गफलत पर होशियारी को तरजीह दी और माबूदे हकीकी की याद मे लगा और होशियार रहा अपने फराइज की अदायगी मे। नेकी को कबूल किया और बदी को ठुकराया। आबदी आराम की खातिर तकलीफ बरदाश्त की और इबादत मे मसरूफ रहा, मौत को पेशेनजर रखा और जीस्त ही मे सामाने आसरत जमा कर लिया। ऐश व इशरत मे पडकर गफलत नही की और पेश आने वाले गम व अन्दोह का खटका महसूस करता रहा। पस जिसने इन बातो को अख्तियार किया और हर मुसीबत व तकलीफ व आराम व राहत को मिनजानिब अल्लाह तसव्वुर किया और उसकी नियामतो का शुक्रिया अदा किया। इसाइब व तकलीफ पर सब्र किया और कहा कि यह सब मिनजानिब अल्लाह है।

दोस्त का दिया हुआ जहरे हलाहल भी शहद मुस्फ्फा ख्याल किया और सब्र किया, शुक्र किया पस राजी कर लिया उसे जो कौनैन का मालिक और मशरिक व मगरिब का रब है। क्या तुम इसके ख्वाहिशमद नही हो कि खुदा तुम्हारा पैदा करने वाला है और जिसके सामने तुम्हें जाना है, तुम्हे अपना दोस्त कहकर पुकारे। अरे दुनिया उसकी मुतमन्नी है और वह हमको अपना दोस्त कहे। आज मौत के सामने बैठा हुआ अशफाक मै तुझसे राजी हूँ और तू मेरा बदा है, मैने बदगी में कबूल किया। वह कहता है, ऐ ईमान वालो ! बेशक अल्लाह सब्र करने वालो के साथ है। दूसरी जगह फरमाता है यानी खुशखबरी सुना दो उन सब्र करने वालो को कि जब उनको कोई मुसीबत पहुँचती है तो कहते है कि बेशक हम अल्लाह ही के है और बेशक हम उसकी तरफ लौटने वाले है। फिर फरमाता है यानी यही है जिन पर बरकात हैं उनके रब की तरफ से और रहमत हैं। यही लोग हिदायत वाले हैं। यह कौल आपको जनाबे बारी के लिख दिए। अब समझना-न समझना आपका काम है।

आपका सब्र व शुक्र आपको उसके दरबार में मकबूल व मुकर्रब करेगा। और अगर खुदा ना ख्वास्ता आप हद से आगे बढ़ गई तो आप खुद समझदार और पढी-लिखी हैं। आपका नालओशेवन, आहबजारी, सीनाकोबी,

मुझको जिदा नही कर सकती, न मौत से बचा सकती है। हॉ, सब्र करना, कलमा व दरूद पढना और बख्शना मेरे लिए कुछ सूदमंद साबित हो जाए। पस मेरी अच्छी मॉ मेरी खताऍ माफ फरमाकर मशगूले-खुदा हो जाओ। उसकी मर्जी यही थी और कौन है जो उसके हुक्म को टाल सके।

मुझसे आपको दुख पहुॅचा। आपका बुढापा बरबाद हो गया। आपकी जिदगी जीक मे पड गई, मैने की। हॉ, जाहिर असबाब मे से एक मै भी हूॅ। मगर मौला की मरजी और उसका हुक्म पोशीदा रहता है। समझदार मिनजानिब अल्लाह हर बात को समझते हैं और नासमझ इसानो की तरफ ख्याल दौडाते है। इससे कब्ल एक कार्ड फैसले के मुतआल्लिक मिला होगा। कैसे मजे की बात है कि मै अपने कलम से अपनी मौत की खबर आपको पहुॅचा रहा हूॅ। मैने एक किताब लिखना शुरू की थी और वह तकमील को न पहुॅच सकी। खैर, मालिक की मरजी ही न थी जिसमें मेरा मकसद बच्चो के लिए नसीहत करना था। खैर, उनके लिए जो मैदाने अमल है और जो अपने सामने आए उस पर गामजन हो। मुझ जो लिखना है थोडा-थोड़ा सब लिख दूॅगा क्योकि अब वक्त मेरे पास मजमून निगारी व कलम फरसाई का नहीं है। मुख्तसर-मुख्तसर सबको लिख दूॅगा। सब अपना-अपना निकाल लें। मुझे तो सबसे जरूरी आपको लिखना था। और यूॅ तो यो मजमून वाहिद तसव्वुर किया जाए। सभी से सब्र की गुजारिश है और सब्र ही खुशी की कुजी है। मुझे बूबू की भी परेशानियो का इल्म है और आप सबकी कोफ्त मे ऐसे वक्त मे इजाफा नए गम का है। मगर क्या मौला की मर्जी टाली जा सकती है? नही, हरगिज नही। वह हर सूरत से आजमाइश कर रहा है। तुम सब्र को हाथ से न जाने दो। जो दोस्त की तरफ से खुशी व गम मिले मुस्कराते हुए चेहरे और मुतमइन दिल के साथ कबूल करो कि फलाहे दीनी व दुनियावी हासिल कर सका। मैं कोशिश करूॅगा कि यह खत तुमको मेरी मौत से पहले ही मिल जाए ताकि तुम्हारे दुख मे कमी हो जाए और तुम सोच सको कि मरने वाला क्या बात है कि मरते हुए भी मुतमइन व खुश है—"फना है सबके लिए हमपे कुछ नही मौकूफ, बका हैं एक फक्त जाते किब्रिया के लिए।" आदम अलेहिस्सलाम से लेकर इस वक्त तक कौन ऐसा है जो मरा न हो? जिसने बिसाते आलम पर जिंदगी के मोहरे बसाए और मौत के हाथों के सामने जरूर मात खाई, पस उसका गम

बेकार है और आने वाली—जरूर आने वाली बात के लिए परेशान होना सरासर गलती है।

अब रहा मुहब्बत, डाह, मोह, प्रेम—ये सब दुनियावी धधे है। खुदा से मुहब्बत करो। उसको पूजो जो हमेशा जिदा व कायम रहेगा। तुम्हे अपनी बकीया जिदगी मे कर्भा भी उसके लिए रोना नही पडेगा। बस उसी से मुहब्वत करो और उसी को समझो। अक्ली दलाइल, मजहबी मसाइल, फलसफियाना बहस दुखे हुए दिल पर नमक-मिर्च का काम करते है। मै खूब जानता हूँ कि आप सोचेगी कि मैने अपनी करतूतो से आपका बुढापा खराब किया और भाइयो और दीगर अइज्जा की जिदगी दुख की जिदगी बना दी। मैने क्या किया। मैने कुछ नही किया। उसका हुक्म रोजेअजल से ऐसा ही था, सो होकर रहा। जो बात होने वाली होती है असबाब उसके पेशतर से होना शुरू होते है और असबाब जब पायये तकमील को पहुँच जाते है, बात पूरी हो जाती है। पस मेरे लिए यह मौत और यह दिन था। सो मुझे मिला। और तुम्हारे लिए दुख, बुढापे का धक्का और सीनाकोबी लिखी थी वह तुम्हे मिल रही है। जो इसके लिए उसने मुनासिब समझा वह उसे तकसीम कर दिया। पर कौन है जो शिकवा करे और लब शिकायत के वास्ते खोले :

है रज़ा उसकी हम पर बहरहाल यह फर्ज,
शुक्रे हक लब पे रहे शिकवये आदा न करे।
मान ले फैसलाए दोस्त को बेचूनो चरा,
फ़िकरे इमरोज ही रक्खे, गमे फ़रदा न करे।

तुम सबको उठाने के लिए इंतखाब किया और मुझे मंसूरे वक्त बनाने को चुन लिया। अगर तुमको गिरियये याकूब अता किया तो मुझको सुन्नते यूसुफी अदा करने के लिए पुकारा। अगर तुमको मातम कुँनों मिस्ल खानदाने नबबी बनाना चाहा, बना दिया और मुझे मुत्तबए हुसैन शहीदे तेगेजफा के खिताब से नवाजा। उसकी शान निराली। उसकी अदा अनोखी, हर जगह नए रग मे, हर तरफ नए रूप में जलवागर है जो कुछ हुआ और जो होगा और हो रहा है उसकी मरजी से हो रहा है और होगा। पर कौन है जो सरताबी करे। और कौन है जो उसके हुक्म से बाहर जा सके। बस उसी पर नजर रखो और सब्र-करार हाथ से न जाने दो। शुक्र करो उसकी अमानत उसकी तरफ जा रही है। और सानआ अपने मसनूअ को बिगाड़ना चाहता

है। फिर तुम कौन रोने वाली, तुम कौन तडपने वाली? उसकी चीज थी उसको अख्तियार है। सब्र करो, सब्र करो और बकीया जिदगी का बेशबहा वक्त मेरे लिए रोने मे न सर्फ करो बल्कि उस सफर की तैयारी मे लगाओ जो एक दिन दरपेश है। इबादत मे मगफिरत है। गुनाहो मे वक्त न गुजार दो क्योकि यही काम आएगा। गफलत छोडो और उसको पकडो। दुनिया फना होने वाली है और तुम्हारा भी बुढापा है। अच्छा मेरी खताएँ माफ करो और मुझे अपने हकूक से सुबुकदोश करो। तुमको खुदा की अमान मे दिया। तुम्हे नेक बीवी और साबिरा बीवी बनाए। आमीन।

भावजो और भाइयो! अलफराक बीनी व बीनकुम—तुम आपस मे मिलजुलकर रहना और दुखिया व बदकिस्मत मॉ की खिदमत में लगी रहना और बकीया जिंदगी को सुकून से गुजारने का मौका देना। अगर तुम लोग ऐसे ही जो आपस में शिकवा व शिकायत करते रहे और शकररजी तुम्हारे दरम्यान रही तो कुछ लुत्फ नही। शीरोशकर बनकर रहना और जुदा न होना। मेरी तो यही ख्वाहिश है और मुझे माफी देना। खुदा की मरजी यही थी।

भाइयो! तुमने इतहाई कोशिश की मगर मौत और खुदा का हुक्म टाले से नहीं टलता और पूरा होकर रहेगा। तुम भी मजबूर हो रहे। सब्र-शुक्र करो। खुदा की मरजी ही यह है। मै बताए देता हूँ कि मै एक पुरसुकून मौत मर रहा हूँ। मैं नही कह सकता कि कौन ख्याल मुझे मस्त बनाए हुए है। दिल अदर से फूला चला आता है। मुझे कतई ख्याल ही नही गुजरता कि मुझे फॉसी दी जाएगी। मरेगे तो सब ही कुछ, मै ही नही मर रहा हूँ। तुम खुदा पर नजर रखो और बजाय रोने-धोने के मेरे ईसाले सवाब में लगे रहना कि वहाँ काम आए। अब ज्यादा क्या लिखूँ। खुदा तुम सबको सब्रे जमील अता फरमाए और मुझ गुनाहगार को जवारे रहमत मे जगह दे।

—फकत अशफ़ाकउल्ला खॉ

अशफाकउल्ला की गज़लें व गीत

अकीदत के फूल

ज़ुबाने हाल से अशफाक की तुरबत ये कहती है
मुहब्बाने वतन ने क्यो हमे दिल से भुलाया है ॥
बहुत अफ़सोस होता है बहुत तकलीफ़ होती है ।
शहीद अशफ़ाक की तुरबत है और धूपो का साया है ॥

ग़ज़ल

सुनाएँ ग़म की किसे कहानी हम को अपने सता रहे है।
हमेशा वो सुबहो - शाम दिल पर सितम के ख़जर चला रहे है ॥
न कोई इगलिश न कोई जर्मन न कोई रशियन न कोई टर्की।
मिटाने वाले हैं अपने हिदी जो आज हमको मिटा रहे है ॥
कहाँ गया कोहेनूर हीरा किधर गयी हाय मेरी दौलत।
वो सबका सब लूट करके उलटा हमी को डाकू बता रहे है ॥
जिसे फ़ना वो समझ रहे है वफ़ा का है राज इसी मे मुजमिर।
नही मिटाये से मिट सकेगे वो लाख हमको मिटा रहे है ॥
जो है हुकूमत वो मुद्दई है जो अपने भाई हैं हैं वो दुश्मन।
ग़ज़ब मे जान अपनी आ गयी है क़जा के पहलू मे जा रहे है ॥
चलो-चलो यारो रंगे थियेटर दिखाएँ तुमको वहाँ पे लिबरल।
दो चन्द टुकडो पे सीमोज़र के नया तमाशा दिखा रहे है ॥
खामोश 'हसरत' खामोश 'हसरत' अगर है जज़्बा वतन का दिल मे।
सज़ा को पहुँचेगे अपनी बेशक, जो आज हमको फँसा रहे है।

तस्वीरे नाकामी

जोश पर अल्लाह कैसा दीदए खूँरेज है
अश्क का हर एक क़तरा आज तूफ़ॉखेज़ है।
आतिशे मायूसिए दिल आह कैसी तेज है
जो नज़र के सामने मज़र है ग़म-अंगेज है ॥

जिस बिसाते खाक पर मैने क़दम रक्खा जहॉ
वह ज़मीं देने लगी दुःख बनके मुझको आस्मॉ।
टूटती है रोज मुझ पर इक बला नागहॉ
मेरी दुश्मन हो गई बर्के हवादिस बेगुमॉ।

हूँ गिरफ्तारे बला क्या - क्या परेशानी नही
दामने क़िस्मत मे मेरे तारे आस्मानी नही।
उफ मेरी तक़दीर मे आसूदा सामानी नही।
कौनसा ग़म आज मुझमे दर्द पिनहानी नही ॥

मै खिजाँ किस्मत मुजस्सिम ग़म की इक तस्वीर हूँ।
बेकसो को यास हूँ बिगडी हुई तक़दीर हूँ।
नालाहा - ए - बेरसा हूँ आहे बेतासीर हूँ
रास जो आती नही अफ़सोस वह तदबीर हूँ ॥

गुल भी किस्मत से हमारे वास्ते अब खार हैं
राहते जिनको समझते थे वह सब आज़ार है।
बेकसी अपनी है हमदम और हम ग़मख़्वार है
गो नही रोते मगर रोने के सब आसार हैं ॥

जो दुआएँ थी सरासर बददुआएँ हो गई
दर्द अफजा आजकल सारी दवाएँ हो गई।

जब कभी बेडा चला उल्टी हवाएँ हो गई
खत्म हम पर आस्माँ तेरी बलाएँ हो गई॥

मेरे नाले बढके कर देते है मुझको बेकरार
आह बनकर तीर हो जाती है मेरे दिल के पार।
काबिले इबरत ये मज़र है कि बनके गमगुसार
मेरी आँखे हाल पर रोती है होकर बेकरार॥

वाए नाकामी कि उठ जाती है ये आँखे जिधर
हैफ सब दुनिया मुझे तारीक आती है नज़र।
रजो गम आफ़त मुसीबत दर्दे दिल दर्दे जिगर
कौनसी आफत है या रब जो नहीं है मेरे सर॥

ऐ मातृभूमि तेरी सेवा किया करूँगा

बुजदिलो को सदा मौत से डरते देखा
गो कि सौ बार उन्हे रोज ही मरते देखा।
वीर को मौत से हमने नही डरते देखा
तख़्ताए मौत पे भी खेल ही करते देखा।

मौत इक रोज जब आनी है तो डरना क्या है
हम सदा खेल ही समझा किये मरना क्या है।
तग आकर हम भी उनके जुल्म से बेदाद से
चल दिए सूए अदम जिन्दाने फ़ैज़ाबाद से।

ज़िदगी बादे फ़ना तुझको मिलेगी 'हसरत'
तेरा जीना तेरे मरने की बदौलत होगा।
गर्दन अब हाथ से अपने ही कटानी है हमें
मादरे हिद पै यह भेट चढानी है हमे।

किस तरह मरते है अहरारे वतन भारत पर
सारे आलम को यही बात दिखानी है हमे।
बहरे ज़ख्खारे हवादिस से तू डर गया'हसरत'
कौम की नाव किनारे से लगानी है हमे।

ऐ मातृभूमि तेरी सेवा किया करूँगा
मुश्किल हज़ार आएँ हर्गिज़ नही डरूँगा।
निश्चय यह कर चुका हूँ सदेह कुछ नही
तेरे लिए जिऊँगा, तेरे लिए मरूँगा।

फॉसी मिले मुझे या हो जनम कैद मेरी
बेडी बजा-बजा कर तेरा भजन करूँगा।
फट्टा ये मूँज का फिर फूलो की सेज होगी
इसको बिछा के तेरी जब गोद मे पड़ूँगा।

चक्की की दो मशक्कत या रामबॉस की हो
सब कुछ मै तेरी खातिर माता किया करूँगा।
वतन हमेशा रहे शादकाम और आजाद
हमारा क्या है अगर हम रहे रहे न रहे।

रख दे कोई ज़रा सी ख़ाके वतन कफ़न में,

वह रग अब कहाँ है नसरीनो नस्तरन मे,
उजडा पडा हुआ है क्या ख़ाक है वतन मे,
कुछ आरजू नही है, आरज़ू तो यह है,
रख दे कोई जरा सी खाके वतन कफ़न मे।

ए पुख़्ताकारे उलफ़त हुशियार डिग न जाना,
मेराजे आशिकों है इस दार और रसन में।
था नारये अनलहक और दावाये मुहब्बत,
रखा हुआ था और क्या मन्सूरो कोहकन मे।

मौत और ज़िदगी है दुनिया का एक तमाशा,
फ़रमान कृष्ण का था अर्जुन को बीच रन मे।
जिसने हिला दिया है दुनिया को एक पल मे,
अफ़सोस क्यो नही है वह रूह अब वतन मे।

ऐ ख़ायनीने मिल्लत ये खूब याद रखना,
है बोस और कन्हाई अब भी बहुत वतन में।
सैयाद ज़ुल्म पेश आया है जब से हसरत,
हैं बुलबुले कफ़स में जागो जगत चमन मे।

नोगे दास्ताँ क्या यार तुम बीमारे हिजराँ की !

बहार आई हुई शोरिश जुनूने फ़ितना सम्मा की,
इलाही खैर करना तू मेरे जेबो ग़रीबां की
सही जजबाते हुर्रियत कही मेटे से मिटते है,
अबस है धमकियाँ दारोरसन की और जिंदा की।
वह गुलशन जो कभी आजाद था गुज़रे जमाने में,
मै शाखे खुश्क हूँ हॉ-हॉ उसी उजड़े गुलिस्ता की '
नही तुमसे शिकायत हमसफीराने चमन मुझको,
मेरी तकदीर मे था कफ़स और क़ैद जिंदा की।
करो ज़ब्ते मुहब्बत गर तुम्हे दावाए उलफ़त हे,
खामोशी साफ़ बतलाती है ये तस्वीरे जानां की।
यूँ ही लिक्खा था किस्मत में चमन पैराये आलम ने,
कि फ़स्ले गुल मे गुलशन छूटकर है क़ैद ज़िंदा की।
जमी दुश्मन जमा दुश्मन जो अपने थे पराए है,
सुनोगे दास्ता क्या तुम मेरे हाले परीशा की।
ये झगडे और बखेडे मेटकर आपस मे मिल जाओ,
ये तफरीके अगस है तुम मे हिंदू और मुसलमा की।
सभी सामाने इशरत थे मज़े से अपनी कटती थी,
वतन के इश्क ने मुझको हवा खिलवाई जिंदा की।
खुदा वाकिफ़ है जैसी भी गुजरती है गुज़रती है,
सुनोगे दास्ता क्या यार तुम बीमारे हिजरां की।
मिसाले कैस दीवाना किसी लैला की खातिर मे,
महीनों ठोकरे खाया किया कोहो बियाबा की।

बहमदल्ला चमक उट्ठा सितारा मेरी किस्मत का,
कि तकलीदे हकीकी की अता शाहे शहीदा की।
इधर खौफे ख़िज़ा है आशिया का डर उधर दिल को
हमें यकसा है तफरीहे चमन कैद और जिंदा की।
जिबहसाई दरे हज़रत की हसरत अपना ईमा है
मुबारक हज़रत को ख़्वाहिश बाग़े रिजवा की।

आबरू पे तेरी हम निसार होके चले

ख़ुदाया देख ले हम कैसे ख्वार हो के चले,
तिरे ही नाम पे प्यारे निसार हो के चले।
खराबो खस्ताबो जारो नजार होके चले,
वतन मे आह ग़रीबुद्दियार हो के चले।
निशानाए सितमे सदहज़ार होके चले।

जनाब माफ़ हो ये गुफ्तगूए बतासीर।
मुकद्दरात मे चलती नहीं कोई तदबीर।
हमारी तरह से है और भी कोई दिलगीर,
फिराए देखिए हमको कहाँ-कहाँ तकदीर।
असीरे गर्दिशे लैलो निहार होके चले।

तिरे ही वास्ते आलम मे हो गए बदनाम,
तिरे सिवा नहीं रखते किसी से हम कुछ काम।
तिरे ही नाम को जपते है हम तो सुबहो शाम,
वतन न दे हमें तर्के वफा का तू इलज़ाम।
कि आबरू पे तेरी हम निसार होके चले।

मिरे कोहेनूर को क्या हुआ

वह असीरे-दामे-बला हूँ मै जिसे सॉस तक भी न आ सके।
वह कतीले-खजरे-ज़ुल्म हूँ जो न ऑख अपनी फिरा सके।।

मिरा हिंदूकुश हुआ हिदूकुश ये हिमालिया है दिवालिया।
मेरी गंगा-जमना उतर गई है बस इतनी है कि नहा सके।।

मिरे बच्चे भीख हैं मॉगते, उन्हे टुकडा रोटी का कौन दे।
जहॉ जावे कहे परे-परे, कोई पास तक न बिठा सके।।

मिरे कोहेनूर को क्या हुआ, उसे टुकडे-टुकड़े ही कर दिया
उसे खाक मे ही मिला दिया, नही ऐसा कोई कि ला सके।

ज़ुबाँ तक नहीं हम हिलाने के क़ाबिल

नही अपनी हालत है बताने के काबिल
नही माजरा ये सुनाने के काबिल।
जुबॉ तक नही हम हिलाने के काबिल
बुजुर्गो का किस मुँह से हम राग गाएँ ॥

जब इक गुन भी उनका न अपने में पाएँ
किसी को नही मुँह दिखाने के क़ाबिल।
चमन में खिज़ा अपने इठला रही है,
कयामत गुलो-गुचो पर आ रही है।

जमी चर्ख बनकर सितम ढा रही है,
सुनो रोके बुलबुल ये क्या गा रही है।
कभी खार था इसके बागे-अदन को,
नज़र हाय किसकी लगी इस चमन को ॥

कभी यो न उजडा था मसकन किसी का,
न यो जल गया होगा खिरमन किसी का।
हरदयाल आता है यूरोप से न पाल आता है,
दिल मे रह-रह के बस इतना ख्याल आता है।

भरने जाते है कही उम्र के पैमाने को,
हिद को छोडते है रजोअलम खाने को।

जब अपनी ही ज़मीं होगी

उरूज़े कामयाबी पर कभी हिंदोस्ता होगा,
रिहा सैयाद के हाथो से अपना आशिया होगा।

चखाएँगे मज़ा बरबादी-ए-गुलशन का गुलची को
बहार आ जाएगी उस दिन जब अपना बागबा होगा।

जुदा मत हो मिरे पहलू से ए दर्दे-वतन हरगिज,
न जाने बादे मुरदन मै कहाँ, और तू कहाँ होगा।

वतन की आबरू का पास देखे कौन करता है,
सुना है आज मक़्तल मे हमारा इम्तहा होगा।

ये आए दिन की छेड अच्छी नही ऐ खजरे-क़ातिल,
बता कब फ़ैसला उनके हमारे दरमिया होगा।

शहीदो के मज़ारो पर लगेंगे हर बरस मेले,
वतन पर मरने वालो का यही बाकी निशां होगा।

कभी वो दिन भी आएगा जब अपना राज देखेंगे,
जब अपनी ही ज़मी होगी, जब अपना आसमा होगा।

फ़ना का इन्हें जाम भरने न देंगे

जमाना बना यूँ न दुश्मन किसी का,
खिजा से लुटा यूँ न गुलशन किसी का।
रही एक बुलबुल भी जिसमे न बाकी,
फसाना जो उजडे चमन का सुनाती।
हमे ख़ाक मे वो मिलाए हुए है,
जमाने के रौदे सताए हुए हैं।
तनज्जुल के चक्कर मे आए हुए है,
कि अपने ही घर मे पराए हुए है।
ये सबकुछ सही है, मगर जान तन मे,
शरारा है ये अपने ठडे अगन मे॥
नही गरचे अब ये हरारत दिलो मे,
वही खून बाकी है लेकिन रगो मे।
जुनू गरचे बाकी नही अब सरो मे।
मगर आबोगिल है वही हड्डियो में।
लटे भी तो हाथी लटेगा कहाँ तक,
समन्दर घटे सो घटेगा कहाँ तक।
नही गरचे रौनक़ वो अपने चमन मे,
न वो रग-बू हैं गुले - यासमन में।
है मुद्दत से गो अपना सूरज गहन में,
मगर खूँ तो है वो ही अपने बदन मे।
बहुत फर्क़ है मुर्दा - दिलो मे।
तफावत है बेजान और बिस्मिलो मे॥

वह स्थान गंगोतरी का पवित्तर,
पिथौरा की लाट और उदयपुर के पत्थर।
हिमालय की वे चोटियाँ सर उठाकर
इक आवाज़ से कह रही है बराबर—
कि जब तक है हम इनको मरने न देंगे।
फ़ना का इन्हें जाम भरने न देंगे॥

दहलता है कलेजा दुश्मनों का

ख्याल आता है जिस दम दिल मे चुभता है सिना होकर,
रहे क्यो कब्जा ए अगियार में हिदोस्ता होकर।
शहीदाने वतन का खून एक दिन रग लाएगा।
चमन मे फूट निकलेगा यह बरगे अर्गवा होकर।
फकत दारोरसन ही कामयाबी का जरीया है,
मकासिद तक यह पहुँचाएगी हमको निर्दबां होकर।
नही वाकिफ थे मादर और पिदर इस अमरे शुदनी से,
कि आफ़त मे पडेगे उनके बच्चे नौजवॉ होकर।
सता ले ऐ फलक मुझको जहॉ तक तेरा जी चाहे,
सितम परवर सितम झेलूँगा शेरे नेसता होकर
करूँ मै इनकिलाबे दहर का शिकवा मआज़ अल्लाह।
है तुफ़ मुझ पर डरूँ गर जेल से मै नौजवॉ होकर
दहलता है कलेजा दुश्मनो का देख कर 'हसरत',
चला करते हो जब वेडी पहन कर शादमा होकर।

चंद अशआर

आनी थी हमको मौत सो आई वतन से दूर
अब देखना ये है कि ये मिट्टी कहाँ की है।

बहुत ही जल्दी टूटेंगी गुलामी की ये जजीरे,
किसी दिन देखना आज़ाद ये हिंदोस्ताँ होगा।

ज़िंदगी बादे फ़ना तुझको मिलेगी हसरत,
तेरा जीना तिरे मरने की बदौलत होगा।

वतन हमेशा रहे शादकाम और आजाद,
हमारा क्या है अगर हम रहे रहे न रहे।

बुज़दिलो को ही सदा मौत से डरते देखा,
गो कि सौ बार उन्हे रोज ही मरते देखा।

वीर को मौत से हमने नही डरते देखा,
तख्तये मौत पे भी खेल ही करते देखा।

मौत इक रोज़ जब आनी है तो डरना क्या है।
हम सदा खेल ही समझा किये मरना क्या है।

तग आकर हम भी उनके ज़ुल्म के बेदाद से,
चल दिए सूये अदम ज़िन्दाने फैज़ाबाद से।

जबकि गैरों से उन्हे इकदम की भी फुरसत नही,
फिर वह क्यों मिलने लगे अब हसरते नाशाद से।

बाइसे नाज तो थे अब वह फसाने न रहे,
जिन तरानो मे मजा था वह तराने न रहे।

घर छुटा बार छुटा अहले वतन छूट गए,
माँ छुटी बाप छुटा भाई-बहन छूट गए।

अपना यह अहद सदा से था कि मर जाएँगे,
नाम माता तेरे उश्शाक मे कर जाएँगे।

कौन वाक़िफ़ था कि यूँ सर पे बला आएगी,
बैठे बिठलाए हुकूमत यह गज़ब ढाएगी।

फना है सबके लिए हम पे कुछ नही मौफ,
बका है एक फ़क़त जाते किब्रिया के लिए।

तनहाई गुरबत से मायूस न हो 'हसरत'
कब तक न ख़बर लेगे याराने वतन तेरी।

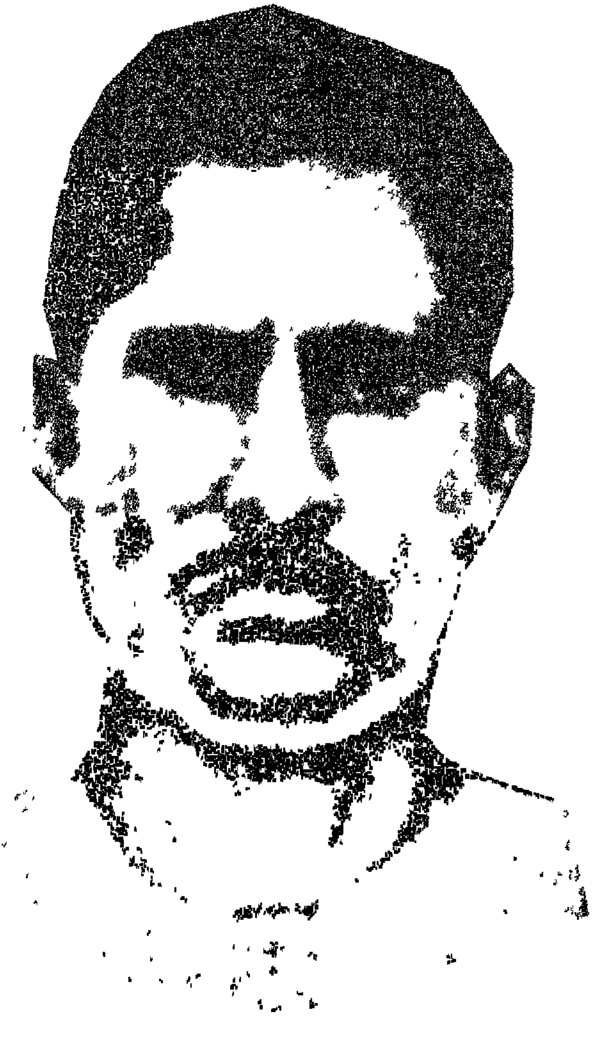
वह जुर्मे आरज़ू पै जिस कदर चाहे सजा दे ले,
मुझे ख़ुद ख्वाहिशे ताजीर है मुलज़िम हूँ इकरारी।

मिटाने वाले हैं अपने हिंदी

न कोई इग्लिश हे न कोई जर्मन,
न कोई रशियन न कोई तुर्की।
मिटाने वाले है अपने हिदी,
जो आज हमको मिटा रहे है।

जिसे फना वह समझ रहे है,
बका का है राज इसी मे मजमिर,
नही मिटाने से मिट सकेंगे,
वो लाख हमको मिटा रहे है।

ख़ामोश 'हसरत' खामोश 'हसरत',
अगर है जज्बा वतन का दिल मे,
सजा को पहुँचेगे अपनी बेशक,
जो आज हमको सता रहे है।



ठाकुर रोशन सिंह

ज़िन्दगी ज़िन्दादिली को जान, ऐ रोशन!
वगरना कितने मरते और पैदा होते जाते हैं॥

रोशनी के लिए तरसता ठाकुर रोशन सिंह का गॉव

नवादा

भिनसारे चिरैया बोलते ही उठ जाता हूँ। यद्यपि नीद कहती है कि एक झपकी और ले लो पर मजिल काफी दूर है और जाना जरूर है। उठकर गटर-गटर एक लोटा पानी पीता हूँ और नित्य-कार्यो से निवृत्त होकर धोती-कुर्ता पहनकर झोले मे पूड़ियॉ और भुजिया आलू के पैकेट तथा लाई चने और गुड डालकर गमछा गले मे लटकाकर स्टेशन की ओर चल देता हूँ। प्लेटफार्म पर बहुत भीड है। गाडी एक घटे लेट है। एक घटा बीत गया, गाडी न आई। डेढ घटा बीतने वाला है तब गाडी छत पर सवारियो को लादे हुए प्लेटफार्म पर आ लगती है। शुरू से अत तक किसी बोगी मे कोई जगह नही है। जाना तो है ही। सो एक डिब्बे मे किसी तरह घुस जाता हूँ। किंतु बैठने की जगह नही मिलती। खड़े-खडे ही जाना होगा।

मन मे आता है कि मै एक अनुष्ठान पर जा रहा हूँ, एक महान शहीद के जन्मस्थान की यात्रा पर जा रहा हूँ, जिसने देश की आज़ादी के लिए भरी जवानी मे फॉसी के फंदे को चूमा था। रोशन सिह! अग्रेज सरकार जिसके नाम से थर्राती थी, उस महान् बलिदानी के गॉव जा रहा हूँ। फिर यदि सिर के बल भी जाना पड़े तो खुशी ही होगी। रेल में खड़े-खड़े ही तीन-चार घटे बीतेगे, कोई बात नही।

तभी मन मे कौधा-सा लपकता है कि इस गाडी मे ए० सी० व प्रथम श्रेणी के डिब्बे भी है, उन मे खादी मे सजे-धजे नेता और सरकारी आला अफसर बैठे होगे। थर्मस से लग्गू-भग्गू चमचे या चपरासी बाअदब उन्हे चाय और बिस्कुट दे रहे होंगे। मै! मै ठहरा एक लेखक। लेखक को इस

दश मे कौन घास डालता है ? यह वह देश है जहाँ 'निराला' ने अपने गाँव मे अपने बच्चों को खाने के लिए गेहूँ पीसा था, बर्तन मले थे। यहाँ तो सारी सुविधाएँ, स्वतत्रता को लाछित करने वालो को ही मिल रही है। लेखक, कवि, कलाकार, सगीतकार किस खेत की मूली है ? गाड़ी एक झटके के साथ रुक जाती है। देखा तो हरदोई स्टेशन आ गया। कुछ डेली पैसेजर उतरते है। मैं सिकुडकर एक सीट पर टेक ले लेता हूँ। रात पूरी नींद नही ले सका था। ऑखे कडुआ रही हैं, एक झपकी लेने लगता हूँ कि मेरा सिर बगल मे बैठे एक साहबनुमा खिजाबी बालो वाले सज्जन के सिर से टकरा जाता है। "अधे हो क्या ? सिर झुलाकर दे मारा, जूते पर चप्पल की गर्द चुपड दी।" मै अधे की उपाधि पाकर भी चुप्पी साधे रहता हूँ और दृष्टि नीची कर लेता हूँ। वे एक सिगरेट सुलगाकर धुएँ की फूँक छोडने लगते हैं। शाहजहाँपुर स्टेशन आ जाता है। मै उतरकर प्लेटफार्म पर खडा होता हूँ।

एक टूटी बेच पर बैठ जाता हूँ और झोले मे पडी बासी पूडियाँ और भुजिया आलू को जल्दी-जल्दी खाने लगता हूँ। आल कुछ-कुछ महक रहे है, पर पेट तो भरना ही है। अरे, वाह ! खटाई की फकिया सब से नीचे पडी है, जब मैं खा चुकता हूँ तब देखता हूँ, कोई बात नही, उसे भी दो-चार बार चाट लेता हूँ और पानी पीकर उठ पडता हूँ।

डायरी निकालता हूँ। शहीद रोशन सिह के गॉव नवादा जाने वाले मार्ग को पढता हूँ। एक रिक्शे पर बैठकर बस स्टेशन की ओर चल देता हूँ। सडक का क्या कहना ! वर्षो से मरम्मत तक नहीं हुई। ये क्या ! पूरी सडक पर घरो के कचरे का ढेर पडा है। आठ-दस सूअर और सूअरो के दो दर्जन छौने कूडे से अपना भोजन चुन-चुन कर खा रहे है। उन्ही के बीच चार-पाँच छोकरे लंबे-चौड़े बोरो मे पॉलिथीन बीन-बीन कर रख रहे हैं। सूअरों के बीच मे मनुष्यो के ये बच्चे शायद ही दुनिया के अन्य किसी देश मे इस रूप मे देखे जाते है ?

अब देश गुलाम तो नही है, स्वतत्र है। किसको इसका दोष दिया जाए ? दोष उन को दिया जाए, जिन्होने पचास वर्षो से देश का शासन अपने हाथो मे रखा और अरबो का घोटाला कर गए। ससद मे मौनव्रत धारण किए मौनी बाबा बने रहते है।

बस स्टेशन आ जाता है। मै रिक्शावान को भाडा देकर अदर जाता

हूँ। एक कडक्टर चूना चाटते हुए चिल्ला रहा है—बरेली, बरेली! ड्राइवर स्टेयरिंग पर बैठा ऊँघ रहा है। मै बस पर बैठ जाता हूँ। कडक्टर कुछ लोगो को टिकट देता है, कुछ को नही। बस चल देती है।

मै कटरा मे उतर पडता हूँ। अच्छी भीडभाड वाली बाजार से गुजरता हुआ प्राइवेट बस अड्डे पर पहुँचता हूँ। यहाँ से हर बीस मिनट मे एक बस खुदागज को जाती है। चिरकुटे कपडो से ढका एक काला-कलूटा लडका चिल्ला रहा है—खुदागज, खुदागज! मैं बस मे आसन ले लेता हूँ। बस ठसाठस भर गई है। यह बस सोलह किलोमीटर की दूरी एक घटा में तय करती है। हर एक-दो फर्लांग पर सवारी उतारती-चढाती चलती है। किसी-किसी गॉव मे तो लगभग हर दरवाजे पर खडी होती है। जी न ऊबे, इस कारण मै खिडकी से बाहर की ओर झॉक रहा हूँ। गन्ने के खेतो मे खूब लबे-लंबे गन्ने खडे है। सड़क के किनारे लगे देशी आमों के पेड़ो मे छोटी-छोटी अमियॉ लगी हैं। चरवाहे छोकरे अमियॉ झोर रहे हैं। जामुन के पेडों मे खूब हरे-हरे पत्तो के बीच मे फूल फूले हैं। नीम के पेडों मे छोटे-छोटे गल्ले गुच्छो मे लगे है।

सडक के किनारे कडो की बठिया लगी हैं। पीपल के पेडो पर चिरैयाँ बैठी चूँ-चूँ, चूँ-चूँ कर रही है। एक तलैया से औरते गीली मिट्टी निकाल रही है। कई खेतों मे बरसीन लहलहा रही है। किसी प्राथमिक पाठशाला के बच्चे छुट्टी होने के बाद रास्ते मे खेलते-कूदते चले जा रहे है। मै यही सब देखने मे समय काट रहा हूँ। राम-राम करके खुदागज आ जाता है।

एक मॅझोले आकार वाला कस्बा खुदागंज क्षेत्र के लोगों के लिए मडी है। यहाँ सभी प्रकार की दुकाने हैं, पान और चाय की सब से ज्यादा। मुझे यहाँ से आठ किलोमीटर दूर नवादा गॉव जाना है। लोगो से पूछता हूँ तो पता चलता है कि वहाँ बस नही जाती, खडखडा जाते है। एक दुकानदार कहता है—"मारुता से चले जाइए। एक-दो घटे मे मारुता जाता है।" मै पहली बार यह शब्द सुनता हूँ, मारुति तो जानता हूँ किंतु मारुता कभी सुना ही नही। मै उस दुकानदार से फिर पूछता हूँ—भाई, मारुता क्या होता है? "अरे, वह जुगाड!" कहकर वह अपने ग्राहक को जलेबी तौलने लगता है।

वाह! अच्छा रहा सरग से गिरा, खजूर में अटका—चक्षु का अर्थ अक्षि। मारुता का नाम भी नही सुना और यह जुगाड शब्द तो सुना है किंतु इस नाम का

वाहन मैं नही जानता। तब एक सडक-चलतू व्यक्ति से पूछता हूँ तो वह बताता है कि मारुता और जुगाड एक ही सवारी के नाम है। पानी वाली मशीन लगाकर ट्राली से सवारियॉ ढोई जाती है। थोडी दूर पर खडे एक मारुता की ओर इशारा करके वह कहता है—"ओ देखिए जुगाड खडा है।" मेरा साहस नही होता कि उसमे बैठकर बैलगाडी का मजा लेते हुए जाऊँ।

सोचता हूँ कि पैदल ही चल दूँ; पर अपरिचित जगह हिम्मत नही पड़ती। जमाना खराब है। कोई मार-मूर कर झोला भी छीन ले, तब क्या करूँगा? किराए की साइकिल लेना चाहता हूँ पर यहाँ कोई पहचानता भी नही, जमानत कौन लेगा? इसी उधेडबुन मे लगा हूँ कि एक सज्जन अचानक पूछ बैठते है—"आप बडी देर से इधर-उधर घूम रहे है। क्या बात है?" उनको अपना मन्तव्य बताता हूँ। वे पहले मुझे अपनी दुकान पर ले जाते है, चाय पिलाते है और कहते है कि मै मोटर साइकिल से आपको ले चलता हूँ। ये हैं पत्रकार श्री राजेश गुप्त।

मोटर साइकिल पर मैं पीछे बैठ लेता हूँ और वे कस्बे के बाहर बाई ओर जाने वाली सडक की ओर मोटर साइकिल मोड देते है। तभी वे अपने परिचित एव सभ्रात सज्जन से बाते करने के लिए मोटर साइकिल रोक देते है। उन से मेरा परिचय होता है। वे एक माध्यमिक विद्यालय मे अध्यापक है। रोशन सिंह की बात चलते ही वह भभक उठते है·

"क्या कहा जाए इस देश को? शहीदो को तो प्रदूषित राजनीति ने बिल्कुल भुला दिया है। आप आगे जाकर इस सडक की दुर्दशा देखिएगा। यहाँ के सांसद, विधायक सब पेट भरने में लगे हैं। क्या वे एक सडक अपने कोटे के पैसे से नही बनवा सकते? जिदगी को कुर्बान करने वाले रोशन सिंह और उनके साथियों ने जो कुछ किया उसे सोचकर ऑखो मे ऑसू भर आते है। देखिए ना, जेल मे कैद, सजा सुनने लखनऊ की अदालत मे जा रहे है और गीत गा रहे हैं :

मेरा रग दे बसंती चोला।
इसी रग मे रग के शिवा ने मॉ का बंधन खोला।
यही रंग हल्दी घाटी मे था खुलकर खेला।
नव बसंत भारत के हित वीरो का यह मेला।
मेरा रग दे बसती चोला।

"एक पेशी को जब ये क्रांतिकारी वीर सर पर पीली टोपी और हाथ मे पीला रूमाल लेकर अदालत पहुँचे तो उस के बाद जब-जब ये क्रांतिवीर जेल से अदालत जाते थे तब-तब लखनऊ के निवासी पीले वस्त्र पहनकर सड़क के दोनो ओर खड़े होकर अपने रूमाल हिलाकर इन का स्वागत करते थे।

"आज राजनीति ने सब कुछ गदा कर दिया। चारो ओर गदगी ही गदगी, घोटाला ही घोटाला। शहीदो की स्मृति की किस को चिंता है। देश जाए भाड मे, नेताओ का घर भरना चाहिए। और चाहिए क्या उन्हे? लेकिन शहीदो की आत्माओ के शाप से नरक मे जाएँगे नरक में। जनता तो''"

उनके वाक्य को पूरा होने के पहले ही उन्हे नमस्कार कर हम चल देते हैं।

चार किलोमीटर तक तो सडक कक्रीट की है किंतु आगे तो खडंजा, वो भी ऊबड-खाबड। गुप्तजी मोटर साइकिल पगडडी पर चलाने लगते है। बहुत धीमी रफ्तार से। एक गॉव आ जाता है। तंग रास्ते मे नाबदानो का पानी भरा है। मोटर साइकिल उसमे रुक जाती है। अब क्या? छभ्भ से गदे कीचड मे हम दोनो पैर टेक देते है। मै जल्दी से उतर पडता हूँ। दूसरा पैर भी कीचड़ मे ही रखना पडता है। जूतो मे कीचड भर जाता है। पत्रकार बधु का पैंट भी चार-पॉच इच उसी मे भीग जाता है। अपने राम तो धोती मे थे, सो धोती तो ऊपर सिकोड ली थी फिर भी छिट्टियॉ तो पड ही गई है। काफी बूत लगाकर फॅसी मोटर साइकिल निकाली गई। पडोस के कुएँ पर कई स्त्रियॉ पानी भर रही हैं। वे बिना पैसो का यह नाटक देखकर हॅस रही है। हम लोग कुएँ की ओर जाते हैं। एक माताराम से बाल्टी मॉग कर पानी खीचकर पैर धोए जाते है और कीचड साफ किया जाता है।

ये हाल है अपने वतन का। गॉव मे प्रधान होगे, क्षेत्र मे विधायक और सासद होगे। क्या उन की ऑखो मे माडा जम गया है, या फूला पड गई है या उन्हे दिनौधी और रतौधी दोनो होती है। सासद ने अपने कोटे के पैसो से इस सड़क को क्यों नहीं बनवाया? यह सडक उस बलिदानी के गॉव को जाती है जो अयोध्या, काशी, मथुरा, कॉची के समान ही पवित्र है।

काफी झटको के बाद मोटर साइकिल स्टार्ट होती है। थोडा आगे बढने पर खडजा भी समाप्त, केवल भूडभरा गलियारा। इस रास्ते पर मोटर साइकिल चलाना, उस पर बैठना अपनी हड्डी-पसलियो की परवाह न करना ही

है। पर क्या किया जाए? नशा जो सवार है कि रोशन सिह का जन्मस्थान देखूँगा।

एक गड्ढे मे मोटर साइकिल हच्च से पहुँच जाती है और सॉय-सॉय कर के रुक जाती है। अभी नवादा दो किलोमीटर दूर है। वहाँ तक मोटर साइकिल को घसीट कर ही ले जाना है। धूल-पसीने से लथपथ, शरीर मे चीटियॉ जैसी काट रही है।

आगे एक गॉव दिखाई दे रहा है। यही नवादा है। जी मे जी आता है, हफनी कुछ कम होती है। लगता है युद्ध जीत लिया। आम की एक बाग मे स्कूली बच्चे अमियॉ झोर-झोर कर खा रहे है। मन तो अपना भी होता है कि एक अमिया लेकर खाऊँ, किंतु कुछ दिनो से दॉतो की खट्टी चीजो से लडाई चल रही है। इसलिए व्यर्थ का टंटा मोल न लूँ। बच्चो से मैं पूछता हूँ : "तुम्हारा गॉव नवादा क्यो मशहूर है?"

एक लडका तनकर सावधानी की मुद्रा मे कहता है—"यहॉ शहीद रोशन सिह का जन्म हुआ था।"

"कौन रोशन सिह?"

"अरे, आप नही जानते, जिन्होने काकोरी मे ट्रेन से अग्रेजो का खजाना लूटा था। चन्द्रशेखर आजाद और बिस्मिल के साथी थे वे। हमारे ही गॉव मे पैदा हुए थे।"

बालक के ये कुछ वाक्य सुनकर मुझे प्रसन्नता होती है कि गॉव मे अपने रोशन सिह के लिए बहुत आदर है। बच्चे भी उनके नाम से परिचित है।

थोडा आगे बढने पर एक बधु खइनी रगडते हुए आते दिखाई देते है। वे किसी सरकारी विभाग से अभी हाल मे रिटायर हुए हैं। मैं उनसे बातें करने लगता हूँ। खइनी को ओंठ मे दबाकर वे गर्दन उठाकर शान के साथ बताने लगते है·

"नवादा शाहजहॉपुर जिले की नाक है। यहॉ के ठाकुर अपनी आन-बान और शान के लिए पुराने जमाने से मशहूर रहे है। रोशन सिह अपनी शान के सामने किसी को कुछ नहीं समझते थे। वे लाठी, तलवार, गदकाफरी और कॉता चलाने में बहुत दक्ष थे। मेरे पिताजी बताते थे कि उनकी बदूक का निशाना बहुत सच्चा था। उनके पास कई बदूके थी। उडती

हुई चिडियो पर वे निशाना साधते थे। व्यायाम नियमित करने वाले रोशन सिह बहुत खरे और दिलेर थे। वे हिदी-उर्दू तो अच्छी जानते थे किंतु अग्रेजी न बोल पाते थे, न लिख पाते थे।

असहयोग आदोलन मे सक्रिय हिस्सा लेने के कारण उन्हे ढाई साल की सजा हुई थी। एक वर्ष तक उनको जेल मे पद्रह सेर गेहूँ नित्य पीसना पडता था। वे दिल के मजबूत आदमी थे। जिन दिनो वे हवालात मे बद थे, उन के पिताजी का निधन हो गया। समाचार सुनकर उन्होने तीन बार 'ॐ', 'ॐ', 'ॐ' कहा और ऑखे बद कर प्रार्थना करने लगे। थोडी देर बाद बिल्कुल सहज-सामान्य। वे बहुत वीर व्यक्ति थे। आप उनका यह जन्मस्थान देखने आए है, लेकिन यहॉ उनके नाम पर कुछ भी तो नही है। नेताओ ने आजादी के साथ खिलवाड किया है।"

हम उनसे बातें करके आगे बढते है। एक पेड़ के नीचे तीन-चार भैंसे बॅधी हैं, तीन-चार पडिया-पडवे भी बॅधे हैं। एक सज्जन उनकी सानी का प्रबध कर रहे है। तब तक गॉव के कई कुत्ते हम लोगो को भौकने लगते है। सानी भरे हाथो से ही वे एक गुम्मे का टुकडा उठकर उनको दौडाते है। कुत्ते भाग खडे होते है। मेर साथी पत्रकार बधु अपनी मोटर साइकिल ठीक करने मे जुट जाते है और मैं रोशन सिह के दरवाजे पाकड़ की छाया मे बैठ जाता हूँ।

रोशन सिंह के पौत्र जगदीश सिंह खादी के वस्त्रो मे हैं। वे गॉव के जूनियर हाईस्कूल मे अध्यापक है। स्वभाव से विनम्र किंतु तेज तेवर वाले जगदीशजी अपने बाबा से संबधित तमाम कागज दिखाते है। वे सब बताते हैं।

बाबा ने उसे इलाहाबाद जेल से 13 दिसबर 1927 को जो पत्र लिखा था उसे वो, निकालते हुए दिखाते है। उसमें ये वाक्य लिखे है :

"इस सप्ताह के भीतर ही फॉसी होगी। ईश्वर से प्रार्थना है कि वह आपको मुहब्बत का बदला दे। आप मेरे लिए हरगिज न रंज करें। मेरी मौत खुशी का बाइस होगी। दुनिया मे पैदा होकर मरना जरूर है। दुनिया मे बदफैल करके मनुष्य अपने को बदनाम न करे और मरते वक्त ईश्वर की याद रहे, यही दो बाते होनी चाहिए और ईश्वर की कृपा से मेरे साथ ये दोनो बाते है। इसलिए मेरी मौत किसी प्रकार अफसोस के लायक नही है। दो

साल से मै बाल-बच्चों से अलग हूँ। इस बीच ईश्वर-भजन का खूब मौका मिला। इससे मेरा मोह छूट गया और कोई वासना बाकी नही रही। मेरा पूरा विश्वास है कि दुनिया की कष्टमयी यात्रा समाप्त करके, मै अब आराम की जिदगी के लिए जा रहा हूँ। हमारे शास्त्रो मे लिखा है कि जो आदमी धर्म-युद्ध मे प्राण देता है उस की वही गति होती है जो जगल मे रहकर तपस्या करने वालो की

जिंदगी जिदा-दिली को जान ऐ रोशन,
वरना कितने मरते और पैदा होते रहते है।

आपका
रोशन

मृत्यु के प्रति ऐसा निरपेक्ष निर्भीकता का भाव बडे-बडे सतो मे ही होता है। वास्तव मे रोशन सिह राष्ट्र को स्वतत्र कराने वाले एक सत ही तो थे। तभी तो 19 दिसबर सन् 1927 को फॉसी वाले दिन भी रोज की तरह तडके उठकर नित्यकर्मो से निबटकर स्नान करके गीता पढकर कसरत करने लगे। एक सतरी ने पूछा—"आप को तो अभी फॉसी दी जाएगी, आप कसरत क्यो कर रहे है?" हल्की मुस्कराहट के साथ उन्होने कहा—"जिस वक्त के लिए जो काम तय हो उसे अवश्य करना चाहिए। जब फॉसी का वक्त आएगा उसे भी कर लेगे। अभी तो कसरत का वक्त है। यह तो मेरा नित्य का नियम है।" यह सुनकर सिपाही सकते मे पड गया।

जब जिला मजिस्ट्रेट फॉसी के लिए उन्हे लेने आए तो रोशन सिह के चेहरे पर मुस्कराहट दौड रही थी। चेहरा चमक रहा था। वे हाथ मे 'गीता' लेकर चल दिए और सीढियॉ चढते हुए बराबर 'वन्देमातरम्' 'वन्देमातरम्' का स्वर बुलंदी के स्वर मे उच्चारित करते रहे। 'ॐ, ॐ, ॐ' कहकर फॉसी के फदे को चूम लिया।

जिस 'वन्देमातरम्' के नारों ने शहीदो की शहादत मे जोश दिया, जिस 'वन्देमातरम्' ने स्वतत्रता के सघर्ष मे वीरों को शक्ति दी आज स्वतत्र भारत मे उसी 'वन्देमातरम्' के लिए प्रश्न-चिह्न लगाया जा रहा है। राजनेता शासन को हाथ से न सरकने देने के लिए, वोट के खजाने को मजबूत बनाए रखने के लिए 'वन्देमातरम्' मे सांप्रदायिकता की गध पा रहे हैं। अरे! देश का रक्त चूसने वालो, स्वर्ग मे बैठी रोशन सिंह की आत्मा तुम्हे धिक्कार रही होगी।

'बिस्मिल' और 'अशफाक' जिस 'वन्देमातरम्' के घोष के साथ फॉसी पर चढे उसे 'वन्देमातरम्' मे तुम्हे साप्रदायिकता दिखाई देती है। साप्रदायिकता तुम्हारे भूसा-भरे दिमागो मे भरी है। लानत है तुम को! धिक्कार है तुम को!! तुम कृतघ्न हो! तुम गद्दार हो! तुम भारत माता के कपूत हो। तुम कीडो-मकोडो, खटमलो-काक्रोचो जैसे हो गए हो।

लाल बत्ती की गाडी मे सैर करने वालो! तुम राष्ट्रघाती हो, तुम राष्ट्रकलंकी हो, तुम स्वार्थ की जोक हो, परमार्थ तुम क्या जानो। किंतु याद रहे, जब परमात्मा के द्वार पर पहुँचोगे तो तुम्हे लाल बत्ती का बदला चुकाना पडेगा। वहॉ यमदूत द्वारे से ही तुम्हे महारौरव नरक में ढकेल देगे और मोटी मार पडेगी। स्वर्ग मे बैठी शहीदो-क्रातिकारियो की आत्माएँ तुम्हारे ऊपर थूकेगी। उनके पावन उद्देश्यो के साथ विश्वासघात करने वाले पापियो! चद्रशेखर आजाद की आत्मा तुम्हे देखकर मुँह मोड लेगी, बिस्मिल की आत्मा एक धिक्कार गीत लिख देगी, अशफ़ाक की आत्मा मुँह फेरकर कहेगी :

वतन के साथ धोखा करके आए हो,
यहॉ मातम मनाते हो,
बहारो मे खिजॉ पैदा किया तुमने,
तुम्हें धिक्कार है! धिक्कार है!! धिक्कार!!!

राजेद्र लाहिडी की आत्मा तुम से कहेगी—कौम के साथ धोखा और गद्दारी करने वालो तुम महापापी हो।

वाह! क्या बात है, खूब रही! मै विचारो की तरंगो मे खोया जा रहा हूँ। पाकड की छाया मे पलग पर बैठा जलपान कर रहा हूँ। सामने अमर शहीद रोशन सिह की वयोवृद्ध पुत्रवधू और पौत्र जगदीशजी बैठे है। आसपास के चार-छह लोग और भी है। जगदीश सिह मुझे अपने बाबा का वह पत्र दिखाते है, जो उन्होने 29 अप्रैल, 1927 को इलाहाबाद जेल से लिखा था। पत्र के अक्षर प्रस्तुत है .

जेल इलाहाबाद

ता. : 29-4-27

प्रियवर हुकुम सिंह जी,

मेरा मुकदमा 9-4-27 को सुना दिया गया—सजाए मौत का हुक्म होकर

इलाहाबाद डिस्ट्रिक्ट जेल भेज दिया गया। यह पढकर तुम्हे दु:ख होगा लेकिन भाई, यह परीक्षा का समय है। दु ख छोड ईश्वर का ध्यान करें। वह बडा दयालु है। शेष माताजी व बाल-बच्चो को धैर्य बॅधाना तुम्हारा कर्तव्य है। अपील जेल से करूॅगा। सरकार से पैरवी के लिए मैने जैकरन नाथ मिश्र बैरिस्टर व बाबू मोहन लाल को मॉगा है। जवाब मिलने पर तुम यदि आओ तो गुप्ताजी से मिलकर आना।

भवदीय
रोशन सिह
डिस्ट्रिक्ट जेल इलाहाबाद

ठा० हुकुम सिह
ग्राम नवादा, डॉ० खुदागज (शाहजहापुर)

एक छरहरे बदन का ठाकुर कहता है—"रोशन सिंह दुनिया मे नवादा का नाम रोशन करके चले गए। इस गॉव को अमर बनाने वाले, देश को आजादी दिलाने वाले रोशन सिह के गॉव मे एक हाईस्कूल तक नही है और आज के मत्रियो के छोटे-छोटे गॉव मे डिग्री कॉलेज खुल गए हैं। कुर्सी का मजा निराला ही होता है, किंतु फॉसी के फदे पर लटकने वाले शहीद जहॉ अमर हो गए वहॉ घूसखोर ये नेता जनता की फजीहत सहते है, अपमान झेलते है।"

उस युवक को चुप कराते हुए रोशन सिह की पुत्रवधू धीमे स्वर में कहती है—"वे सरग में पहुॅच गए। गीता, रमायन बॉचते थे जेल की कोठरी में। फॉसी पर भी गीता की पोथी अपने साथ ले गए थे। उन्होने दरोगा का रिवाल्वर छीन लिया था। बड़ी ताकत थी उन के।"

मै उनसे पूछता हूॅ—"वे आपके श्वसुर थे। आपको यह सोचकर कैसा लगता है?"

"अच्छो लगत है। हमने उन्हे देखा नाई। उनकी फोटू घर मे लगी है। सब देवी-देवताओ के संग उनकी भी हम पूजा करती है।"

इसी बीच जगदीश सिंह के साथ मै घर के बगल मे बना रोशन सिंह का स्मारक देखने जाता हूॅ। परिवार के प्रयासो से बनाया गया यह स्मारक-

भवन चारो ओर से चारदीवारी से घिरा है। बीच मे प्रतिमा लगाने के लिए ऊँचा स्थान बना हुआ है, किंतु प्रतिमा अभी तक नही लगी। 22 जनवरी 1992 को इसका उद्घाटन हुआ था किंतु सरकार के आश्वासनो के बावजूद रोशन सिह की प्रतिमा यहाँ अभी तक नही स्थापित हो सकी। राजनीतिक पार्टियाँ अपने-अपने सतहे नेताओं की प्रतिमाएँ स्थापित करवा रही है। इतना ही नही एक नेताजी ने तो लखनऊ मे अपनी दिवगत पत्नी की प्रतिमा भी लगवा दी है। मै जानना चाहूँगा कि क्या रोशन सिह से उनकी पत्नी का त्याग बडा था। वे नेताजी प्रदेश की सबसे ऊँची कुर्सी पर कई बार बैठ चुके है। आज दिनो के फेर से इधर-उधर धक्के जरूर खा रहे है।

जगदीशजी तथा उनके परिवार के अन्य लोग स्मारक-स्थल को खूब स्वच्छ और फूल-पौधों से सजाए हुए हैं।

मै कुछ क्षण स्तब्ध, मौन खडा रहता हूँ। शरीर मे एक सिहरन-सी उठ रही है, धमनियो का रक्त-सचार तेज हो रहा है, हृदय की धडकन बढ़ रही है। विचार आता है—इस सोलह सौ की आबादी वाले गॉव मे कभी रोशन सिह रहते होगे, यही जगलो मे बिस्मिल और अशफाक भी आया करते होगे। आजादी के दीवानों ने हँसते-हँसते वतन पर मर-मिटने का जो बीडा उठाया था उसे पूरा कर अपने लहू से सीचकर दुनिया से कूच कर चले गए। उनकी याद को ताजा रखने के लिए हम उनकी प्रतिमा तक नही लगवा पाए। ऐसी कृतघ्न कौम दुनिया मे और कौन हो सकती है ? हम अपने आप अपनी तरक्की की ढोल चाहे जितनी पीटे पर नवादा गॉव ढोल की पोल खोल रहा है।

आजादी मिल गई पर वह अभी अधूरी है। सच्ची आज़ादी तो उस दिन मिलेगी जब हम अपनी अस्मिता को अपनी राष्ट्रीयता को, अपने राष्ट्रीय चरित्र को पहचानेंगे। कवि अटलजी ने कहा भी है .

पद्रह अगस्त का दिन कहता, आजादी अभी अधूरी है।
कैसे उल्लास मनाऊँ मै, रावी की शपथ न पूरी है॥

रोशन सिह का गॉव नवादा अभावों मे जी रहा है। अभी यहाँ बिजली तक नही आई। परतत्रता के अधकार मे रोशनी की मशाल जलाने वाले रोशन सिंह का गॉव बिजली की रोशनी के लिए तरस रहा है, एक बल्ब के प्रकाश के लिए ताक रहा है। यहाँ न अस्पताल है, न विद्यालय है, न सडक है,

न पुल है। और तो और, नवादा तक पहुँचना कठिन है। विकास का प्रकाश कहाँ है ? थोथे नारो के बीच पचास वर्षों से जनता को आश्वासनो का चूरन चटाने वाले राजनेताओ से जनता को पूछना चाहिए।

इसी क्षण कौधा के समान मस्तिष्क में एक चमक-सी पैदा होती है और वह घटना, रोमाचकारी घटना याद आने लगती है जब काकोरी के अमर शहीदो को फॉसी की सजा सुनाई गई थी।

रोशन सिह को अदालत मे जज ने पहले पॉच-पॉच वर्ष की सजा सुनाई। वह अंग्रेजी मे 'फाइव इयर्स, फाइव इयर्स' कह रहा था। रोशन सिह बस इतना ही समझ पाए कि उन्हे पॉच-पॉच वर्ष की दो सजाएँ हुई है। जज ने आगे उन्हे फॉसी की सजा सुनाई। इसे रोशन सिह न समझ सके। उनकी बाजू में दुबलिशजी खडे थे। रोशन सिंह ने उनसे पूछा—"ई जजवा का बकर-बकर करि गवा।"

दुबलिशजी ने अपना दाहिना हाथ उनकी कमर मे डालकर कहा—"ठाकुर साहब ! जज ने आपको फॉसी की सजा सुनाई है।" इतना सुनकर रोशन सिंह का चेहरा खिल उठा, ऐसे कि जैसे गुलाब का फूल। वे प० रामप्रसाद बिस्मिल की ओर मुडकर बोले—"क्यो पडित ! अकेले-अकेले ही जाना चाहते थे।"

पत्रकार मित्र ने मोटर साइकिल दुरुस्त कर ली थी। हम नवादा गॉव को नमन करके चलने ही वाले हैं कि एक वयोवृद्ध महानुभाव मेरी ओर लपकते चले आ रहे है। आने पर बोले—"क्या वृद्धजनो की पैंसिन के कागज लाए हो ?" मैने कहा नही, मै रोशन सिह का जन्मस्थल को देखने आया हूँ। कुछ खिरझिराहट भरे शब्दों में वे कहते है—"नवादा मे उनके नाम पर कुछ नही है। यह गॉव तो अति पिछडा गॉव है। यहॉ कुछ भी नही है। हॉ, एक पुलिस चौकी जरूर बन गई है। ये तो डकैतो का एरिया था। यहॉ शराब खूब बनती थी लेकिन अब पुलिस की चौकसी से कुछ ठीक है। सिपाही भी तो चोरो-डकैतो का साथ देते है, शराब तो पीते ही है। हालत खराब है। सब राम आसरे चल रहा है।"

मोटर साइकिल एक ही किक मे स्टार्ट हो जाती है। मै पीछे बैठ लेता हूँ। धीरे-धीरे धूल-भरे रास्ते पर चलने के बाद वही गॉव आ जाता है, जहॉ धचाक से कीचड मे मोटर साइकिल रुक गई थी। अब की पहले ही हम

लोग उतर पडते है और एक किनारे से बडी अनवट से गुप्ताजी मोटर साइकिल को निकाल लेते है।

खुदागंज बाजार मे रोशन सिह की एक प्रतिमा स्थापित है। वह स्थान बहुत उपेक्षित पडा है। पत्रकार बधु बताते है कि चुनाव के दिनों मे प्रत्याशी इस प्रतिमा पर माल्यार्पण करने आते है और विजयी होने का आशीर्वाद माँगते है।

मैं तुरत बस पकड लेता हूँ और कटरा आ जाता हूँ। शाहजहाँपुर के लिए बस नही है। आधा घटा तक प्रतीक्षा मे खडा रहता हूँ, पर बस का कोई अता-पता नही है। एक ट्रक ड्राइवर दो-तीन सवारियो को बैठा लेता है। मै भी उसी मे बैठ लेता हूँ। कोई दस-बारह किलोमीटर चलने के बाद आर० टी० ओ० का सिपाही ट्रक को रोक लेता है। ट्रक ड्राइवर समझ लेता है कि उसने क्यों रोका है। इसलिए वह जेब से पचास का एक नोट निकालकर उसे थमा देता है और चल देता है। वह कहता है—"बाबू! ये साले सब कुत्ते है कुत्ते! अभी सीतापुर के पहले भी भेट चढानी पड़ेगी और आगे लखनऊ मे। रुपये हाथ मे पकडा दो सब ठीक वर्ना कई-कई घटे परेशान करते है। नोच-खसोट का जमाना है। कोई अच्छा शासन आ जाए तो सब ठीक हो जाए।" यह कहते-कहते जेब से बीडी निकालकर माचिस जलाकर उसे सुलगाता है—स्टेयरिग छोड़कर—और फकाफक धुआँ उगलने लगता है।

शाहजहाँपुर पहुँचकर मैं स्टेशन जाता हूँ और लखनऊ वाली गाड़ी के आने पर सवार हो जाता हूँ।

परिशिष्ट-4

- 'चाँद' के फाँसी अंक के शब्द
- 'काकोरी के दिलजले' पुस्तक से

श्री रोशनसिंह

जिन्दगी ज़िन्दा-दिली को तू जान ऐ रौशन,
यो तो कितने ही हुए और फना होते है।

असख्य गोपियो के बीच विलासिता का जीवन व्यतीत करने पर भी आज ससार कृष्ण को योगिराज के नाम से सबोधित करता है। यह सब इसीलिए न, कि उनकी उस विलासिता ने कभी भी उनके कर्त्तव्य-पालन मे बाधा उपस्थित नही की और उन्होने आवश्यकता के समय अपने को उन सब बातो से इस प्रकार अलग कर लिया, मानो सदा से उदासीन ही रहे हो अथवा दूसरे शब्दो मे हम यह भी कह सकते है कि उन्होंने मन पर विजय प्राप्त कर, अपनी इद्रियो को वश मे कर लिया था।

पाठको ! गुलामी के इस युग मे आज हम ऐसे ही एक कृष्ण को लेकर आपके सामने उपस्थित हो रहे हैं। पर्याप्त सपत्ति तथा ज़मीदारी के होते हुए भी वह वैरागी था। दो-दो स्त्रियो के रहते हुए भी वह निर्मम था और लाड-प्यार से पाले जाकर विलासिता के ऑगन मे खेलकर भी वह लिप्सा-हीन था। अपने साथियो मे वह सबसे बलवान् था और उत्साह का तो उसमें स्रोत ही बहा करता था। साधारण-सी शिक्षा पाकर भी उसके हृदय मे जलन थी, To do and die का तो वह मूर्त्तिमान् अवतार था। उसके निकट Why का सवाल ही कभी नही आया।

उस दिन 9 अगस्त, 1925 को, जब काकोरी तथा आलमनगर के बीच गाडी रोककर सरकारी खजाना लूट लिया गया था तो उसी के संबध मे आप भी गिरफ्तार कर लखनऊ लाए गए। जेल मे आकर आपने एकदम मौन धारण कर लिया। उस दिन से उन्होने आवश्यकता से अधिक बोलने का प्रयत्न न किया। वे हिदी तथा मराठी भाषा अच्छी तरह जानते थे, अत· उसी

के समाचार-पत्र पढ़ना और अपने मे ही मस्त रहना उनका नित्य का प्रोग्राम हो गया। डेढ साल तक अभियोग चलने के बाद आपको फॉसी की सजा हुई।

वकील ने कहा, "आपकी अपील कर दी गई।" उत्तर मिला—"कोई बात नही।" इसी प्रकार एक दिन सुपरिन्टेंडेंट ने आकर कहा, "रोशनसिह, तुम्हारी अपील खारिज हो गई!" उस समय भी वही पूर्व परिचित उत्तर मिला—"कोई बात नही।" फॉसी के एक दिन पहले परिवारवालो से मुलाकात की और उन्हे उत्साह देते हुए कहा, "तुम लोग मेरे लिए चिता न करना। भगवान् को अपने सभी पुत्रो का ध्यान है।"

19 दिसबर, 1927 का दिन था। प्रातःकाल उठकर स्नान किया, साफ़ कपडे पहने और मूँछो को ठीक कर फॉसी के तख्ते की ओर चल दिए। स्वागत के लिए कुछ लोग जेल से बाहर पहुँच गए थे। कुछ देर बाद जेल के अदर से गाने की आवाज सुनाई दी। सब लोग मत्र-विमुग्ध होकर सुनते रहे। गाना समाप्त होने पर 'वदेमातरम्' की आधी आवाज आकर रह गई। लोगो ने कहा, "फॉसी हो गई।"

आपको इलाहाबाद मे फॉसी हुई थी। कुछ लोगो ने अतिम सस्कार किया और भस्म को मत्थे में लगाकर वापस चले आए। तब से आज तक उस वीर का नाम-मात्र शेष है।

—रूपचद्र

ठाकुर रोशनसिंह

अपने साहस तथा वीरता के लिए जिले मे प्रसिद्ध, नवादा ग्राम, शाहजहाँपुर जिले के रहनेवाले थे ठाकुर रोशनसिह जी। गॉव की प्रसिद्धि के अनुसार ही ठाकुर रोशनसिह जी, अपनी आन के धनी एक बॉके-लडाकू योद्धा थे। तलवार, गदकाफरी, लाठी चलाने में वे बडे ही प्रवीण थे। बंदूक का निशाना बडा ही सच्चा था। चिडियो का शिकार आपने कभी बैठी चिडिया मारकर नही किया। उन्हे उड़ाकर तब निशाना लेते थे। व्यायाम से इन्हे बडा प्रेम था, कुश्ती भी खूब लडते थे। आर्यसमाजी होते हुए भी सकुचित भावना आपमे छू नही गई थी। हिंदी-उर्दू का अच्छा ज्ञान था। जेल मे बगला और इंग्लिश भी सीख ली थी।

प्रारभिक जीवन मे यह एक लडाकू ठाकुर थे। असहयोग की दुदुभी बजी, प रामप्रसादजी के संसर्ग ने इन्हे राजनैतिक क्षेत्र मे घसीट लिया। कदम बढाकर पीछे हटना तो इनकी शान के खिलाफ था। घूम-घूमकर गॉव-गॉव प्रचार करने लगे। बरेली में स्वयसेवको का सम्मेलन था। ठाकुर रोशनसिह जी भी अपने साथियो के साथ रवाना हुए। बरेली कुतबखाने पहुँचने का आदेश था, लेकिन पुलिस ने धारा 144 लगवा दी थी।

जगह-जगह लाल साफे बॉधे पुलिस के सिपाही लट्ठ लिए घूम रहे थे। इन्हे रुकने का हुक्म दिया गया, सत्याग्रही ठाकुर रोशनसिंह कैसे रुक सकते थे? वे लोग बढते गए। सब साथियो के साथ गिरफ्तारी हुई। औरों को छ' महीने और ठाकुर रोशनसिह जी को ढाई वर्ष की कडी कैद का उपहार मिला। बरेली जिला जेल मे धूनी रमी।

अजब धुन के आदमी थे ठाकुर रोशनसिंह। सजा मे चक्की चलाने का काम दिया गया। लोगो ने उनसे कहा, इसको करना ठीक नही, आपने उत्तर

दिया जब बदन मे ताकत है तो काम क्यो न किया जाए ! जुट गए चक्की पर और साढे नौ बजे 15 सेर गेहूँ पिसकर तैयार। एक दिन नही, दो दिन नही, पूरे एक साल तक आप चक्की पर ही जुटे रहे।

जेल से निकलकर देखा कि जिस रास्ते पर चले थे वह तो बद है। श्री रामप्रसाद से मिले, कुछ विचार-विनिमय हुआ और आप क्रांतिकारी दल के काम मे जुट पडे।

26 सितबर 1925 को आप भी गिरफ्तार कर लिए गए। कोई विशेष सबूत न था, कुछ विशेष भाग न था। सभी सोचते थे ठाकुर साहब को बहुत कम सजा होगी। पर न जाने वे कौन-से कारण थे जिन्होने उन्हे सजा दिलवाई फॉसी की। रिहाई की आशा रखनेवाले को सुनाया गया मृत्युदड! पर कर्मवीर रोशनसिंह जी के चेहरे पर शिकन तक न थी। स्वाभाविक गभीरता के साथ उन्होंने सबकी ओर देखा।

सब एक विचित्र भावना से उनकी ओर ताक रहे थे। ठाकुर साहब ने बढकर छोटो की पीठ पर वात्सल्य भाव से हाथ रखकर कहा, "चिता करने की तो कोई बात नहीं है, परेशान क्यो होते हो। सबसे अधिक उम्र मेरी थी, सबसे अधिक मुझे मिलना भी चाहिए था, वही मुझे मिला है, यह तो खुशी का ही बायस है।" हम सब चुप रह गए।

अटल धीरता उनका एक विशेष गुण था। हवालात की अवस्था मे पिताजी के मरने का समाचार आया। केवल दो-तीन बार जोर-जोर से 'ॐ तत्सत्' का उच्चारण किया और फिर वही अपने नित्य के काम मे लग गए। उस दिन लोगो ने सोचा था, ठाकुर साहब के दिल मे अपने पिता के लिए शायद कोई जगह नही है। पर आज उनके चरित्र की महना साफ नजर आती है।

फैसले के बाद इन्हे इलाहाबाद जेल भेज दिया गया। वहाँ भी इनकी दिनचर्या में कोई परिवर्तन न हुआ। नियमित रूप से मेहनत करना, संध्या-वंदन, गीतापाठ सभी कुछ बराबर चलता रहा। लोगो को आशा थी कि चीफ कोर्ट इनके मामले मे अवश्य ही कुछ करेगा। पर जहाँ वादी और न्यायी एक हो वहाँ ऐसी-कुछ आशा करना अपने आपको भ्रम मे डालने के सिवा और क्या सिद्ध हो सकता है! सब जगह से यही फैसला रहा। 13 दिसबर

1927 को उन्होंने इलाहाबाद जेल से यह पत्र लिखा था

"इस सप्ताह के भीतर ही फॉसी होगी, ईश्वर आपको मुहब्बत का बदला दे। मेरे लिए आप हरगिज रंज न करे। मेरी मौत खुशी का बायस होगी। दुनिया मे पैदा होकर मरना जरूर है। बदफेल करके आदमी दुनिया मे अपने आपको बदनाम न करे और मरते वक्त ईश्वर का ध्यान रहे यही बाते होनी चाहिए। ईश्वर की कृपा से मेरे साथ मे दोनों बाते है। इसलिए मेरी मौत किसी प्रकार भी अफसोस के काबिल नही है। दो साल से मै बाल-बच्चो से अलग हूँ। इस बीच ईश्वर-भजन का खूब मौका मिला है।

अब तो सब मोह छूट गया है। कोई वासना भी नही रही। मुझे विश्वास है दुनिया की कष्टभरी यात्रा समाप्त करके मै अब शांति की गोद मे जा रहा हूँ। अंत में :

जिदगी जिदादिली को जान, ऐ रोशन,
वगरना कितने मरते और पैदा होते जाते हैं!

आखिरी नमस्ते!

आपका
रोशन"

19 दिसबर को प्रात 4 बजे पहरा देनेवाले सतरियो ने देखा, ठाकुर रोशनसिह गीता पढने के बाद व्यायाम कर रहे है। सिपाही ने कहा, "ठाकुर साहब अब तो फॉसी पर जाने का समय आ रहा है। आप यह कसरत क्यो कर रहे है?" मुस्कराकर बडी ही लापरवाही से ठाकुर साहब ने जवाब दिया, "नित्य-नियम मे बाधा तो न पड़नी चाहिए। जिस वक्त के लिए जो काम तय है उसे करना ही चाहिए। जब फॉसी का वक्त आएगा उसे भी कर लेगे।" बेचारा सिपाही चुप था, उसने बड़े-बडे खूनी और डकैतो को फॉसी जाते वक्त देखा था।

बहुतो के प्राण तो कोठरी से निकलते ही निकल गए थे। जेल के सिपाहियो ने निर्जीव शरीर को ले जाकर फॅदे मे डालकर लटका दिया था और एक था यह आदमी जो शाति और लापरवाही के साथ इस अंतिम घडी

मे फॉसी से पहले मेहनत कर रहा है और पूछने पर सब बातो का जवाब मुस्कराकर दे रहा है। उसके लिए तो यह प्राणी आश्चर्य और श्रद्धा की चीज बन गया।

लोग फॉसी के लिए लेने को आए। गीता लिए मुस्कराकर ठाकुर साहब चल दिए। सीढियॉ चढते हुए बराबर वदेमातरम् का नारा लगाते रहे। और ॐ की ध्वनि के साथ इस असार ससार से विदा हो गए। जेल के बाहर जनता की अपार भीड शव लेने के लिए खडी थी। दाह-सस्कार के लिए शव को देने के बाद अधिकारियो ने जुलूस न निकालने का प्रतिबध लगा दिया। दुःखित हृदय से लोगो ने चुपचाप अर्थी को ले जाकर सम्मान के साथ उनका अंतिम सस्कार किया और श्रद्धाजलि अर्पित की।



राजेन्द्र लाहिड़ी

हम सरेदार जो बशर शौक़ घर करते हैं,
ऊँचा सर कौम का हो नज़रिया सर करते है।
सूख जाए न कही पौदा ये आज़ादी का,
खून से अपने इसे इसलिए तर करते हैं।

अमर शहीद राजेन्द्र लाहिडी का शहर

वाराणसी

कई दिनो से सोच रहा था कि क्रातिवीर शहीद राजेन्द्र लाहिडी के जन्मस्थान का दर्शन करने बगाल जाऊँ। पढ़ा था कि उनका जन्म सन् 1901 मे बंगाल के पठाना जनपद के मोहनपुर गॉव मे हुआ थ। वहाँ जाने की तैयारी मे जुट जाता हूँ, कितु एक मित्र सूचित करते है कि पठाना अब बाग्लादेश मे है। तो फिर जाने का कार्यक्रम स्थगित कर देता हूँ। कितु मन मे रह-रहकर यह भाव आता है कि काकोरी काण्ड के शेष सभी शहीदों के जन्म-स्थल का दर्शन कर लिया है, तो राजेन्द्र लाहिडी के कर्मस्थल वाराणसी में जाकर ही उस मकान के दर्शन करूँ, जहाँ वे आठ-नौ वर्ष की आयु मे अपनी माता बसत कुमारी देवी और बड़े भाई के साथ बगाल का घर सदा के लिए छोडकर चले आए थे। अस्तु वाराणसी की यात्रा पर चल देता हूँ। झोले में कैमरा, लाई-चना, मिर्च-नमक और एक पैकेट अजवाइन पड़ी पूड़ियॉ रख लेता हूँ। इन पूडियो के साथ अमिया वाले अचार की चार-पॉच फँकियाँ भी रख लेता हूँ, क्योकि आलू या घुइयॉ तो बासी होने पर गध मारने लगती हैं। हाथ मे छाता लेकर, गले मे गमछा डालकर चल देता हूँ। रेलवे स्टेशन पहुँचते-पहुँचते घटा घिर आती है, पहाड जैसे काले-काले बादल धरती के ऊपर टँगे हैं। घनघोर वर्षा शुरू हो जाती है। टैम्पो से उतरकर जैसे-तैसे लॉगी चढाए, छाता ताने स्टेशन पहुँचता हूँ।

आज टिकट की खिडकी पर कम भीड़ है। टिकट कटाकर प्लेटफार्म पर एक खाली बेच पर जम जाता हूँ। गाड़ी आती है, दूसरे दर्जे के एक डिब्बे मे आराम से बैठने को मिल जाता है। वर्षा के दिनो मे लोग कम यात्रा करते

है, इसलिए आराम से बैठने को मिल जाता है।

गाडी सीटी देकर चल देती है। उधर झमाझम पानी बरस रहा है। खिडकी से देखने पर बाहर का दृश्य बहुत सुहावना लग रहा है। रायबरेली स्टेशन के बाद प्रकृति की तरुणाई का उफान देखकर मन मे आनद का उफान उठने लगता है। खेत जोते जा रहे है। स्त्रियो के झुण्ड धान की बेड लगा रहे है। गाँवों की स्त्रियाँ खेती का काम भी करती है और अपनी गृहस्थी का काम यानी चौका-बर्तन, रोटी-पानी का काम भी। कोई शहरातू स्त्रियाँ तो ये है नही कि आलस्य मे डूबी रहती हों।

एक मौहारी बाग मे सैकडो महुए के पेड़ अपनी डालियो को पानी के बोझ से नीचे की ओर झुकाए हुए धरती को चूमने का मन बना रही है। महुए के फल गुल्लू (कोइया) भी खूब लदे है। आम के पेड़ो पर आम नहीं दिखाई देते है। जामुन के पेड़ो पर अब फरेंदे नही रह गए।

बबूलो के पीले-पीले फूल सज रहे है। मुझे याद आते है अपने सुखदेव काका, जो बचपन मे जाडे के दिनो में तपता के पास सध्या के समय बुझौवल सुनाते थे :

सावन फूल चैत मे फल।
जान तो जान नहि उठ के चल॥

बबूलों में सावन में फूल लगते हैं और आठ महीने बाद चैत मे फल (सिगरी) लगते है।

मै प्रकृति के नाना दृश्यो को देखता जा रहा हूँ। छोटे-छोटे नाले उफना रहे है। अरे ये क्या! किसी ने गाडी की चेन खीच ली, गाड़ी रुक जाती है। सामने के खेत मे बेड रोपने वाली स्त्रियाँ धोती की कॉच खोसे गीत गा रही है—"मै ना करौं ब्याह, कन्हैया तेरो कारो।" गाडी चल देती है, गीत की दूसरी कडी ठीक से नही सुन पाता।

गाडी अमेठी, प्रतापगढ़, जौनपुर और न जाने कौन-कौन से स्टेशन पार करके वाराणसी स्टेशन के प्लेटफार्म से आ लगती है।

बड़ा मुश्किल है। पानी खूब जोरो से बरस रहा है। कहॉ जाऊँ? शहर में कोई परिचित भी तो नही है। होटल में ठहरने का बूता नहीं, कोई ठेकेदार, सेठ साहूकार या नेता होता, तो कोई बात नही। रिटायर्ड मुदर्रिश, यहॉ होटल में पैसा फूँक दूँगा, तो महीने का खर्च कैसे चलेगा। सो स्टेशन पर पडी एक

खाली बेच पर जम जाता हूँ। उसी पर सोने का मन बना रहा हूँ। चप्पल है तो पुराने, पर कोई झाड ले गया तो फिर नगे पॉव ही घर लौटना पडेगा। उन्हे एक अखबार मे लपेटकर सिर के नीचे रखने का विचार कर रहा हूँ। मन सकुचाता है कि चप्पल और सिर के नीचे! भाव आता है कि अपने ही चप्पल तो है, कौन किसी और के है। लोगो के सिर तो दूसरो के चप्पलो से पूजे जाते है इसी पिछले चुनाव मे मैने देखा था, एक नेता जी को लोगो ने नाराजगी के कारण जूतो की माला पहनाई थी। उन पर उस का कोई असर नही पड़ा था। दूसरे दिन वे फिर लकालक, चकाचक थे। तो मानना ही पडेगा कि नेता की खाल गैडे जैसी मोटी हो जाती है और हृदय पत्थर जैसा कठोर हो जाता है।

खैर, छोड़ो इन वाहियात की बातो को, मै झोले की तनी हाथ मे फँसाकर सोने के उपक्रम मे व्यस्त हूँ। रोशनी के कारण ऑखे तो बद किए हूँ, कितु नीद कोसो दूर है। एक झपकी-सी लगती है पर यह क्या, शरीर मे दो-तीन जगह इजेक्शन-से लगते हैं। सँभलकर बेच पर करवट लेता हूँ, फिर सोने की कोशिश करता हूँ, फिर इजेक्शन। आखिर माजरा क्या है? मै उठकर बैठता हूँ तो देखता हूँ कि सैकडो खटमल, वो भी मोटे-मोटे बेच की दराजों मे विराजमान है। मन करता हैं इनसे कहूँ कि जाओ, उनके बिस्तरो मे जो मोटे तोद वाले हैं। वे देश का खून चूस रहे है, तुम उनका खून चूसो।

बैठना तक दूभर है इस बेच पर, बडे गिरोह है खटमलो के! मै जमीन पर एक अखबार बिछाकर पालथी लगाकर बैठ जाता हूँ और पाठशाला मे आचार्य जी के रटाए हुए श्लोक का भावार्थ सोचने लगता हूँ—खटमलो के डर से ही कमला कमल पर शयन करती है, शंकर बाबा हिमालय पर सोते है और विष्णु भगवान क्षीर सागर मे सोते है।

झोले से एक पुस्तक 'राजनीति की रपटीली राहे' निकालकर पढने लगता हूँ। भिनसार हो गया है, चिरैया बोलने लगी है, मै नित्यकर्म से निवृत्त होकर एक नीम की दातून पचीस पैसों में खरीदता हूँ और उसे दॉतो से दबाता हुआ चल देता हूँ। उसकी कूची बनाकर दॉतो पर सरपट दौडाता हूँ, बीच से चीरकर जीभ साफ करता हूँ और नगर निगम के बिना टोटी वाले सदा बहने वाले नल पर जाकर कुल्ला करता हूँ।

काशी आया हूँ, तो गगा स्नान का पुण्य लेकर ही घर जाऊँगा। कुछ

दूर चलने पर काशी विद्यापीठ के सामने एक सम्भ्रात सज्जन गमछा और बण्डी पहने नगे पैर गगा-स्नान करने मुँह से कुछ जाप करते हुए मजे-मजे चले जा रहे थे। वे विद्यापीठ मे समाजशास्त्र विभाग में प्राध्यापक है। मै शहीद राजेन्द्र लाहिडी की बात छेड देता हूँ। ओंठ पर लदी तम्बाकू की लुगदी को थूकने के बाद गदोरी से ओंठ पोछते हुए वे कहते है—"राजेन्द्र लाहिडी रहे तो है यहॉ, मैने ऐसा पढ़ा है, किंतु वे यहाँ कहाँ रहते थे, मै न बता पाऊँगा। और हॉ, आप इस झझट मे कैसे फॅस गए? अरे कोई उपन्यास लिखिए, अच्छी रायल्टी मिलेगी।"

वे अपना लेक्चर पिलाते जा रहे है और मै निरपेक्षभावेन हॉ-हूँ करता हुआ चल रहा हूँ। गंगाघाट आ गया। वे अपनी राह लेते है, मैं अपनी। सीढियॉ उतरकर एक तख्त पर पण्डा बाबा को कपडे और झोला सिपुर्द करता हूँ और स्नान के लिए बढ़ता हूँ। 'अरे-रे-रे, पैर फिसल जाता है, मै धचाक से पानी में गिर जाता हूँ। खैर, तैरना जानता हूँ', कोई डर नहीं है। एक सज्जन कहते है—घाट की सीढियॉ बहुत फिसलन भरी है।

मै बरसाती मटमैले गंगाजल मे खूब केल्हा-केल्हा कर नहाता हूँ और होशियारी के साथ सीढी पर चढता हूँ। कपडे बदलकर पण्डा बाबा से माथे पर चदन लगवाता हूँ और उनके आइने मे अपना चेहरा देखकर कंघी से बाल सॅवारता हूँ। कई बार चेहरे को विभिन्न मुद्राऐं बनाकर देखता हूँ। पण्डा बाबा को दक्षिणा देता हूँ। वे कहते हैं—'बछिया तो पुजा लो। बीस आने वाली, पॉच रुपये वाली, ग्याहर रुपये वाली, जो श्रद्धा हो।' मै उनको प्रणाम कर कुछ दूर पर पड़े एक खाली तख्त पर आसीन हो जाता हूँ।

झोले से बासी नमकीन पूड़ियो का पैकेट निकालता हूँ। खटाई के साथ खूब चुभला-चुभलाकर खा रहा हूँ। अरे-अरे ये सॉड देवता मेरा पूरा पैकेट अपने मुँह में भरकर वैसे ही बेरुखी के साथ मुँह मोडकर चल देते है, जैसे आजकल के मंत्री सरकारी अनुदानों की धनराशि उडाकर चल चल देते है। अचार की दो-तीन फकियाँ तख्त पर पड़ी है। मैं गुस्से मे उनको उठाकर गंगा मे फेक देता हूँ।

तभी याद आता है कि यह तो काशी है। यहॉ के विषय मे प्रसिद्ध है .

रॉड सॉड सीढी सन्यासी,
इनसे बचे तो सेवे काशी।

सीढी की चोट खा चुका। सॉड का झपट्टा भी भोग चुका। दो बाते घटित हो चुकी। अब आगे पूरा सावधान रहूँगा। मुँह बनाता हुआ, कचौडी-गली की ओर चलने का मन बना रहा हूँ कि एक खद्दरधारी सज्जन, स्वतंत्रता संग्राम सेनानी का बिल्ला लगाए घाट पर आ रहे है। मै नमस्कार करके उनसे पूछता हूँ—"यहाँ राजेन्द्र लाहिडी जी का घर कहाँ था ?" वे सन्न खडे है, "कौन लाहिडी ?"

"जिन्होने रामप्रसाद बिस्मिल और चंद्रशेखर आज़ाद के साथ काकोरी मे ट्रेन डकैती डाली थी।"

वे आकाश की ओर ताकने लगते है और मायूस होकर कहते है—"मै न बता पाऊँगा।"

मैं समझ गया कि ये महाशय असली स्वतत्रता सग्राम सेनानी नही है, ये नकली हैं। किसी मत्री के चमचे रहे होगे, उसने इनको पेशन, बस का पास, रेल का पास वगैरह दिला दिया होगा।

ऐसा भी सुनने मे आया है कि चोरी-चकारी मे जेल गए तमाम लोगो ने 'सोर्स' की बदौलत फर्जी ढंग से स्वतत्रता सग्राम सेनानी का सर्टिफिकेट हासिल कर लिया है। राम जाने, मै कुछ नही कह सकता।

कचौडी वाली गली मे जाकर ढाक के पत्तों पर गरम-गरम कचौडियाँ, दोने मे आलू की रसेदार सब्जी, रायता लौकी वाला, अचार अम्बार वाला पेट भर खाता हूँ और कई कुल्हड पानी पीता हूँ। दिन भर के लिए टच हो जाता हूँ। घूमता-टहलता शहीदे आजम लाहिड़ी के घर का पता लगाने 'भारत माता' के मंदिर आता हूँ। मदिर पूर्ण उपेक्षित है। वेदकाल से लेकर आज़ादी के समय तक के जो चित्र वहाँ बने थे, लगभग सब मिट गए है। जो देश, जो राष्ट्र, जो नगर 'भारत माता' के मदिर का रख-रखाव नही कर सकता, उसके दुर्भाग्य की और क्या सनद हो सकती है ?

मैं यहाँ के प्रबंधक श्यामदास सिह से मिलता हूँ। वे बताते है कि इस मदिर को लेकर काशी विद्यापीठ और राष्ट्ररत्न शिव प्रसाद गुप्त के परिवार-जनो मे मुकदमा चल रहा है। मै वहाँ की एक इबारत को पढता हूँ जिसमे लिखा है कि यह भारत माता का मदिर सन् 1918 में बाबू शिव प्रसाद गुप्त द्वारा बनवाया गया था।

मदिर के प्रवेश-द्वार पर दो सुदर सफेद संगमरमर के पत्थरो पर

'वदेमातरम्' पूरा मोटा-मोटा लिखा है। मदिर के एक पत्थर पर भी लिखा है "राष्ट्ररत्न श्री शिव प्रसाद गुप्त ने भारत माता मदिर का निर्माण स. 1975 (सन् 1918 ई.) मे अत्यत पवित्र भावना से किया था।"

इस मदिर का रख-रखाव नही हो रहा है।

लंबा-चौडा परिसर है पर वहाँ केवल अशोक के कुछ वृक्ष खड़े है और बरसात के कारण घास भी। एक चरवाहा बकरियो को चरा है। कई नग-धडग लडके खेल रहे है। सामने का पुराना कूप, जिसका जल पिया जाता है, भी मरम्मत के लिए बाट जोह रहा है।

मै श्याम दास सिह से राजेन्द्र लाहिडी का घर पूछता हूँ। कुछ देर वे सोचते रहते है तब कहते है कि आप लहरी प्रेस चले जाइए, घोडा अस्पताल के पास है। वहाँ पता चल जाएगा, शायद वही लाहिडी रहते थे। मुझे प्रसन्नता हुई, मानो जग जीत लिया। खोजी को जब पता-ठिकाना मालूम हो जाता है तो उसका मन प्रफुल्लित हो जाता है।

मै लहुरा वीर वाली सड़क पर आ जाता हूँ। पूरी सडक मे बित्राइयाँ फटी है, कूडो के पचासो ढेर और छोटी-छोटी तलैयाँ भरी है। लगता है यहाँ नगरनिगम नही है। है जरूर पर नगर प्रमुख की लालबत्ती वाली एम्बेसडर कार मे समाया हुआ है। हजारो रुपए का पेट्रोल महीने मे फुँकता है, केवल अपना रोब दिखाने के लिए, उद्‌घाटन के कार्यक्रमो मे आने-जाने के लिए।

सेवा की भावना, राष्ट्रप्रेम की लगन, जनकल्याण के कार्यो मे रुचि तथा देश को उन्नति की ओर ले जाने वाले विचार, सब दुर्लभ हो गए। चुनाव के समय नेता हाथ जोड़ता है, गिडगिड़ाता है, लुरखुरिया करता है, वोटर को माई-बाप मानता है, रुपया खर्च करता है, साडी बँटवाता है, बोतले देता है, और न जाने क्या-क्या करता है। किंतु चुनाव के बाद वह सब कुछ भूल जाता है। बाद मे तो वह लोगो से हाथ जुडवाता है, अपनी जयजयकार करवाता है, घूस लेता है, रोटी से मन भर जाता है तो बेचारे पशुओं का चारा खा जाता है, बिस्तर पर गद्दे के स्थान पर नोट बिछाकर सोता है और अपने इस लोकतत्र मे मूँछे, न ना, मूँछें नही रखता, डरता है, कही कोई उनको उखाड न ले पर ताल ठोक कर कहता है—हमे जनता ने चुना है, हम जेल मे बैठकर भी फाइले देखेगे।

मै गोल चौमुहानी (चौराहा) पर आ जाता हूॅ। इस चौराहे पर क्रातिवीर चद्रशेखर आजाद और श्रीप्रकाश की प्रतिमाएँ लगी है। प्रतिमाएँ ठीक हाल मे हैं, गोल चक्के के भीतर कुछ पौधे भी लगे है, किंतु कूडों के बजबजाते ढेर, नालियो में वर्षो से पल रहे मोटे-मोटे कीडे मुँह बिराते है।

चौराहे से आगे पहले बाई ओर, फिर दाई ओर मुडता हूॅ। एक पुराने मकान मे बोर्ड लगा है—'लहरी प्रेस'। जी मे जी आता है। गगा स्नान करके लौटे हुए प्रेस के मालिक स्वस्थ, छह फुट सात इंच के लगभग ऊँचे, गौरवर्ण, तहमद लगाए, लबा कुर्ता पहने, माथे पर पण्डा जी से चंदन लगवाए, छाता थामे मिलते है। उनसे पूछता हूॅ :

"क्या राजेन्द्र लाहिडी इसी मकान में रहते थे?"

वे मुझसे प्रश्न करते है—"कौन लाहिरी?"

मै बिल्कुल हक्का-बक्का हो जाता हूॅ, उनको बताता हूॅ—"जिन्होने काकोरी काण्ड मे फॉसी की सजा पाई थी, बगाली थे वे।"

"नही जी, हम लोग तो पंजाबी है।"

मै निराश होकर कुछ अपने को, कुछ पता बताने वाले महानुभाव को कोसता हुआ वहाँ से बैरग लौटता हूॅ।

चौमुहानी के समीप एक होटल मे पानी पीने के लिए घुसता हूॅ, तो देखता हूॅ कई खद्दरधारी विभिन्न आयु वाले नेतानुमा लोग मिठाई ले रहे है। मै प्रसन्न होता हूॅ कि अब काम बन जाएगा। इनमे से कोई न कोई राजेन्द्र लाहिडी का घर तो जानता ही होगा। किंतु यहाँ भी निराशा ही हाथ लगी। किसी को नही मालूम कि लाहिडी का घर कहाँ है? एक सभासद जी कहते है—"आप गुदौलिया चले जाइए। वहाँ बंगालियो के घर है, वे बता देगे।"

मैं गुदौलिया की ओर चल पडता हूॅ। पानी बरस रहा है। धोती की लगारी लगा लेता हूॅ और वाराणसी की खदक भरी इस सड़क पर खभर-खभर पानी मॅझाता चला जा रहा हूॅ। एक पुस्तको की दुकान पर एक प्रौढ सज्जन, ग्राहकों के अभाव मे, वर्षा की फुहारो को निरख रहे है। मैं उनके पास जाता हूॅ और वही प्रश्न—"राजेन्द्र लाहिडी का मकान कहाँ है?" पूछता हूॅ। वे वर्षा की तरग के साथ ही भंग की तरंग में भी है। भाई काशी है, यहाँ तो शकर की बूटी छानने वाले बहुत लोग है।" वे सज्जन ऑखे मलते हुए

कहते है—"वो आगे वाली गली जो है, उसमे कटरा है, वहॉ तमाम बगाली रहते है, वे आपको बता देगे।"

आगे बढता हूॅ। बाई ओर मुडकर एक चूना बेचने वाले सज्जन बताते हैं—यही गली कटरा है। अत्यत तग गली, लगभग तीन फुट चौडी, उसी मे साइकिले, स्कूटर और दुकानें। थोडा अदर बढने पर एक वकील साहब शिवशकर रस्तोगी अपने कार्यालय मे बैठे फाइले देख रहे है। स्वभाव से सज्जन, विनम्र और भक्त रस्तोगी जी मुझे प्रेमपूर्वक बैठाते है और बगाली समाज के अध्यक्ष सेन बाबू, बोस जी, बसंत कुमार बनर्जी, तपन घोष आदि से फोन पर लाहिडी के घर का पता पूछते है पर कोई न बता सका। अत में एक वकील साहब को फोन करते है। उनका उत्तर है—बताऊँगा, पहले पूजा कर लूॅ। आधा घटे बाद फोन कर लेना।"

पौन घटा बीतने पर रस्तोगी जी फोन करते है। तो वे कहते है—नाश्ता कर लूॅ, तब बताऊँगा। ठीक पचपन मिनट के बाद फिर फोन मै स्वय करता हूॅ। नौकर बोलता है, अभी नाश्ता करते हैं। मै सोचता हूॅ कि वे नाश्ता करते है कि सानी खाते है। निराश होकर, रस्तोगी जी को उनके सद्व्यवहार के लिए धन्यवाद देकर मै चल देता हूॅ।

एक गली मे तनजेब का कुर्ता और सॅकरी मोहरी का पायजामा पहने बरसाती जूतो से सजे, खिजाब लगी लंबी दाढी वाले एक मौलवी साहब अपने चश्मे से अंदाज-अदाज कर बेत रखते हुए धीरे-धीरे बनारसी पान चबाते हुए कुछ गुनगुनाते चले आ रहे है। इनका नाम है रसूल बख्श। मै इनसे भी अपना सवाल दाग देता हूॅ। मुॅह के पीक को एक दीवाल पर थूकते हुए वे कहते है—हॉ, नाम तो मैने इनका सुना है। ये चद्रशेखर और अशफाक के दोस्त थे। यही बनारस मे कही रहते थे। लेकिन उनके नाम पर तो यहॉ कुछ नही है। न किसी सडक का नाम इनके नाम पर है, न कही कोई मूर्ति लगी है न सडक बनी है। अरे जनाब! आप भी बरसात के मौसम मे कहॉ फॅस गए! किसी बुजुर्ग नेता के पास जाइए, शायद वो मदद करें।

मैं काशी हिदू विश्वविद्यालय की ओर चल देता हूॅ। एक चबूतरे पर कई बुजुर्ग बैठे गप्पे लडा रहे है। मै रिक्शे से उतर कर उनके पास जाता हूॅ।

उनमे एक महाशय यूनिवर्सिटी मे अध्यापक रहे है। वे कहते हैं—"इस शहर मे लाहिडी अपने भाई के साथ रहते थे। एम. ए. मे पढ़ते थे। लेकिन स्वतत्र भारत के बेईमान नेताओ ने उनकी यादगार में कुछ नही किया, जबकि इस नगर मे कई मुख्यमत्री हुए, कई राज्यपाल हुए। भारतीय नेतृत्व संवेदनशून्य हो गया है। सबको अपने लाभ की बात सूझती है। आप अखबारो में तो पढते ही होगे कि फलॉ मत्री ने इतने करोड हजम किए, फलॉ ने इतने। किंतु, किसी को कुछ नही होता। शहीदो को जिस गुमनामी मे हमारे देश ने डाल दिया वह निहायत शर्म की बात है।"

एक दूसरे सज्जन, जो उच्च प्रशासनिक पद पर रहे है, कहते है—"क्या लाहिडी, क्या सुभाष, क्या आजाद, क्या भगतसिंह सबको जानबूझ कर भुलाया गया है। आज देश का जो हाल है, भगवान ही मालिक है। हॉ, ऐसे मे 'एक व्यक्ति' की ओर ऑखे सब की लगी है। उसकी दूधिया चादर को कोई मैला नही बता पाया।" "कौन है वह?" मै किस का नाम लूँ? "लेकिन देख लेना वो व्यक्ति एक दिन मुल्क की तकदीर बदल देगा।"

वे उस व्यक्ति का नाम नही बताते और कल्पना करने पर भी मै कह नही सकता कि उनका इशारा किसकी ओर है। खैर, उन लोगो ने मुझे सस्कृत विश्वविद्यालय मे जाकर लाहिडी के घर का पता लगाने की बात सुझाई।

मैं सस्कृत विश्वविद्यालय मे पहुँचता हूँ। वहॉ आज अवकाश है। एक सेवानिवृत्त आचार्य जी मिल जाते है। "लाहिडी का घर कहॉ था?" मै यह प्रश्न करता हूँ। वह एक चबूतरे पर बैठने का सकेत करते हुए स्वय बैठ जाते है। फिर कहते है—"भाई, राजेन्द्र लाहिडी, बनारस मे बीस बरस के आस-पास रहे थे। यही विश्वविद्यालय में एम. ए. के छात्र थे किंतु गुप्त रूप से क्रातिकारियो के दल मे थे। वे क्रातिकारी सघ की प्रांतीय कौंसिल के मेम्बर थे। मेरे पिताजी गुप्त रूप से क्रातिकारियो की सहायता करते रहते थे। वे लाहिड़ी के विषय मे बताते थे कि लाहिड़ी की अतर्राष्ट्रीय राजनीति, अर्थशास्त्र तथा इतिहास मे रुचि थी। बडी कुशाग्र बुद्धि के थे वे। बगाल की पत्रिकाओं मे लेख भी लिखते थे। यहॉ से उन्होंने क्रातिकारियो का एक हस्तलिखित पत्र 'अग्रदूत' निकाला था। वे यहॉ की 'बगला साहित्य परिषद

के मंत्री भी थे। वे इतने सरल थे कि उनको देखकर ऐसा नही प्रतीत होता था कि वे क्रातिकारियो के नेता है।

"अरे हॉ, भाई साहब, पिताजी यह भी बताते थे कि वे गगाजी मे तैरने का अभ्यास करते थे। लतीफे सुनाना, लोगों को हँसाना और मस्त रहना उनकी आदत थी। मेरे पास एक पुरानी किताब है, उसमे उनका गोण्डा जेल से लिखा हुआ पत्र दिया है।"

वे एक कोठरी मे जाते है और कुछ देर बाद एक पुरानी पोथी लेकर आते है और वह पत्र बॉचकर सुनाते है। मै उस पत्र को लिखना चाहता हूँ, वे प्रसन्नतापूर्वक बोलते जाते है और मै लिखता जाता हूँ। पत्र इस प्रकार है :

गोण्डा जेल
6 दिसबर, 1927

पूरे छह मास तक बाराबकी और गोण्डा जेल की कालकोठरियो मे बंद रहने के बाद कल मुझे सूचना मिली कि एक सप्ताह के भीतर ही फॉसी हो जाएगी। अब मै अपना यह कर्तव्य समझता हूँ कि उन सब मित्रो के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रगट करूँ, जिन्होने हम लोगो के लिए हर तरह की कोशिशे की। आप लोग मेरा अतिम नमस्कार स्वीकार कीजिए। हमारे लिए मृत्यु शरीर का परिवर्तन मात्र है। पुराने कपडो को त्याग, नए कपडे पहन लेना है। मृत्यु आ रही है। मैं प्रसन्न चित्त और प्रसन्न वदन से उसका आलिंगन करूँगा।

जेल नियमों के कारण अधिक नही लिख सकता। आपको नमस्कार। देश-हितैषियो को नमस्कार। सबको नमस्कार ! ! वदेमातरम्।

आपका
राजेन्द्रनाथ लाहिडी

मै मन ही मन अपनी इस उपलब्धि पर प्रसन्न हो रहा हूँ और आचार्य प्रवर से लाहिडी का घर पूछता हूँ। वे कहते है—"पिताजी होते तो वे बता देते। मुझे इतना पता है कि दशाश्वमेध घाट की ओर कही रहते थे। आप जगदीश, जगेश के घर चले जाएँ, वे तो अब रहे नही, लेकिन शायद कोई

आपकी मदद कर दे।"

अब मैं जगदीश जगेश के द्वार पहुँचता हूँ। पता चलता है कि इस समय कोई नही है। पडोस मे ही एक अग्रेजी के प्रसिद्ध दैनिक के कार्यालय मे नवयुवक पत्रकार रमेश कुमार से भेट होती है। वे राजेन्द्र लाहिडी का मकान खोजने मे काफी पापड़ बेल चुके हैं और सफलता भी हासिल की है। वे विस्तार से मुझे बताते है :

"काकोरी ट्रेन डकैती मे जिन 10 क्रातिवीरो ने हिस्सा लिया था उनमे लाहिडी भी एक थे। 9 अगस्त 1925 को इन क्रांतिकारियों ने अग्रेजो के खजाने को लूटा था। उस समय राजेन्द्र एम० ए० (इतिहास) के छात्र थे। उनकी प्रतिभा की सभी प्रशसा करते थे।

"राजेन्द्र लाहिडी वाराणसी मे लगभग अठारह वर्ष रहे। उनके बडे भाई यहाँ डाक्टर थे। जगदीश जगेश ने 'शहीद स्मृति' सस्था बनाई थी। दशाश्वमेध घाट के निकट ही राजेन्द्र लाहिडी रहते थे। जगदीश जी के अनुसार मकान न डी-17/142 मे ही लाहिड़ी का निवास था। उनकी फाँसी के बाद, परिवार के लोग उसे छोडकर चले गए और बाद में उस पर कुछ असामाजिक तत्त्वो ने अपना अधिकार जमा लिया।

"वैसे वह इमारत मूलत· कलकत्ता के एक घोष-जमीदार परिवार की थी। बाद मे उस मकान को श्री तुलसियानी ने खरीद लिया, जिसमे नीचे के भाग मे उनकी तीन दुकाने है और ऊपर का भाग खाली पडा है। उसी भाग मे राजेन्द्र लाहिडी रहते थे।"

विचित्र किंतु दु खद बात यह है कि जगदीश जगेश ने शहीद लाहिडी की स्मृति मे उस भवन मे एक 'शहीद म्यूजियम' बनाने के प्रयत्न किए, कितु टालू प्रशासन और बहरे शासन ने कुछ भी ध्यान नही दिया। उन्होन 16 मार्च, 1984 को जिलाधिकारी को इस सबंध में पत्र लिखा था। वाराणसी के ही भानुशंकर मेहता ने भी 28 जुलाई 1984 को दूसरा पत्र लिखा था, कितु आज तक कोई कार्रवाई नही की गई।

वाराणसी, जहाँ ढेरो नेता रहते है, सभी पार्टियो के। वे इस ओर क्यो ध्यान नही देते? आजादी की स्वर्ण जयंती के अवसर पर उस मकान को खाली कराकर वहाँ राजेन्द्र लाहिडी की स्मृति मे एक स्मारक क्यो नहीं बनाते?

नेताओ को अपनी कोठियॉ, अपनी गाडियॉ, अपने फार्म, अपनी जायदाद, अपनी अकूत सपत्ति से मतलब है, बस। लाहिडी के लिए वे कुछ न करेगे। करेगे तो अपने लाड़ले के लिए करेगे। हॉ, जहॉ कही उत्सव मनाया जाएगा, वहॉ गुलाब के हार पहन कर बैठ जाएँगे और लिखा हुआ भाषण उगल देगे। स्वर्ग मे बैठी हुई लाहिडी की आत्मा उनकी ओर धिक्कार-भरी दृष्टि से देखती होगी।

यह स्वतत्रता की स्वर्ण जयती का वर्ष-है। क्या प्रदेश सरकार मे साहस है कि वह उस मकान को खाली कराए और स्मारक बनवाए? ध्यातव्य है काकोरी केस की रिपोर्ट मे राजेन्द्रनाथ लाहिडी का पता मकान न डी-17/142 ही दिया है। अब इससे बडे प्रमाण की आवश्यकता नही है।

बुद्धिजीवियो, विद्यार्थियों और किसान-मजदूरो सभी को मिलकर सरकार पर दबाव बनाना चाहिए कि लाहिडी का स्मारक इसी वर्ष बने। वाराणसी के लोगो का नैतिक दायित्व है कि वे गंगा मैया का जयकारा बोलकर बाबा विश्वनाथ का हुकारा लगाकर शासन को मजबूर कर दे कि लाहिडी की शहादत को इस स्वर्ण जयंती के अवसर पर एक स्मारक दे दे।

जिसने अपना खून देकर वतन को आजादी दिलाई, उस शहीद के लिए एक स्मारक यदि हम इस वर्ष न दे पाए तो दुनिया हमे धिक्कारेगी, लाहिडी की आत्मा कोसेगी और कहेगी—'जो हॅस-हॅसकर फॉसी पर चढ़े और जो वर्षो जेल मे लडे उनके प्रति क्या तुम्हारा यही कर्तव्य है?'

मै दशाश्वमेध घाट की ओर चल देता हूॅ। सडक पर अनियंत्रित ट्रैफिक है। सडक के दोनो फुटपाथो पर दुकानदारों ने स्थायी डेरा जमा लिया है। आधी सडक पर ठेले वाले, मोमजामा वाले, कपड़े वाले आदि फैले है। ट्रैफिक पुलिस का सिपाही कही पास के होटल मे विराजमान होगा। सड़क पर जमाव बडा लबा है, पर किया क्या जाए? अभी मत्री जी को आना हो तो उन्हें पुलिस बा-अदब, हटो-बचो करके निकाल देगी। मत्री जी के ठेंगे से, जनता कष्ट झेले झेला करे। चुनाव के समय देखा जाएगा, फिर बन पाएँगे मत्री तो बन पाएँगे, नही तो दस पुश्तो के लिए चकाचक इतजाम हो गया है।

भीडभाड पार करता हुआ मै बाबा विश्वनाथ के दर्शन करता हूॅ।

सावन का महीना है, बेलपत्र चढ़ाता हूँ। पीछे की ओर कुछ स्त्रियाँ भेड जैसी सटी-सटी बैठी गीत गा रही हैं

शिव भोला चले कैलास बुँदियाँ पड़ने लगी।
बम भोला चले कैलास बुँदियाँ पडने लगी॥

मन करता है कि पूरा गीत सुनूँ, किंतु समयाभाव बाधक बनकर आडे आ रहा है। मैं दशाश्वमेध घाट पर जाता हूँ। गगा मे बरसाती पानी तेजी से बह रहा है। कई नावों पर लोग बैठ सैर-सपाटा कर रहे है। किनारे पर पण्डो की अपनी-अपनी छतरियाँ लगी है। दो-तीन पण्डे मुझे भी आकर घेर लेते है, किंतु उन्हे निराश ही लौटना पड़ता है। एक बुजुर्ग सज्जन, लगभग सत्तर-पचहत्तर के होंगे, केवल एक धोती पहने, गले मे बनारसी अँगोछा डाले, माथे पर मोटा-मोटा चदन थोपे, एक हाथ मे बेत लिए और दूसरे से अपना नगाडे के आकार वाला पेट सहलाते हुए धीमी गति से ऊपर की ओर आ रहे है।

मैं उन थुलथुल शरीर वाले महानुभाव से राजेन्द्र लाहिडी के घर के विषय मे पूछता हूँ। वे कडी नजरो से मेरी ओर ताकते हुए कहते है—"यहाँ सँभलकर लाहिडी का नाम लेना। जो लोग उनके घर मे दुकाने खोले है वे खतरा पैदा कर सकते है।"

"मुझे वह जगह बता तो दीजिए।"

"क्या पिटवाना चाहते हो?" इतना कहकर वे आँखे तरेरते हुए चले जाते हैं। मै घाट से पीछे की ओर चल देता हूँ। एक दुबले-पतले बंगाली बाबू अपनी चौडी कन्नी वाली धोती और लम्बा कुर्ता पहने, लबे-लबे करिया बालो पर हाथ फिराते हुए चप्पल फटकारते आ रहे है। मै उनसे भी अपना प्रश्न दाग देता हूँ। पास के चबूतरे पर मैं उनके साथ बैठ जाता हूँ। वे कहते है—"राजेन्द्र लाहिडी बाबू यही अपने बड़े भाई के साथ रहता था। उसका नाम-निशान इस शहर से उड गया है। राजेन्द्र ही क्या जतीन्द्रनाथ दास, शचीन्द्रनाथ सान्याल, जोगेश चटर्जी, शचीन्द्र बख्शी सब को हम भूल गिया। अपना देश ऐसो को भूल गिया, लेकिन जिन्होने आज़ादी के लिए कुछ भी नहीं किया उनका जयजयकार हो रहा है। लाहिरी बाबू का अपील प्रिवी कौसिल मे किया गया था, लेकिन प्रिवी कौसिल ने कुछ नही किया। फाँसी देने की सजा बरकरार रही।"

बगाली बाबू आगे बताते हैं—"लाहिडी के सब साथियो को, यानी बिस्मिल, रोशन, अशफ़ाक को तो 19 दिसबर 1927 को ही निश्चित तिथि पर फॉसी लगाई गई, किंतु लाहिरी को दो दिन पहले यानी 17 दिसबर को चुपके से फॉसी पर चढा दिया गया। वो अग्रेजो के लिए बहुत खतरनाक था। अग्रेज डरता था कि कही इसका साथी आज़ाद इसे जेल से निकाल न ले जाए। ऐसे वीर शहीद के नाम पर बनारस मे कुछ नही किया गया। शरकार करता या न करता, जानता तो कर सकता था, लेकिन सब ढील-ढाल बोलो है।"

बगाली बाबू की बाते खत्म होती है और मै ऊँचे से उतरता हुआ मकान न. डी-17/142 के सामने आ जाता हूँ। कपड़े की बड़ी दुकान, बगल मे और दो दुकानें। ऊपर का हिस्सा बिल्कुल सूना। वही लाहिडी अपने भाई के साथ रहते थे।

मै दुकान मालिक के पास पहुँचता हूँ। ग्राहक समझकर पहले वे एक गिलास पानी मँगाते हैं। मै धीरे-धीरे पानी पी रहा हूँ। वे पूछते है—"क्या चाहिए? टेरीकाट या काटन?"

"मुझे न टेरीकाट चाहिए न काटन!"

"तो धोती जोडा और कुर्ते का कपडा मँगाऊँ?"

"न, ना!"

"फिर क्या चाहिए?"

"मुझे आप ये बताएँ कि क्रातिवीर शहीद राजेन्द्र लाहिडी यही रहते थे ना?"

"ना भाई, यहाँ कभी कोई लाहिडी-वाहिडी नही रहा। दुकानदारी का समय है, आप जाएँ यहाँ से।"

सेठ की अकड-भरी असभ्य आवाज बता रही है कि यह भाषा वह नही बोल रहा है, उसकी दौलत बोल रही है। मै चुपचाप खिसियाया हुआ, अपना-सा मुँह लेकर वहाँ से रफूचक्कर होता हूँ। डर है कही सेठ अपने आदमियो से कुटम्मस न करवा दे, चोरी का इल्जाम न लगवा दे।

थोडी दूर पर एक अत्यंत बूढे दुकानदार से जब मै पूछता हूँ तो वह कहता है—"बाबू जी, कही मेरा नाम-वाम न लिख देना, दुकान का नाम न दे देना। नही तो जीना मुश्किल हो जाएगा। जबरदस्त लोग है। लेकिन ये

बताता हूँ कि लाहिडी जी इसी मकान में ऊपर रहते थे, ये बात मेरे बाप बताया करते थे।"

धन्य है हम, धन्य है हमारा देश और धन्य हैं गद्दी पर आसीन होने वाले। नहीं-नहीं, हम सब धिक्कार के पात्र है। जब लाहिडी ने फॉसी पर जाने के पहले स्नान किया, गीता पढी, व्यायाम किया। यह देखकर अग्रेज मजिस्ट्रेट ने कहा—"आपने आगे वाली घटना के लिए अपने आप को तैयार करने के लिए स्नान करके अपने धर्मग्रथ का पाठ किया, वह तो ठीक है किंतु व्यायाम क्यो किया ?"

अकड के साथ राजेन्द्र ने कहा—"मै हिंदू हूँ। मेरा दृढ विश्वास है कि मै दूसरा जन्म प्राप्त करूँगा। व्यायाम इसलिए किया कि दूसरे जन्म मे भी वलिष्ठ बनूं और देश को स्वतत्र कराऊं।"

ऐसे निर्भीक क्रातिकारी के लिए हम स्वर्ण जयंती पर क्या करेगे? क्या लाहिडी के उस घर मे स्मारक स्थापित कर सकेगे। यह प्रश्न पहले जनता से है, फिर शासन-प्रशासन से है।

लाहिडी का अतिम पत्र, जो उन्होने दिनाक 14 दिसबर 1927 को गोण्डा जेल से अपने एक साथी को लिखा था, उसे यहाँ देकर मै असंवेदनशील देश को जगाना जरूर चाहता हूँ।

पत्र इस प्रकार है .

"कल मैने सुना कि प्रिवी कौंसिल ने मेरी अपील अस्वीकार कर दी। आप लोगों ने हम लोगो की प्राणरक्षा के लिए बहुत कुछ किया, कुछ उठा नही रखा, किंतु मालूम होता है कि देश की बलिवेदी को हमारे रक्त की आवश्यकता है। मृत्यु क्या है? जीवन की दूसरी दिशा के अतिरिक्त और कुछ नही है। इसलिए मनुष्य मृत्यु से भय और दुःख क्यो माने? यह तो नितात स्वाभाविक अवस्था है। उतनी ही स्वाभाविक जितना प्रातःकालीन सूर्य का उदय होना। यदि यह सच है कि इतिहास पल्टा खाता है तो मै समझता हूँ कि हमारी मृत्यु व्यर्थ न जाएगी।

आपका
राजेन्द्र"

स्वतंत्रता की बलिवेदी पर आत्माहुति देने वाले शहीदो को इस स्वर्ण

जयंती के अवसर पर हम सभी देशवासी उन्हे कोटि-कोटि नमन करें, उनकी याद को सदैव ताजा रखे। कवि अटल जी के शब्दों मे ·

जो बरसों तक लड़े जेल मे, उनकी याद करे।
जो फॉसी पर चढे खेल मे, उनकी याद करे।
याद करे काला पानी को, अग्रेजो की मनमानी को।
अन्यायी से लडे, दया की मत फरियाद करे।
जय लाहिडी ! जय शहीद ! ! जय स्वतत्रता ! ! !

परिशिष्ट-5

- 'चाँद' के फाँसी अंक के शब्द
- 'काकोरी के दिल जले' पुस्तक का निबंध

श्री राजेंद्रनाथ लहरी

इस गुलामी मे तो हमको न खुशी आई नज़र,
खुश रहो अहले-वतन हम तो सफर करते है।

बनारस प्रारंभ से ही संयुक्त प्रात मे षड्यंत्रों का केद्र रहा है। हमारे नायक भी यही के रहनेवाले थे। बनारस हिदू विश्वविद्यालय में बी० एस-सी० क्लास में पढते हुए आप विप्लव का कार्य करते थे। कॉलेज मे केवल नाममात्र के लिए ही पढते थे। उनका अधिक समय दल के काम मे इधर-उधर घूमने मे ही व्यतीत होता था। उनका शरीर बहुत सुडौल था और दौडने का भी अच्छा अभ्यास था।

आप दल की ओर से बम बनाने की विद्या सीखने के लिए बगाल भेजे गए थे और वही दक्षिणेश्वर के एक मकान मे गिरफ्तार किए गए। गिरफ्तारी के समय मकान से बम बनाने का कुछ सामान भी पुलिस के हाथ लगा। वही पर अभियोग चला और कुछ अन्य साथियो के साथ आपको सजा हो गई।

इधर काकोरी के मामले मे सरकारी गवाह बनारसीदास ने आपको सूबे का संगठनकर्ता (Provincial Organiser) बतलाया, अतः आपको बगाल से लखनऊ लाया गया। साथ के आदमियो के दूसरी ओर मिल जाने से सारा भेद खुल गया और आपको अदालत से फॉसी की सज़ा हुई।

अदालत से निकलने पर बाहर खड़ी हुई जनता को देखकर आपने अपने और साथियो के साथ मिलकर गाया :

दरो-दीवार पे हसरत से नज़र करते हैं।
खुश रहो अहले-वतन हम तो सफ़र करते है॥

इसके बाद वही अखबारों वाली पुरानी कथा है। अपील हुई, डेपुटेशन गया, दौड-धूप की गई, किंतु केवल मन को सतोष देने के लिए। सरकार को

वे मुट्ठी-भर हड्डियाँ इतनी भयकर जान पडी कि उसने किसी भी बात पर ध्यान न देकर 10 दिसबर, 1927 को गोडा-जेल में उन्हे रस्सी से लटका ही तो दिया।

अपील अस्वीकार हो जाने पर आपने अपनी बडी बहन को जो पत्र लिखा था, उसका सारांश यह था—"बहन, आपने बचपन से मुझे पुत्र की भाँति पाला और बड़ा किया। आपकी गोद मे खेलकर मुझे माता का अभाव तनिक भी व्याकुल न कर सका। यह आपकी ही बातों का अभाव था, जिसने आगे चलकर मुझे देश के लिए पागल बना दिया। मुझे हर्ष है कि आपकी शिक्षा तथा प्यार व्यर्थ नही गया। मुझे यह भी आशा है कि आप मेरे मरने पर दु:खित न होकर हर्ष प्रकट करेंगी।"

फाँसी के दिन आपने प्रात:काल उठकर स्नान किया और फिर गीता का पाठ करने लगे। निश्चित समय पर कोठरी खोली गई और आप प्रसन्नतापूर्वक स्वयं ही फाँसी-घर की ओर चल दिए। रस्सी को चूमकर अपने हाथ से ही उसे गले मे पहन लिया। 'वदेमातरम्' के उच्च निनाद के साथ ही तख्ता खिंचा और वह रत्न दस हाथ गहरे गड्ढे मे झूलने लगा।

—**संतोष**

श्री राजेंद्रनाथ लाहिड़ी

श्री राजेद्रनाथ लाहिडी काकोरी षड्यंत्र के प्रमुख अभियुक्तो मे से एक थे। बनारस डिवीजन के इंचार्ज और क्रातिकारी सघ की प्रांतीय कौसिल के सदस्य थे। स्वाभिमानी, साहसी, विजयीश्री राजेद्र मे यह प्रतिभा थी कि वे सबके होकर रह सकते थे। सब उन्हे अपना अनुभव करते थे। सबसे उन्होने काम ले लिया और बडे ही सुदर ढंग से काम लिया। उनके चेहरे पर हरदम हॅसी खेला करती थी। औरो के चेहरे पर हॅसी होती है, पर श्री राजेद्र के हॅसने पर मालूम होता था कि हॅसी उन्मुक्त हो, बधन काट, बाधाविहीन हो सारे शरीर से फूटी पड़ रही है।

घटना के समय वे हिंदू विश्वविद्यालय के एम० ए० के विद्यार्थी थे। अतर्राष्ट्रीय राजनीति और अर्थशास्त्र से उन्हें विशेष दिलचस्पी थी। इतिहास मे भी उनका प्रवेश था। वे बड़े अध्ययनशील थे। साहित्य से उन्हे स्वाभाविक प्रेम था। उनके लेख अक्सर बगला पत्र 'बंगवाणी', 'शख' आदि मे प्रकाशित हुआ करते थे। बनारस के क्रातिकारियो के पत्र 'अग्रदूत' (हस्तलिखित) के वे एक प्रकार से प्रवर्तक थे।

हरदम इनकी कोशिश रहती थी कि दल के सदस्य का पूर्ण विकास हो, यह हर सदस्य को लिखने के लिए उत्साहित किया करते थे और कुछ-न-कुछ उससे अवश्य ही लिखवा लेते थे। गिरफ्तारी के समय वे हिंदू विश्वविद्यालय की 'बगला साहित्य परिषद' के मत्री थे। इनके मिलनसार और प्रसन्नचित्त स्वभाव को देखकर सहसा कोई यह विश्वास ही नही कर सकता था कि श्री राजेद्र इतने भयानक पथ के एक अग्रगामी पथिक होंगे।

पढने-लिखने की भॉति ही वे खेल-कूद, दौड-धूप, कूदना-तैरना, हॉकी-फुटबाल आदि में भी बडे पटु, चुस्त और चालाक थे। सीधी-सादी

वेशभूषा के श्री राजेंद्र का खेलना, हँसना, लतीफे सुनाकर दूसरो को हँसाना स्वाभाविक गुण था। लापरवाही और मस्ती का तो कहना ही क्या? भयकर-से-भयकर आपत्ति के सर पर मँडराते रहने पर भी हर समय चेहरे पर मद मुस्कान खेलती रहती। पर इनकी यह बेफिक्री और मस्ती कर्तव्यपालन मे कभी कोई त्रुटि न ला सकी। अपनी जिम्मेदारी को इन्होंने बडी ही खूबी से पूरा किया। ये समाज, धर्म, राजनीति, जीवन के सब अगो मे क्रांति के उपासक थे।

मेरठ की प्रांतीय काउसिल मे कुछ खास बातें निश्चित हुई थी, उन्ही के लिए श्री राजेंद्रनाथ बगाल चले गए। पुलिस को इसका पता न था। काकोरी के मामले मे जब 26 सितंबर को वारंट लेकर पुलिस उन्हे घर पर गिरफ्तार करने पहुँची तो वे वहाँ न मिले। कुछ दिनो बाद वे कलकत्ते के पास दक्षिणेश्वर मे एक मकान मे पकड़े गए। वहाँ कुछ अन्य सामान के साथ एक बम भी पाया गया। श्री राजेंद्र को इस मामले मे 10 साल की सजा दी गई।

दक्षिणेश्वर बम केस मे कुछ अन्य लोगो को भी सजाएँ हुई थी। कलकत्ते की स्पेशल ब्राच सी०आई०डी० के एक उच्च पदाधिकारी रायबहादुर भूपेंद्रनाथ सुपरिन्टेडेट अपने आपको बहुत-कुछ समझते थे, वे बराबर जेल मे इन अभियुक्तो के पास जाकर उन्हें परेशान किया करते थे। उनके मना करने पर भी इन महानुभाव ने उनके पास जाना बद न किया। मंशा थी अन्य क्रातिकारियो की नजरों मे अपना और इन बदियो का अधिक मेल-जोल साबित करके इनके प्रति द्वेष-भावना उत्पन्न करना।

इनको दल का विश्वासघाती प्रमाणित करना, और इसके बाद जब सदेह मे फँसकर दल के लोग इनका अपमान करे तो इन्हें अपनी ओर करने के लिए प्रलोभन आदि द्वारा कोशिश करना। वह मनुष्य जिसके सच्चे रहने पर भी साथी उसे अविश्वास की नजर से देखते हो, एक ही काम कर सकता है, और वह है आत्महत्या। कारण, उसका जीवन उसे भार हो जाता है। इन वीरों की भी यही दशा हुई।

जीवन से ऊबकर इन्होने प्राण देने चाहे। पर एक दूसरे ढग से। एक दिन जब रायबहादुर भूपेंद्रनाथ इनके दर्जे मे आए तो इसके बाद फिर उनका शव ही वहाँ से निकला। इस मामले में हमारे दो बधु श्री प्रमोद रंजन चौधरी और श्री अनत हरी मित्र फाँसी पर चढा दिए गए। पुलिस की बुद्धिमानी ने ये

बलिदान ले लिए।

दक्षिणेश्वर बम केस से लाकर श्री राजेद्र लाहिड़ी पर काकोरी का मुकदमा चला। इसी मुकदमे के दौरान एक दिन एक अकडवेग पुलिस सूबेदार से कुछ खटपट हो गई। स्वाभिमानी श्री राजेद्र ने बडे ही शान के साथ इसका प्रतिवाद किया और एक करारे चॉटे ने सूबेदार साहब के होश ठिकाने ला दिए। पहले तो पुलिस ने इस मामले का भी मुकदमा चलाना चाहा, फिर कुछ समझ मे आया और मुकदमा उठा लिया गया। काकोरी केस मे आपको दो आजीवन कालेपानी तथा एक फॉसी की सजा मिली। फैसले के बाद पहले वे बाराबकी तथा बाद मे गोडा जेल भेज दिए गए। आपने 6 अक्तूबर 1927 को गोडा जेल से यह पत्र भेजा था :

पूरे 6 मास तक बाराबकी और गोंडा जेल की कालकोठरियों मे बद रहने के बाद कल मुझे सूचना मिली है कि, एक सप्ताह के भीतर ही फॉसी हो जाएगी। अब मै यह अपना कर्तव्य समझता हूँ कि उन सब मित्रो के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करूँ, जिन्होने हम लोगो के लिए हर प्रकार की कोशिशे की। आप लोग मेरा अतिम नमस्कार स्वीकार कीजिए। हमारे लिए मृत्यु शरीर का परिवर्तन मात्र है। पुराने कपडो को त्याग नए कपडे पहन लेना है। मृत्यु आ रही है। मै प्रसन्नचित्त और प्रसन्न वदन से उसका आलिंगन करूँगा। जेल नियमो के कारण अधिक नही लिख सकता। आपको नमस्कार ! देश हितैषियो को नमस्कार ! ! सबको नमस्कार ! ! ! वदेमातरम्।

आपका—

राजेद्रनाथ लाहिडी

प्रिवी कौसिल मे अपील होने के कारण यह तारीख टल गई। इसके बाद प्रिवी कौसिल ने कुछ न सुना और फॉसी देना ही निश्चय रहा। हमारे अन्य सहयोगी तो 19 दिसबर 1927 को फॉसी चढ़ाए गए, पर श्री राजेद्र 17 दिसबर को ही चढा दिए गए। क्यों? कौन उत्तर दे इसका ! ! फॉसी से पहले 14 दिसबर को उन्होने अपने एक मित्र के नाम यह पत्र लिखा था—

कल मैने सुना प्रिवी कौसिल ने मेरी अपील खारिज कर दी, आपने हम लोगों की प्राण-रक्षा के लिए बहुत कुछ किया। पर यह मालूम पड़ता है, कि देश की बलिवेदी पर हमारे प्राणो के चढाने की ही आवश्यकता है। मृत्यु

क्या है ? जीवन-सिक्के के दूसरे पहलू के सिवा कुछ नही ! फिर मनुष्य मृत्यु से भय और दुःख क्यों करे ? यह तो नितात स्वाभाविक अवस्था है, उतनी ही स्वाभाविक जितना कि प्रातःकालीन सूर्य का उदय होना। यदि यह सच है कि इतिहास पलटा खाया करता है, तो मैं समझता हूँ कि हमारी मौत व्यर्थ न जाएगी। सबको मेरा नमस्कार ! अतिम नमस्कार ! !

आपका—

राजेंद्र

पत्रो के शब्द श्री राजेद्रनाथ की वीरता, गंभीरता, विद्वत्ता, निर्भीकता और देशभक्ति की कहानी अपने आप कह रहे है। 17 दिसबर 1927 को वे गोडा जेल मे फॉसी पर चढ़ा दिए गए। फॉसी का नाम सुनकर बड़े-बडे दिलेरो के हौसले पस्त हो जाते है। चेहरा फक पड जाता है, पर फॉसी के बाद भी श्री राजेद्रनाथ के चेहरे पर कोई निशान न थी। सवेरे गीता का पाठ करके वे फॉसी पर गए थे।

गोडा-निवासियो, विशेषकर आर्यसमाजी बधुओ ने बडी सजधज के साथ उनकी अर्थी का जुलूस निकाला, वेदमत्र और भारतमाता की जय के साथ उन्हे श्मशान घाट ले गए और सम्मान के साथ उनका दाह-सस्कार किया। उसी समय यह भी निश्चय हुआ कि श्री राजेंद्रनाथ का वहॉ एक स्मारक बनाया जाए। जेल से मुक्त होने के बाद बधुवर श्री मन्मथनाथ गुप्त ने अभी शायद जुलाई सन् 1938 मे इस स्मारक का शिलान्यास किया है। विश्वास है, गोडा-निवासी अपनी पूरी शक्ति से इस स्मारक को सफलतापूर्वक शीघ्र ही बनाकर तैयार कर देगे।

• • •